

देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयताम्॥ ऋ० १/८६/२



Impact Factor
5.642



ISSN : 2395-7115

May 2022

Issue 15, Vol. 5

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)



Human Rights Protection in Contemporary
Circumstances : Present Scenario



प्रधान सम्पादक :

डॉ. सीमा जैन

सम्पादक :

डॉ. नरेश सिहाग

एडवोकेट

सह सम्पादक :

डॉ. अशोक कुमार व्यास

डॉ. कप्तान चंद

Publisher :

Gagan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

स्व. चौ. गुगनराम सिहाग व उनकी छोटी बहन स्व. श्रीमती गीना देवी के शुभाशीर्वाद से प्रकाशित

JOURNAL OF HUMANITIES, COMMERECE, SCIENCE, MANAGEMENT & LAW

बोहल शोध मञ्जूषा Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Vol. 15

ISSUE-5

(मई 2022)

ISSN : 2395-7115

प्रेरणा :

चौ. एम. सिहाग

सम्पादक :

डॉ. नरेश सिहाग 'बोहल', एडवोकेट
विभागाध्यक्ष हिन्दी एवं शोध निर्देशक
टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर-335001

विशेषांक सम्पादिका :

डॉ. सीमा जैन
सहायक आचार्या, विधि विभाग,
महाराजा गंगासिंह विश्वविद्यालय
बीकानेर, राजस्थान।

-: Editorial Board :-

Rahul Yadav

Assistant Professor of Law,
Maharaja Ganga Singh University,
Bikaner

Dr. Suman Joshi

Principal,
Rajasthan Mahila TT College,
Bikaner.

Dr. Mudita Popli

Principal,
Maa Karni B.Ed. College,
Nal, Bikaner.

Dr. Bharti Sankhala

Assistant Professor,
Jain PG College, Bikaner.

Dr. Rakesh Kiradoo

Assistant Professor,
Sister Nivedita Girls College, Bikaner



प्रकाशक :

गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वेलफेयर सोसायटी (रजि.)

202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी-127021 (हरियाणा)

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL REFEREED/REVIEWED AND INDEXED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

ISSN 2395-7115

सम्पादकीय सम्पर्क :

डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट

202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड,

भिवानी-127021 (हरियाणा)

Email : nksihag202@gmail.com

मो. 09466532152

Published by :

Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

202, Old Housing Board,

Bhiwani-127021 (Haryana) INDIA

Email : grsbohal@gmail.com

Facebook.com/bohalshodhmanjusha

Website : www.bohalsm.blogspot.com

WhatsApp : 9466532152

All Right Reserved by Publisher & Editor

Price

Individual/Institutional : 1100/-

- Disclaimer :*
1. Printing, Editing, Selling and distribution of this Journal is absolutely honorary and non-commercial.
 2. All the Cheque/Bank Draft/IPO should be sent in the name of Gugan Ram Educational & Social Welfare Society payable at Bhiwani.
 3. Articles in this journal do not reflect the Views or Policies of the Editor's or the Publisher's. Respective authors are responsible for the originally of their views/opinions expressed in their articles.
 4. All dispute will be Subject to Bhiwani, Hry. Jurisdiction only.

Printed by : Manbhawan Printers, Old Bus Stand Road, Naya Bazar, Bhiwani (Hry.)

बोहल शोध मंजूषा परिवार*

मानद संरक्षक

प्रो. राधेमोहन राय

पूर्व उप प्राचार्य,
राजकीय स्नातकोत्तर महा.,
अलवर, राजस्थान।

डॉ. राजेन्द्र गोदारा

परीक्षा नियंत्रक,
टाटिया विश्वविद्यालय,
श्रीगंगानगर, राजस्थान।

डॉ. विनोद तनेजा

पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
गुरुनानक वि.वि. अमृतसर
पंजाब।

सम्पादक मण्डल

सह सम्पादिका :

डॉ. रेखा सोनी

उप प्राचार्या, शिक्षा विभाग
टाटिया वि.वि. श्रीगंगानगर।

सह सम्पादिका :

डॉ. सुशीला आर्या

हिन्दी विभाग, चौ. बंसीलाल
विश्वविद्यालय, भिवानी।

प्रबंध सम्पादक :

समुद्र सिंह

भिवानी, हरियाणा।

विधि विशेषज्ञ

डॉ. रामफल दलाल, एडवोकेट

जिला न्यायालय
भिवानी, हरियाणा।

अजीत सिहाग, एडवोकेट

पंजाब एवं हरियाणा हाईकोर्ट,
चंडीगढ़।

चरणवीर सिंह, एडवोकेट

जिला न्यायालय
पटियाला, पंजाब।

विषय विशेषज्ञ/परामर्शदात्री/शोधपत्र निरीक्षण समिति

माई मनीषा महंत

किन्नर अधिकार ट्रस्ट
भूना, जिला कैथल, हरियाणा

डॉ. विश्वबंधु शर्मा

पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
बाबा मस्तनाथ वि.वि. रोहतक

डॉ. संजय एल. मादार

विभागाध्यक्ष, पी.जी. केन्द्र
द.भा.हिन्दी प्रचार सभा हैदराबाद।

डॉ. गीता दहिया, प्राचार्या,

नैशनल टीटी कॉलेज फॉर गर्ल्स
अलवर, राजस्थान

डॉ. विनोद कुमार

हिन्दी विभाग, लवली प्रोफेशनल
यूनिवर्सिटी, पंजाब

डॉ. कुसुम कुंज मालाकार

हिन्दी विभाग, कॉटन विश्वविद्यालय
गुवाहाटी, असम

डॉ. कैलाशचन्द्र शर्मा 'शंकी'

पूर्व जि.शि.अधिकारी, च. दादरी

श्री सहदेव समर्पित

सम्पादक, शान्तिधर्मी, जीन्द

डॉ. अंजली उपाध्याय

उत्तर प्रदेश

डॉ. लता एस. पाटिल

राजीव गांधी बीएड कालेज
धारवाड़, कर्नाटक

प्रो. अमनप्रीत कौर

गुरु तेग बहादुर खालसा कॉलेज
फॉर वूमैन, दसूहा, पंजाब

डॉ. राजपाल

राजकीय पी.जी. महाविद्यालय
हिसार, हरियाणा

प्रो. कमलेश चौधरी

राजकीय रणबीर महाविद्यालय
संगरूर, पंजाब

डॉ. परमजीत कौर

बरेली कॉलेज बरेली,
उत्तर प्रदेश।

डॉ. बी. संतोषी कुमारी

पी.जी.विभाग, दक्षिण भारत हिन्दी
प्रचार सभा, मद्रास

डॉ. पार्वती गोंसाई

सरदार पटेल वि.वि.,
गुजरात।

डॉ. मनमीत कौर

राधा गोविन्द वि.वि.,
रामगढ़, झारखण्ड।

डॉ. शबाना हबीब

त्रिवन्तपुरम, केरल

डॉ. मानसिंह दहिया

हरियाणा

प्रो. नरेन्द्र सोनी

डी.एन. कॉलेज, हिसार।

डॉ. इत्याक अली

प्राचार्य, लाल बहादुर शास्त्री
शिक्षा महाविद्यालय, बेंगलूरु

डॉ. किरण गिल

दीनदयाल टी.टी. महाविद्यालय
बारी, जिला सीकर, राज.

डॉ. राजकुमारी शर्मा

नेपाल

श्री राकेश ग्रेवाल

सन जॉस,
कैलिफोर्निया, यू.एस.ए.

श्री राकेश शंकर भारती

यूक्रेन।

डॉ. विनोद कुमार शर्मा

टांटिया विश्वविद्यालय,
श्रीगंगानगर, राजस्थान।

डॉ. शिवकरण निमल

राजस्थान

डॉ. नीलम आर्या

उत्तर प्रदेश

प्रो. रोहतास

डी.एन. कॉलेज, हिसार।

प्रो. रेखा रानी

गवर्नमेंट कॉलेज
संगरूर, पंजाब

डॉ. सविता घुड़केवार

पीजी विभाग, दक्षिण भारत
हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास

डॉ. श्रीविद्या एन.टी.

श्री शंकराचार्य संस्कृत वि.वि.
केरल।

डॉ. पंडित बन्ने

भारत महाविद्यालय,
सोलापुर (महाराष्ट्र)

डॉ. उमा सैनी

आई.ए.एस.ई. विश्वविद्यालय
सरदारशहर, राजस्थान

डॉ. सुरजीत सिंह कस्वां

टांटिया विश्वविद्यालय,
श्रीगंगानगर, राजस्थान।

डॉ. राधाकृष्णन गणेशन

वाराणसी

डॉ. रवि सुण्डयाल

जम्मू कश्मीर

प्रो. सत्यबीर कालोहिया

पूर्व प्राचार्य

डॉ. के.के. मल्हौत्रा

पूर्व विभागाध्यक्ष
गवर्नमेंट कॉलेज, गुरदासपुर

*सम्पूर्ण बोहल शोध मञ्जूषा परिवार/सम्पादक मण्डल अवैतनिक है।

शोध-पत्र प्रकाशन के लिए निर्देश मंजूषा

गुगनराम सोसायटी (पंजीकृत) द्वारा शोधार्थियों व अध्येताओं के शोध/अनुसंधान की गतिविधियों को प्रोत्साहित करने हेतु बोहल शोध मंजूषा ISSN 2395-7115 नामक बहुभाषिक अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका का प्रकाशन किया जा रहा है। कला, संस्कृति, विज्ञान, वाणिज्य, मानविकी, प्रबंध, प्रौद्योगिकी, विधि, भूगोल, शिक्षा, पत्रकारिता पर केन्द्रीत इस शोध पत्रिका को विषय विशेषज्ञों तथा मनीषी विद्वानों की सक्रिय सहभागिता प्राप्त है। पत्रिका का वार्षिक शुल्क 1100 रु. है।

आप अपना शोध पत्र कम्प्यूटर से मुद्रित फोन्ट साईज 14, कृतिदेव-10, कृतिदेव-21 में व अंग्रेजी के Arial, Times New Roman में पेज मेकर या माइक्रोसोफ्ट वर्ल्ड में हमारी Email ID : grsbohal@gmail.com पर भेजें। शोध पत्र प्रेषित करने से पूर्व दिये गये सन्दर्भ, मात्रा आदि की पूर्णतया जाँच कर लें।

नोट :- उर्दू, पंजाबी आदि भाषा के शोध पत्र पेपर साईज 7x9.5 पर टाईप कराकर JPG या PDF फाईल हमारी ईमेल आई.डी. पर भेज सकते हैं।

हमारी पत्रिका में शोध पत्र लेखक के फोटो सहित प्रकाशित किये जाते हैं। इसलिए आप अपने शोध पत्र के साथ पासपोर्ट साईज फोटोग्राफ, सम्पर्क सूत्र; टेलीफोन, मोबाईल नं., ई-मेल तथा पिनकोड सहित पत्र व्यवहार का पूरा पता (हिन्दी व अंग्रेजी) कम्प्यूटर द्वारा टाईप करवाकर भेजें।

शोध पत्र 2000-2500 शब्दों (4-6 पेज) से अधिक नहीं होनी चाहिए, यदि शब्द सीमा अधिक होती है तो सम्पादक को अधिकार होगा यथा स्थान संक्षिप्तीकरण कर दें। अस्वीकृत शोध पत्र की वापसी संभव नहीं है।

पत्रिका में प्रकाशित श्रेष्ठ शोध पत्र को हमारी सोसायटी/पत्रिका की ओर से बहुउपयोगी श्रीमती गिना देवी शोधश्री सम्मान प्रदान किया जायेगा।

शोध पत्र में व्यक्त विचार लेखकों के स्वयं के विचार हैं। उनसे सम्पादक, प्रकाशक की सहमति आवश्यक नहीं है। शोध पत्र में प्रयुक्त किए गए तथ्यों के प्रति संबंधित लेखक उत्तरदायी होगा। पत्रिका में शोध आलेख प्रकाशन के लिए भेजने से पहले सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त करना लेखक का दायित्व है। प्रत्येक विवाद का न्यायक्षेत्र भिवानी (हरियाणा) होगा।

सम्पादकीय पद अव्यावसायिक और अवैतनिक हैं। पत्रिका में केवल शोध पत्र ही प्रकाशनार्थ भेजें। शोध पत्र का प्रकाशन योजना एवं व्यवस्था के अनुसार यथा समय व प्रकाशित समस्त शोध पत्रों का सर्वाधिकार समिति/सम्पादक के पास सुरक्षित होगा।

नोट :

सहयोग/सदस्यता राशि 1100/- रु. का ड्राफ्ट/चैक/आई.पी.ओ. 'गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वेलफेयर सोसायटी' के नाम भेजें तथा ऑनलाईन बैंक में सहयोग जमा राशि की रसीद की फोटोप्रति अपने आलेख के साथ हमें मेल कर सूचित करने का कष्ट करें ताकि समय पर रसीद भेजी जा सके। ऑनलाईन सहयोग राशि के साथ 50/- रु. अतिरिक्त अवश्य जमा करवायें। प्रकाशन सहयोग शुल्क वापिस देय नहीं।

बैंक का नाम	:	पंजाब नैशनल बैंक, हालु बाजार, भिवानी (हरियाणा)
खाता धारक का नाम	:	गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वेलफेयर सोसायटी
बैंक खाता संख्या	:	1182000109078119
IFSC Code	:	PUNB0118200
MICR CODE	:	127024003

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ
1.	सम्पादकीय	डॉ. सीमा जैन	9-9
2.	ARMED FORCES (SPECIAL POWERS) ACT : HUMAN RIGHTS VIOLATION OR NEED OF THE HOUR?	Monika Panwar Ritesh Saraswat	10-15
3.	मानव अधिकार व राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ	अल्पना शर्मा	16-18
4.	सफेदपोश अपराधों का समाज पर प्रभाव : एक विश्लेषण	धर्मवीर सिंह	19-22
5.	Child Abuse in India- An Unavoidable dilemma	Anita Kumawat	23-25
6.	महिलाओं की बढ़ती सहभागिता का समाजशास्त्रीय अध्ययन	आशा भाटी	26-30
7.	Impact of Leadership Styles on Employee's Job Satisfaction and Relationship of Employee and Top Management in Organization	Dr. Kamal Vijayvargiya, Mr.Kapil Monga	31-43
8.	A Study of Online Social Media Networks' Real-World Event Detection Techniques	Dr. Vishal Pareek, Ms. Manali Pareek	44-49
9.	Using Educational Data Mining to Predict Student Achievement	Dr. Vishal Pareek, Ms.Sarita Juneja	50-56
10.	Constitutional Aspect of Gender Justice in Terms of Human Rights	Dr. R.P. Verma	57-63
11.	Human Right and Human Health International and Constitutional Perspective	Dr. Shiv ShankerVyas Dr. Malika Parvin	64-67
12.	महिलाओं का मानवाधिकार संरक्षण	डॉ. संतोष शर्मा	68-74
13.	Human Rights and Intellectual Property Rights	Dr. Maninder Pal Singh	75-79
14.	मानव अधिकार : ट्रांसजेंडर भी अधिकारों का हकदार	Kiran	80-82
15.	A MOTHER : CREATOR OF A CHILD	Meha Khiria	83-86
16.	Is Political Offence a Fair Ground for Protection of Human Rights of an Alleged Offender	Renuwati Rajpurohit	87-92
17.	A Method for Comparing Different Deep Learning Architectures for Sentiment Analysis that is Based on an Experimental Approach	Dr. Kulvinder Singh, Ms. Nivedita	93-103

18. भारत में वृद्धावस्था की समस्याएं : वरिष्ठ नागरिकों के अधिकार	Upasana Sharma	104-108
19. कामायनी में मानव के अधिकार एवं उनके मध्य समरसता	डॉ. वन्दना तिवारी	109-113
20. HOW LAW PLAY A ROLE OF SAFEGUARD FOR THE HUMAN RIGHTS OF UNDERTRIAL PRISONERS	Varsha Panwar	114-118
21. माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत महिला अध्यापिकाओं की समस्याओं का विश्लेषणात्मक अध्ययन	डॉ. तारा स्वामी	119-123
22. उच्च माध्यमिक स्तर पर संचालित राष्ट्रीय सेवा योजना कार्यक्रम की उपादेयता का विश्लेषणात्मक अध्ययन	डॉ. शुबनम बानो	124-128
23. विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि, व्यक्तित्व व बुद्धि का अध्ययन	डॉ. सन्तोष व्यास	129-132
24. भारतीय राजनीतिक सत्ता-तंत्र में महिलाओं के अधिकार	डॉ० बिन्दु भसीन	133-138
25. राजस्थानी के आधुनिक प्रबंधकाव्यों का कथ्य विश्लेषण- एक अध्ययन	डॉ. मनोज कुमार	139-144
26. A Study Related to Human Rights and Indian Constitution with special Emphasis about the Role of United Nations	Minakashi Kumawat	145-150
27. A Study on Human Right between China and India	Mrs. Radhika Sharma	151-158
28. मानवाधिकार आयोग और महिला सुरक्षा	डॉ. सरलकान्ता व्यास	159-167
29. किशोरावस्था में एकल एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों की समस्या एवं प्रभावों का अध्ययन	सीमा बिस्सा	168-171

संपादक की कलम से

नमस्कार सभी विद्वतजनों,

मानव अधिकार वह अधिकार है जो हमें मानव होने के नाते सामाजिक न्याय हेतु संविधान द्वारा व्यक्ति को इंसान होने के कारण मिलते हैं। यह मानवाधिकार नगर पालिका से लेकर अंतरराष्ट्रीय कानून तक कानूनी अधिकार के रूप में संरक्षित है। मानवाधिकार सार्वभौमिक होते हैं जो हर जगह हर समय लागू होते हैं। इन अधिकारों को अनौपचारिक मौलिक अधिकारों के रूप में जाना जाता है। जिसका एक व्यक्ति सिर्फ



इसलिए हकदार है, क्योंकि वह एक इंसान है। मानव अधिकारों में वे मूल अधिकार शामिल हैं जो हर जाति, पंथ, धर्म, लिंग या राष्ट्रीयता की परवाह किए बिना हर इंसान को दिए जाते हैं।

लेकिन जैसा कि इस पत्रिका का विषय समकालीन परिस्थितियों में मानवाधिकारों का संरक्षण है। जो असल में इस विषय के संदर्भ में सभी विद्वत जनों के शोध पत्र निश्चित रूप से विभिन्न क्षेत्रों में मानवाधिकारों के समक्ष चुनौतियां तथा हनन और समाधान की दिशा में मील का पत्थर साबित होंगी। वैसे तो सभी तरह के मानव अधिकार अनेकों कानूनों द्वारा संरक्षित हैं। लेकिन वास्तविकता में विभिन्न लोगों, समूहों और अनेकों बार सरकारी तंत्र द्वारा भी मानवाधिकारों का हनन और उल्लंघन किया जाता है। 'जीवन के अधिकार' का उल्लंघन खुलेआम सांप्रदायिक सोच के साथ किया जाता है। उदाहरण स्वरूप धर्म, जाति पूछते-पूछते हत्या करना और उसका वीडियो सोशल मीडिया पर वायरल करना। इसके साथ ही अगर हम 'बोलने की स्वतंत्रता या अभिव्यक्ति के अधिकार' की बात करें तो आज लोकतांत्रिक दायरे में रहते हुए भी अभिव्यक्ति की आजादी पर पाबंदी लगाई जाती है। सत्ता की गलत नीतियों का विरोध करने पर कई बार तो देशद्रोही तक ठहरा दिया जाता है। 'सोच विवेक और धर्म की स्वतंत्रता के अधिकार' तहत अगर हम देखें तो वर्तमान हालात बेहद चिंताजनक हो गए हैं। त्योहारों के समय आज धार्मिक माहौल इतना खतरनाक हो जाता है जैसे मांसाहार पर रोक लगाने मस्जिदों पर दूसरे धर्मों के झंडे लगाने इत्यादि घटनाओं से सांप्रदायिक दंगे होते हैं और यह दंगे पूरी तरह से उन्हीं की सह होते हैं जिनकी असल जिम्मेदारी मानवाधिकारों के संरक्षण की होती है। अगर हम 'अत्याचार से स्वतंत्रता' के मानवाधिकार की बात करें तो सबसे ज्यादा अत्याचार हमारे समाज में बच्चों, महिलाओं और दलितों पर तेजी से बढ़ रहे हैं। जिसकी गवाही स्वयं सरकारी आंकड़े चीख-चीख कर देते हैं। मानवाधिकार कहते हैं कि हर व्यक्ति को शांति और अहिंसा के साथ 'आंदोलन करने का अधिकार' है। लेकिन हाल ही में देश में हुए ऐतिहासिक किसान आंदोलन में देखा गया कि किस तरह से आंदोलनकारियों को आतंकवादी, खालिस्तानी, नक्सलवादी की उपाधियों से खुद सरकारी तंत्र द्वारा नवाजा गया था और आंदोलन को कुचलने के प्रयास कई तरह के हम लोगो द्वारा किए गए थे। कहने को तो हर व्यक्ति मानव अधिकारों का हकदार है लेकिन धरातल स्तर पर इन अधिकारों का अब भी अधिकतर उल्लंघन किया जाता है। असल में मानवाधिकारों का उल्लंघन तब ही होता है जब राज्य द्वारा की गई कार्यवाहियों में इन अधिकारों की उपेक्षा एवं अस्वीकार्यता होती है।

हालांकि कई राष्ट्रीय संस्थान, गैर सरकारी संगठन और सामाजिक संगठन इनकी सुरक्षा के लिए चिंतित और क्रियाशील हैं। लेकिन वर्तमान उठापटक के हालातों में स्थिति गंभीर है। यह पत्रिका अमानवीय प्रथाओं परंपराओं के खिलाफ सामाजिक जागरूकता की दिशा में एक प्रयास है। मानवाधिकार जिंदाबाद।।

-डॉ. सीमा जैन, विशेषांक सम्पादिका



ARMED FORCES (SPECIAL POWERS) ACT: HUMAN RIGHTS VIOLATION OR NEED OF THE HOUR?

-Monika Panwar

Assistant Professor, School of Law, Maharaja Ganga Singh University, Bikaner.

-Ritesh Saraswat

Advocate, High Court of Rajasthan, Jaipur Bench, Rajasthan.

ABSTRACT :-

One of the biggest issue for the Human rights activists has been the Armed Forces (Special Powers) Act, 1958. This act was first introduced in 1958 due to extreme law and order situation in North East as Union government classified it as a “disturbed area”. The AFSPA was further applied to all the seven states in the North East and subsequently, it was applied in 1990s to large parts of the Jammu and Kashmir. The AFSPA provides army with “special powers”, but they have to be used with extreme care. Recently, the AFSPA was rolled back from nearly two-thirds areas of the Assam, Manipur, Nagaland and Arunachal Pradesh. Therefore, an attempt has been made to analyse the problems as to why there was a need for the Armed Forces (Special Powers) Act, 1958 and how it have an impact on the human rights of the civilians.

Research has been conducted with an objectives, first to look at the history around this act, second to look into the “special powers” given under the act, third to look into the relation between Human rights and AFSPA and lastly, to look into the conflicts which have taken place between the armed forces and civilians. Along with the issues faced because of the act, we will look as to what could be the step forward about going ahead with regard to the act and its area of applicability. The paper is bifurcated under five sub-heads introduction, AFSPA and its History, Human Rights and AFSPA, Conflicts involving AFSPA, and the Way forward. Hence, this paper looks to answer, armed forces (special powers) act: human rights violation or national necessity?

INTRODUCTION :-

The purpose of discussing the interrelationship of AFSPA 1958 and human rights violations is the allegation of violence in parts of several states of the North East, problems faced by civilians and mass killings and rapes by armed forces. The Union government, in agreement with states, uses a controversial legislation to deploy armed forces in “disturbed areas” of the country to “support” state governments. This legislation, called the Armed Forces Special Powers Act (AFSPA), has a dark history.

Among the many provisions that are cause for human rights concerns, AFSPA has provisions that allow for rare circumstances under which accused personnel can be tried in a court. AFSPA has established a culture of impunity that allow military forces and governments to completely disregard human rights and the rule of law.

Allegations of human rights abuses under AFSPA include personnel committing rape, using human shields on army vehicles, fake encounters, and disappearance while in custody.

This is a living example of the violation of human rights of a person. Today no one is ignorant of his natural rights. But it has become an essential issue to provide protection to the public from such attacks by the armed forces. Because the way we say that Article 21 of the Indian Constitution indicates the right to live human life and it includes the right to live life with dignity. But here it is coming as a challenge to protect the right to life. The provisions of Article 20, 21 of the Fundamental Rights given in Part III of the Indian Constitution are not suspended even in national emergency. When the provisions of Articles 20, 21 are available even in times of emergency, it becomes a matter of concern for the citizens of these parts of the states to not get the fundamental rights. What kind of reform is needed in this law and to what extent protection should be provided to a person is a matter of discussion.

AFSPA AND ITS HISTORY :-

Armed forces special powers act 1958 is an act of the parliament of India that grants special power to the Indian armed forces to maintain public order in disturbed areas. According to the disturbed area special courts Act, 1976 once declared 'Disturbed' the area has to maintain status quo for a minimum of 6 months. One such act passed on 11 September, 1958 was applicable to the Naga Hills then part of Assam. In the following decades it spread one by one to the other 7 sister states.

In India North East, at present it is in force in the states of Assam, Nagaland, Manipur (excluding Imphal municipal council area) Changlong, Longding and Tirap district of Arunachal Pradesh and areas falling within the jurisdiction of the eight police stations of district in Arunachal Pradesh bordering the state of Assam. Another one passed in 1983 and applicable to Punjab and Chandigarh was withdrawn in 1997, roughly 14 years after it came to force. An act passed in 1990 was applied to Jammu and Kashmir and has been in force since.

In 1951, the Naga National Council Nation'. There was a boycott of the first general election of 1952 which later extended to a boycott of government schools and officials. In order to deal with the situation, the Assam government imposed the Assam Maintenance of Public Order (Autonomous District) Act in the Naga Hills in 1953 and intensified police action against the rebels. When the situation worsened, Assam deployed the Assam Rifles in the Naga Hills and enacted the Assam Disturbed Areas Act of 1955, providing a legal framework for the paramilitary forces and the armed state police to combat insurgency in the region. But the Assam Rifles and the state armed police could not contain the Naga rebellion and the rebel Naga Nationalist Council (NNC) formed a parallel government "The Federal Government of Nagaland" on 23 March 1956. The Armed Forces (Assam and Manipur) Special Powers Ordinance 1958 was promulgated by the President Dr. Rajendra Prasad on 22 May 1958. It was replaced by the Armed Forces (Assam and Manipur) Special Powers Act, 1958 on 11 September 1958.

Special Powers of Armed Forces (Sec.4 of AFSPA) :

According to the section 4 of Armed Forces Special Powers Act (AFSPA), in an area that is proclaimed as "disturbed", an officer of the armed forces has powers to :-

1. In order to maintain public order in disturbed areas, the use of fire or other forms of force against a person acting against law and order, even if it causes death. Destroy camps, weapons, bases that attack armed forces.

2. Power to arrest without warrant on suspicion and to use force in such arrest has also been given.
3. Entering any premises without a search warrant and confiscation and seizure of ammunition, explosive substances.
4. Search and intercept any vehicle suspected of having weapons. No suit or any other legal proceeding shall lie against persons exercising such powers.
5. Nor can there be judicial review of the government's decision to declare any area as disturbed.

HUMAN RIGHTS AND AFSPA :-

To see the relation of Human Rights with the AFSPA, we first need to know what a Human Rights is. Human rights are those rights which belong to every human being as he is a human being irrespective of nationality, race or ethnicity, religion, sex. Therefore, human rights are those rights which are inherent in our nature and without which we cannot live like human beings. Human rights and fundamental freedoms help us to develop our qualities, knowledge, talent, conscience, so that we can satisfy our physical, spiritual and other needs. Human rights which are called fundamental or natural rights because they cannot be taken away by any act of any legislative government. Universal Declaration of Human Rights 1948, CCPR, and CSECR has provided certain rights to every individual as a human being.

This act is a living example of the deprivation of human rights to the citizens of a state due to the unlimited exercise of their powers by the members of the armed forces. Because such interference in the human being who expects from the state that he has the right to live in peace, and his basic rights are not protected is a serious problem of today. Human rights indicate the need of every individual. Any person is being deprived of the exercise of this right by the excessive exercise of powers, without warrant, the power to arrest, and the use of force for any other reason. The right to life given in Article 6 of the UDHR is also not protected here. This type of direct attack on the individual's right to privacy proves that Articles 9 and 10 of the UDHR are mere bookish knowledge for these states.

To imagine such states in independent India that the citizens of some part are still deprived of their rights in this way. After all, to what extent the exercise of this power of the government is executive, why even today the human rights of common citizens of some states are not protected. Why is the government needing to extend the time limit of such laws? When citizens can approach the courts for protection of fundamental rights, the citizens are still deprived of their rights, it is a matter of concern.

India is often considered as a country around the world that gives significance to the rights and liberties of its citizens. But what is happening in the states of Manipur, Jammu & Kashmir, and Nagaland looks like the law is making a mockery of the human rights which are guaranteed to its citizens. In the recent past, the violence which had occurred in Jammu & Kashmir has made people start to think that we really need AFSPA and now it has turned into a hot topic for a national debate. It is a type of law that gives excessive power to the armed forces and the people who are suffering because of it consider it a draconian law. Another important thing to note is that the Indian Army which is the organization being accused by the people for committing horrifying acts that were being carried on in the state over the years never came in front of the public to express their views and take a stand on this important issue.

And data shows that the army is never called into question except in situations where it is beyond their capacity of administration, the police, and other officials. AFSPA and Human Rights Violations It's high time that AFSPA should be looked into seriously by the government and repealed because of the incidence of violence that had happened in the past and continues to take place even now.

One of the incidences showcasing violence is Operation Bluebird which was also reported by some of the prominent international organizations which happened in the month of January in 1987 at a place called Oinam in the state of Manipur where almost 30 villages occupied by the Nagas were covered for committing violence that included torture, killing people in masses which also added to heinous acts of sexual harassment, theft and other criminal activities which were carried on for many days. It is also important to note that even the authorities were not allowed to move into the areas where such activities were carried on. AFSPA is inhumane as it had made the lives of people as if they were in curfew-like conditions for their entire lives. This act overall does not abide by the principle of constitutional morality and is arbitrary in nature.

Some Fundamental Rights which are useful like Natural Rights :

According to Article 14, the State shall not deprive any person of equality before the law and equal protection of the laws. Article 19 provides Protection of certain rights regarding freedom of speech etc. The State shall not deprive all citizens of the freedom of speech, expression, freedom of movement, residence and settlement throughout the territory of India. Article 21 The State shall not deprive any person of his life and personal liberty except according to procedure established by law. The right to live life of all persons includes the right to live peacefully with dignity.⁶ Article 22 Protection against arrest and detention in certain cases. (1) No person who is arrested shall be detained in custody without being informed, as soon as may be, of the grounds for such arrest nor shall he be denied the right to consult, and to be defended by, a legal practitioner of his choice.

Whether it is a disturbed area or any part within the territory of India other than the north-east, when every person gets the right to equality under Article 14, then some citizens are not getting equal protection under the protection of the rights of the constitution, it becomes a matter of concern. Common life is badly affected by the news of this form of sentinel from any part of India. Because it is their duty to provide protection to the common people.

CONFLICTS INVOLVING AFSPA.

1. Indrajit Barua v. The state of Assam and Anr.⁸

Every person being a citizen of the society has some duties for the society, so some fundamental rights have also been provided to him under the Indian Constitution. It includes the right to live with human dignity under the right to life. When the fundamental rights of a person are violated and thus misuse of powers leads to the degradation of human values.

Citizens of the present age can openly discuss about their basic rights.

2. Extra-Judicial Execution Victim families Associations and Anr. v. Union of India⁹

The greater exercise of their powers under this law by the members of the Armed Forces. The rights of a common citizen are not to be protected. The deprivation of fundamental rights under Article 14, 19, 21, 22 is a living example of violation of human rights. By using this type of power, the common people lose their faith and tend

towards violent tendencies. Instead of protecting the rights of the common citizen, their violation in this way has been a different matter for the Indian citizens.

3. Naga People's Movement

In December 2021, 14 civilians were shot in Mon district of Nagaland. The government named this phenomenon as 'Mistaken Identity'.¹⁰ The use of such power available to the armed forces in the form of 'Mistaken Identity' proves fatal in violation of human rights. Another where the common citizen can approach the Supreme Court for the loss of his fundamental rights. It is a matter of concern to so ruthlessly violate these Fundamental Rights from the Indian Constitution. When even an accused, a prisoner in a jail has the protection of the right to life and personal liberty under Article 21, then how these common citizens are being denied that right to that protection. How can we punish for someone else's mistake by depriving another person of his rights?

4. In the recent past a daily wage worker died after being shot at by a major of the Assam Rifles. The man, a father of four children was suspected to have been detained without a warrant- A draconian feature permitted by Armed Forces special powers Act.

9 2013 2 SCC 493

10 Indrajit Kundu and Hemanta Kumar Nath, Civilians, soldier among 15 killed in firing incident in Nagaland's Mon; CM announces probe, India Today, available at <https://www.indiatoday.in/india/story/firing-incident-nagaland-mondistrict-deaths-injuries-1884247-2021-12-05>

THE WAY FORWARD :-

There is an urgent need to limit the powers vested in the Armed Forces in Section 4 of the Act to prevent the human rights being violated by the AFSPA. When any person is given a fair opportunity of being heard, the citizens of these parts of the country should not be denied them. The need of the hour is to constitute an independent Appellate Committee and provide a fair opportunity of hearing. There is a need to impose a rule for taking legal action on the actions done by the members of the armed forces. There should be judicial review of the decisions of the government of the states falling in the list of disturbed areas. The government should try to reduce the time limit of this act by not acting as a mute spectator. There is a need to strictly follow the provisions given in the Indian Constitution and Code of Criminal Procedure. The Union Government should set up an independent grievances cell in each district where the act is in force to redress the common grievances.

The important thing to take into account is that just amending the act will not solve the problem. The government needs to know that the rights of the people are to be protected and for that AFSPA needs to be relooked at. It is not only that the fundamental rights of the citizens are violated but also it somewhat violate the Universal Declaration of Human Rights which India has signed. What has happened in Kashmir has also highlighted the situation prevalent in the state from July in the year 2016 to April 2018. There have been numerous instances where conflicts have taken place which have forced the government to bring in change in the ambit of the act. The government has shown us that the time to bid good bye to this law is not far away, after the historical step which was taken.

Conclusion :

In today's era, in a socialist, sovereign country like India, such Human Rights violations in a way indicate

the failed form of the government of the country. Because our India can talk about the protection of human rights at the international level only when we can maintain the security of our internal parts. Appropriate measures should be taken to stop such violence by rising above political and caste issues. There is a need to take sue moto cognizance of such matters by the National and State Human Rights Commission. The decisions of the government taken in cases that relate to the disturbed areas cannot be questioned in any court of law. And because of this many incidences that relate particularly to these areas where such activities are being carried on is not reported and justice is not given to the victims.

As the question which has been asked in the title of the paper, the appropriate answer would be that there is a need for mechanism which can take the both issues forward and find solution for both of them. There will be arguments which will be in favour of the act while there will be arguments which will be about repealing the law. However, there is need for the act in some parts of the states where it is currently applicable while there is also need to diminish the area where it is currently applicable. One such step was taken by the Government of India, which shows that there is a need to move forward from this act and looks for ways to ensure that the law and order situation is maintained in these areas, so that peace and harmony can be brought to disturbed areas.

Reference :

1. Section 4, Armed Forces (Special Powers) Act, 1958.
2. Sanjoy Hazarika and K Kokho, Time to repeal AFSPA, Gateway House, available at <https://www.gatewayhouse.in/time-to-repeal-afspa>.
3. Article 19, Constitution of India, 1950. 6 Article 21, Constitution of India, 1950.
4. Xerxes Adrianwalla, AFSPA: National necessity or human rights violation?, Gateway House, available at <https://www.gatewayhouse.in/afspa-national-necessity-or-human-rights-violation/> 8 A.I.R. 1998 Del. 513
5. Sanjib Baruah, Time to bid goodbye to AFSPA, The Indian Express, available at
6. <https://indianexpress.com/article/opinion/columns/time-to-bid-goodbye-to-afspa-7851548>.



मानव अधिकार व राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ

अल्पना शर्मा

व्याख्याता-राजनीति विज्ञान, श्री जैन स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बीकानेर

मुख्य शब्द :- संकल्पना सार्वभौमिक, प्राकृतिक, अनुबंध, तृष्टिकरण, आनुषंगिक, वसुधैव ।

प्रस्तावना :-

मानव अधिकारों की संकल्पना निरन्तर विकास व गतिशीलता का विषय रहा है। मानव अधिकार प्रजातंत्रीय अधिकार कहा जाता है। जब रीति-रिवाज लम्बे समय के बाद स्थित हो जाते हैं तब अधिकारों का रूप ले लेता है। किसी भी व्यक्ति के जीवन, स्वतंत्रता, समानता का अधिकार ही मानव अधिकार कहलाता है। इन्हीं मानव अधिकारों की रक्षा के लिए राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ अपने निस्वार्थ भाव से कार्यरत है। जहाँ-जहाँ मानवता का हनन या अत्याचार होता है वहाँ-वहाँ राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की आनुषंगिक संस्थाएँ अपना सर्वस्व न्यौछावर करने के लिए तत्पर रहती हैं।

अधिकार :-

अधिकार राज्य के अन्तर्गत मनुष्य को प्राप्त होने वाली ऐसी परिस्थितियाँ और अवसर हैं, जिनसे उसे आत्म-विकास में सहायता मिलती है। अधिकार इस बात का तथ्य है कि राज्य में व्यक्ति के महत्व को स्वीकार किया जाता है।

प्राकृतिक अधिकार :-

यह सिद्धान्त 17वीं और 18वीं सदी में काफी प्रचलित रहा। सामाजिक अनुबंध ने यह मत प्रस्तुत किया कि कुछ ऐसे अधिकार राज्य की उत्पत्ति से पहले अर्थात् प्राकृतिक स्थिति में भी विद्यमान थे, इन्हें प्राकृतिक अधिकार कहा जाता है। जॉन लॉक ने (1632-1704) 'जीवन स्वतंत्रता और सम्पत्ति' को प्राकृतिक अधिकारों की श्रेणी में रखा है। लॉक के अनुसार "यदि राज्य प्राकृतिक अधिकारों की रक्षा नहीं कर पाता है या इस कर्तव्य से विमुख हो जाता है तो ऐसे राज्य के विरुद्ध क्रान्ति कर देना न्यायसंगत होगा।"

प्राकृतिक अधिकारों की संकल्पना से अनेकों क्रान्तियाँ हुई हैं जैसे- अमेरिकी स्वतंत्रता की घोषणा (1776) में कहा कि मनुष्य जन्म से समान है और ईश्वर ने उन्हें जीवन, स्वतंत्रता और सुख की साधना जैसे अधिकार सौंपे हैं जो उनसे छीने नहीं जा सकते। फ्रांसिसी क्रान्ति (1789) की घोषणा के समय स्वतंत्रता, समानता, सुरक्षा और सम्पत्ति को मनुष्य के प्राकृतिक अधिकार बताये हैं।

मानव अधिकार :-

मानव-अधिकार ऐसे अधिकार जो प्रत्येक मानव को मानव के नाते प्राप्त होने चाहिए। मानव अधिकारों

का विचार क्षेत्र नागरिक अधिकारों की अपेक्षा अधिक विस्तृत है। मानव-अधिकारों का विचार देश-विदेश की सीमाओं से बंधा नहीं होता, किसी राज्य में किसी अपराधी या पागल व्यक्ति को नागरिक अधिकारों से वंचित किया जा सकता है, परन्तु फिर भी उसे मानव-अधिकारों से नहीं। किसी भी राज्य में विदेशी जन, शत्रु देश के नागरिक या युद्ध-बंदी को नागरिक अधिकारों से वंचित किया जा सकता है किन्तु मानव अधिकारों से नहीं।

मानव अधिकार शब्दावली 20वीं शताब्दी से शुरू मानी जाती है। उन्हें प्रजातंत्रीय अधिकार भी कहा जाता है। कहीं-कहीं मूल अधिकार भी कहा जाता है। मानव अधिकार का विचार तर्क पर आधारित है। ये मनुष्य की प्रकृति में ही समाहित है। ये रीति-रिवाज, कानून, राज्य या किसी भी संस्था की देन नहीं मानते। मानव अधिकार को किसी भी सरकार या अन्तर्राष्ट्रीय संस्था के अधिकार से परे माना जाता है। सन् 1948 में संयुक्त राष्ट्र मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा एवं कानूनी साधन है। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद मानव-अधिकारों की समस्या पूरे अन्तर्राष्ट्रीय जगत् के लिए चिन्ता का विषय बनकर उभरी। मानवता के विरुद्ध अपराधों के लिए मुकदमें भी चलाए गए। संयुक्त राष्ट्र संगठन के एक सक्रिय सदस्य के नाते भारत के संविधान के अन्तर्गत मूल अधिकारों और राज्य नीति के निर्देशक तत्वों के रूप में अधिकार का विधिवत् समावेश किया है। भारत सरकार के मानव-अधिकारों की रक्षा के उद्देश्य से सन् 1993 में राष्ट्रीय मानव-अधिकार आयोग की स्थापना की गई। यह आयोग भारत में मानव अधिकारों की रक्षा के लिए तत्पर है। अधिकारों की संकल्पना एक विकासशील व गतिशील विचार है। जैसे-जैसे व्यक्ति की सुरक्षा और विकास के समाज का सरोकार बढ़ रहा है, वैसे-वैसे व्यक्ति के अधिकारों की सूची में भी विचार हो रहा है ताकि उद्देश्यों की पूर्ति के लिए अनुकूल परिस्थितियां अर्जित की जा सकें।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ :-

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के संस्थापक डॉ. केशव बलिराम हेडगेवार ने वर्ष 1920 के नागपुर में हुए अखिल भारतीय कांग्रेस अधिवेशन में प्रस्ताव प्रस्तुत किया कि कांग्रेस का मुख्य उद्देश्य भारत को पूर्ण स्वतंत्रता और विश्व को पूँजीवाद के चंगुल से मुक्त कराना होना चाहिए। डॉ. हेडगेवार महात्मा गाँधी के खिलाफत आन्दोलन की तुष्टिकरण की नीति से क्षुब्ध थे। इसी तुष्टिकरण की नीति के कारण डॉ. हेडगेवार ने अपना एक अलग संगठन तैयार किया एवं राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की स्थापना वर्ष 1925 में नागपुर में की। जिसका मुख्य उद्देश्य देश को स्वास्थ्य लाभ हो, यही लगन थी और इस कार्य को उन्होंने अपना जीवन लक्ष्य निर्धारित कर लिया। आज राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की 50,000 से भी अधिक शाखाएँ देश-विदेश में फैली हुई हैं। भारत पर आने वाली प्रत्येक आपदा चाहे वह प्राकृतिक अथवा मानवकृत हो, का सामना स्वयंसेवक जी-जान से करते हैं। वर्ष 1962 में चीनी आक्रमण के समय भारत घायल सैनिकों की स्वयंसेवकों ने जी-जान से सेवा की।

मानव अधिकारों के रक्षार्थ राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ द्वारा अनेक आनुशंगिक संस्थाओं का गठन किया गया है। जैसे जनजाति अधिकारों के केरल आदिवासी संघ, इस आदिवासी संघ ने वनवासियों को न्यायसंगत अधिकार दिलाने हेतु सन् 1964 से 1985 तक अनवरत् आन्दोलन एवं संघर्ष किया। संघ 'नर सेवा नारायण सेवा' को अपना ध्येय वाक्य मानता है। पूर्वोत्तर भारत में संघ के स्वयंसेवकों की नजर असम के चाय बागानों में काम करने वाली विभिन्न अनुसूचित जातियों पर पड़ी। अंग्रेजों द्वारा की गई बर्बरता वहां की पीढ़ी दर पीढ़ी अत्याचार झेलती आ रही है। उनमें क्रांति का शब्द उजागर कर उन्हें इस अत्याचार से लड़ने के लिए प्रेरित किया। अंग्रेजों द्वारा

काम के लिए पूर्वी उत्तर प्रदेश, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल, मध्य प्रदेश, बिहार, झारखण्ड व तेलंगाणा में पिछड़े गरीब लोगों को जंजीरों में बांधकर गुलाम बनाकर लाये और आजीवन कारावास की तरह असम के इलाकों में काम करने के लिए छोड़ दिया। इस समाज की व्यक्तिगत स्वतंत्रता को भी कुचल कर रख दिया। इनके दुःखों का अन्त करीब 150 साल बाद राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रयासों से शुरू हुआ।

वर्तमान समय में विश्व स्तर पर पूरा विश्व रूस-युक्रेन युद्ध की विभीषिका के डर में जी रहा है। वहीं राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की आनुशंगिक संस्था सेवा इन्टरनेशनल सिर्फ भारतीयों की ही नहीं, बल्कि आठ बॉर्डर व वहां के 15 शहरों में अपनी सेवाएं दे रहे हैं। भारतीयों के साथ-साथ कई अन्य देशों के लोग भी संघ की वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना से लोगों की मदद में जुड़े हुए हैं। प्रभावित लोगों को युक्रेन से बाहर निकालने के लिए यातायात के साथ-साथ भोजन, पानी और वस्त्रों की भी व्यवस्था कर रहे हैं। सेवा इन्टरनेशनल संस्था के स्वयंसेवकों ने जानकारी देते हुए बताया कि जैसी जिसको जरूरत उसी के अनुसार मदद कर रहे हैं। स्वयंसेवकों ने भारत सरकार से अपील की कि युद्ध समस्याओं का समाधान नहीं बल्कि मानवता को नुकसान ही पहुँचाता है। युद्ध की भयावता में बड़ी संख्या में निर्दोष लोगों को अपनी जान गंवाना व बेघर होना पड़ता है।

निष्कर्ष :-

निष्कर्ष के रूप में कह सकते हैं कि समकालीन विश्व में मानव अधिकारों के प्रति राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ प्रतिपल सजग रहकर कार्य कर रहा है। स्वयंसेवक निस्वार्थ भाव से मानव अधिकारों के साथ साथ मानव सेवा में संलग्न रहते हुए निरन्तर कार्य कर रहा है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

पत्र-पत्रिकाएँ

1. दी हिन्दू
2. राजस्थान पत्रिका, मनमोहक वैध – डॉ. हेडगेवार को था स्वतंत्रता से जन्मजात अनुराग-1 अप्रैल 2022 जयन्ती पर विशेष।
3. दैनिक जागरण।
4. इन्टरनेट सुविधाएँ
www.google.com
Youtube
5. ओ.पी. गाबा, राजनीति सिद्धान्त की रूपरेखा
प्रकाशक : नेशनल पेपर बैक्स, 4230/1, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-110002,
शाखा 28, गणेश नगर, कॉलोनी, वेस्ट वारडपल्ली, सिकन्दराबाद 500026 (तेलंगाणा)
6. कृति रूप संघ दर्शन पुस्तक-माला, पृष्ठ-6
धर्म तत्व, प्रकाशक : श्री भारती प्रकाशन, डॉ. हेडगेवार परिसर, महाल, नागपुर-440032
7. फड़िया डॉ. बी.एल., फड़िया डॉ. कुलदीप, अन्तर्राष्ट्रीय संबंध साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा।
8. शर्मा डॉ. यू. इन्टरनेशनल रिलेशन्स, प्रकाशक : लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा।



सफेदपोश अपराधों का समाज पर प्रभाव : एक विश्लेषण

धर्मवीर सिंह

शोधार्थी, टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर, राजस्थान।

सार :-

अपराध की परिकल्पना आवश्यक रूप से सामाजिक व्यवस्था से जुड़ी हुई है। यह सर्वविदित है कि मानव हित समुदाय के सदस्य के रूप में ही भली-भाँति संरक्षित रह सकती है। समाज के सदस्य के रूप में प्रत्येक व्यक्ति के अन्य लोगों के प्रति कुछ कर्तव्य होते हैं या उसके साथ ही कुछ दायित्व होते हैं। एक दूसरे के प्रति कुछ कर्तव्य और दायित्व भी समाज के व्यक्तियों के परस्पर संबंधों को विनियमित करते हैं जिससे सामाजिक सुरक्षा संभव हो परती है। यह सर्वविदित है कि कुछ व्यवसायों में अनैतिक व्यवहारों के लिए ऐसे प्रयाप्त लाभदायी अवसर रहते हैं। जिनकी ओर जनता विशेष ध्यान नहीं देते हैं, अनेक व्यवसायों में कार्यरत कुछ व्यक्ति जनता के रोष के खतरे के बिना अपराधिक गतिविधियों से जुड़े रहते हैं। इस प्रकार के लोग व्यापारिक क्षेत्र तथा जनसेवी संस्थाओं में बहुदा पाये जाते हैं। ऐसे लोग नैतिकता या ईमानदारी में विश्वास नहीं रखते हैं और बिना जोखिम के अपराधिक गतिविधि जारी रखते हैं। इस प्रकार के अपराधिक गतिविधियों को सफेद पोश अपराध के रूप में जाना जाता है विश्वभर में आर्थिक और औद्योगिक विकास के चलते सफेदपोश अपराधों में वृद्धि हुई है समाज के बदलते सामाजिक आर्थिक परिदृश्य एक साथ-साथ धन और समृद्धि में वृद्धि ने ऐसे सफेद पोश अपराधों में वृद्धि हुई है।¹

प्रस्तुत शोध पत्र में समाज के बढ़ते सफेदपोश अपराध व इन अपराधों का समाज में क्या प्रभाव पड़ रहा है इस संबंध में विवेचना की गई है।

सामान्य परिचय :-वाणिज्यिक और औद्योगिक विकास के रूप में सफेद पोश अपराधों का बढ़ना एक वैश्विक घटना बन गई है। हाल ही के दशकों में सफेद पोश अपराधों में भारी अपराधों में भारी वृद्धि का कारण विकासशील अर्थव्यवस्था और औद्योगिक विकास में पाया जाना है सफेद पोश अपराधों का स्वरूप कुछ इस प्रकार होता है कि इनके कारण समाज के इतने अधिक लोगों को हानि होती है कि व्यक्ति रूप से किसी एक व्यक्ति विशेष पर इसका प्रभाव सिधा नहीं पड़ता है। इसी के कारण इन अपराधों के प्रति समाज अधिक सजग नहीं है और ना ही इन अपराधों को करने वाले पकड़े जाने पर समाज में उनकी प्रतिष्ठा गिरती है सफेद पोश अपराधों के संबंध में प्रख्यात अमेरिका विद्वान डॉ. वाल्टर सेक्ल्स ने अभिकथन किया है कि सफेद पोश अपराध उन व्यापारिक अपराधों का प्रतिनिधित्व करते हैं जो व्यापार की गतिविधियों एवं नीतियों का निर्धारण करते हैं।

वार्नस एण्ड टीटर्स के अनुसार "सत्ता-शक्ति लोगों को भ्रष्ट बनाती है और पूर्ण सत्ता उन्हें पूर्ण भ्रष्ट कर

देती है।

सफेद पोश अपराधिकता के संदर्भ में एक विशेष ध्यान देने योग्य बात यह भी है कि कभी-कभी समाज के व्यक्ति समाज के व्यक्ति स्वयं ही जान बूझकर या अनजाने में इनके घटित होने में योगदान करते हैं जैसे कि रिश्वत के मामले में मुनाफा खोरी के मामलों के इन अपराधों में वृद्धि होती है।³

भारत में सफेद पोश अपराध के प्रकार :-

1. **बैंक धोखाधड़ी :-** किसी कार्य या गतिविधि के पैटर्न में शामिल होने के लिए जहाँ इसका उद्देश्य बैंक आपके फंड्स को धोखा देना है।
2. **रिश्वत :-** जब पैसा सामान सेवाएँ जानकारी या मूल्य की कोई भी चीज लेने वालों के कार्यों, विचारों या निर्णयों को प्रभावित करने के इरादे से पेश की जाती है आप पर रिश्वत का आरोप लगाया जा सकता है चाहे आप रिश्वत दे या स्वीकार करें।
3. **कंप्यूटर धोखाधड़ी :-** जहाँ कंप्यूटर हैकर्स जानकारी चुराते हैं कंप्यूटर पर निहित स्रोत जैसे :- बैंक की जानकारी क्रेडिट कार्ड और मालिकाना जानकारी।
4. **जाल साजी :-** तब होता है जब कोई व्यक्ति किसी वस्तु की नकल या नकल करने के लिए अधिकृत नहीं होता है और वास्तविक या मूल वस्तु के लिए प्रतिलिपि को पास कर देता है जालसाजी अक्सर पैसे से जुड़ी होती है, लेकिन इसे डिजाइनर कपड़ों से भी जोड़ा जा सकता है पैसे से जुड़ी होती है, पैसे हैड बैग और घड़ियाँ।
5. **फर्जी रोजगार प्लेसमेंट टैकेट :-** कई धोखा धड़ी के मामले जहाँ तथाकथित जब शक्ति सलाहकार और रोजगार प्लेसमेंट एजेंसियों युवाओं को 50 हजार से दो लाख तक की बड़ी राशि के भुगतान पर सफेद पोश नौकरी प्रदान करने के झूठे वादे के साथ धोखा देती है।
6. **जालसाजी :-** जब कोई व्यक्ति प्राप्तकर्ता को धोखा देने या घायल करने के इरादे से एक गलत या बेकार साधन जैसे-चैक या नकली सुरक्षा पास करता है।
7. **धोखा धड़ी :-** जहाँ एक बिना लाइसेंस वाला स्वास्थ्य देखभाल दाता लाइसेंस और प्राप्त होने की आड़ में सेवाएँ प्रदान करता है सेवा के लिए मोदिक लाभ।
8. **इनसाइडर ट्रेडिंग :-** जब कोई व्यक्ति सार्वजनिक रूप से आयोजित निगमों के शेयर में व्यापार करने के लिए आंतरिक, गोपनीय, अग्रिम जानकारी का उपयोग करता है।
9. **कानूनी पेशा :-** झूठे सबूत गढ़ने पेशेवर गवाह को शामिल करने कानूनी पेशेवर गवाह को शामिल करने, कानूनी पेशे के नैतिक मानकों का उल्लंघन करने और अदालतों के मंत्री कर्मचारियों के साथ मिली भगत करने की कुछ सामान्य प्रथाएँ हैं जो वास्तव में सफेद पोश अपराध है अक्सर कानूनी द्वारा अभ्यास किया जाता है।
10. **मनी लॉन्ड्रिंग :-** रैकेटिया रिगंड्रिंग लेन देन या अन्य गबन योजनाओं से धन का निवेश या हस्तांतरण ताकि यह प्रतीत हो कि इसके मूल स्रोत का पता नहीं लगाया जा सकता है या यह वैध है।
11. **चिकित्सा पेशा :-** सफेद पोश अपराध जो आमतौर पर चिकित्सा पेशे से संबंधित व्यक्तियों द्वारा किए जाते हैं। उनमें झूठे चिकित्सा प्रमाण-पत्र जारी करना अवैध गर्भपात में मदद करना डकैतों को विशेषज्ञ राय देकर उन्हें बरी करना और रोगियों का नमूना और दवाएँ बेचना शामिल है या भारत।

12. **रेकेटियरिंग** :- व्यक्तिगतलाभ के लिए एक अवेध व्यवसाय को संचालन।

13. **प्रतिभूति धोखाधड़ी** :- दलालों द्वारा स्टॉक की किमतों को कृत्रिम में बढ़ाने का र्याताकि खरीदार वृद्धि पर स्टॉक खरीद सकें।

14. **टैक्स चोरी** :- जब कोई व्यक्ति टेक्स भरने का भुगतान करने में धोखाधड़ी करता है। भारत में कर कानूनों की जटिलता ने करदाताओं को करों से बचने के लिए प्रर्याप्त गुजा इस प्रदान की है।⁴

भारत में सफेदपोश से संबंधित मुख्य मामले :-

मामला / वर्ष	शामिल राशि	मुख्य आरोपी	सजा
यूटीआई सुरक्षा घोटाला 1992	5000 करोड़	हर्षद मेहता	आरोपित गिरफ्तार। बाद में हिरासत में मौत हो गई।
बिहार चारा घोटाला 1985	विभिन्न केन्द्रों पर कई घोटाले	लालू प्रसाद यादव और अन्य सरकारी अधिकारी	अभियुक्तों की दोष सिद्धि की अपील सुप्रीम कोर्ट में लम्बित हैं 7 मामले।
सत्यम केस 2007	बही खातों में हेरा फेरी हजारों करोड़ रु.	रामलिंग राजू	आरोपित को गिरफ्तार कर लिया गया अभियोजना चालू वित्तिय।
2 जी स्पेक्ट्रम 2012	1.76 ट्रिलियन	ए राज. कनिमोझी और अन्य	ट्रायल कोर्ट ने आरोपी को बरी कर अपील लम्बित।
कोलगेट घोटाला 2013	10.67 ट्रिलियन	सरकारी अधिकारी, आब्रटियों की जमानत।	गिरफ्तार बाद में जमानत।
किंग फिशर 2014	1200 करोड़	विजय माल्या का आरोपी	फरार एब्रों, प्रत्यर्पण की कार्यवाही दर्ज
नीरवमादी मामले 2017	850 करोड़	नीरव मोदी, मेहुल चौकसी	नीरव मोदी लंदन में गिरफ्तार प्रत्यर्पण।
एयरटेल मैक्सिस और आईएनएस मीडिया 2018	जांच के तहत	पी. चिदंबरम, कीर्ति चिदंबरम और अन्य	एक मामले में चार्ज सीट।
पीएमसी बैंक घोटाला 2019	2800 करोड़	बलिया और जुड़ी कंपनिया	गिरफ्तार किया गया, निषेध नहीं किया 7 जमाकर्ताओं की सदमें से मौत।

सफेद पोश अपराधों का समाज पर प्रभाव :-

सफेद पोश अपराध एक व्यापक समस्या है जिस पर अधिक ध्यान नहीं दिया जाता है। इसके बारे में सुनना अक्सर नाटकीय, रोमांचक या दिलचस्प नहीं होता है, और बहुत से लोग यह नहीं समझते है कि वास्तव में सफेद पोश अपराध क्या है हर कोई जानता है कि हत्या, डकैती या बलात्कार क्या है, और भावनाओं को जगाने वाली इन भावनात्मक घटनाओं को संसोधित कर सकता है। सभी उस और वर्गों के लोगों के समान

प्रतिक्रिया नहीं होती है प्रतिभूति धोखाधड़ी या भ्रष्ट ऋण अधिकांश लोगों से क्रोध और निराशा की भावनाओं को नहीं जागाते; इसके बजाय भ्रम की अधिक भावनाएँ। इसके विपरीत ब्लूकॉलर अपराध भयानक है। यह महंगा है भावनात्मक है और किसी व्यक्ति के जीवन को हमेशा के लिए बर्बाद कर सकता है ब्लूकॉलर या हिसंक अपराध की तुलना में सफेद पोश अपराध एक ऐसी समस्या है, हालांकि, इसके प्रभाव के कारण है ब्लूकालर अपराध अक्सर केवल एक परिवार या समुदाय के एक छोड़ प्रभावित करता है।

निष्कर्ष :-

“सावधानी इलाज से बेहतर है”

लेखक को शुरू में “सफेद पोश अपराध” के कई मामलों से निपटने का अवसर मिला, जब वह राष्ट्रीय कृत बैंक में कानूनी विभाग के प्रमुख थे और बाद में कई कॉर्पोरेट/बैंकों के वकील के रूप में कार्यरत थे। ऐसा प्रतीत होता है कि निम्नलिखित संबंधित प्रभावित पक्षों की मदद कर सकते हैं;

1. बैंकों को अंधी प्रतिस्पर्धा में शामिल नहीं होना चाहिए और उनके द्वारा निर्देशित नहीं होना चाहिए। उधारकर्ताओं या उसके द्वारा बनाई गई मंत्र मुग्ध करने वाली तस्वीर। नहीं, राजजनीतिक हस्तक्षेप की अनुमति दी जाए।

2. पेशेवारों, लेखा परीक्षकों और क्रेडिट-रेटिंग एजेंसियों के अपने तंत्र कर्तव्य है ओर किसी भी विचलन या उल्लंघन को प्रभावी ढंग से और तुरंत दंडित किया जाना चाहिए। सजा देने की शक्ति नहीं होनी चाहिए केवल उनके पेशेवर निकायों तक ही सीमित है।

3. जांच एजेंसियों को फोरेंसिक विज्ञान, लेखा धोखाधड़ी आदि में विशेष प्रशिक्षण दिए जाने की आवश्यकता है और सतर्कता पेशेवरों को संगठन के अंदर तैनात किया जाना चाहिए।

4. अभियुक्तों को बीमार होने से बचाने के लिए त्वरित और प्रभावी प्रयास किए जाएं।

5. वास्तविक कारण वाले व्हिसल ब्लोअर को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए न कि बनाया हुआ।

6. निवेशकों को भी निवेश के बारे में सोच-समझकर निर्णय लेना चाहिए और दूसरों की बातों से निर्देशित नहीं होना चाहिए। भारी निवेश विफल होने पर निवेशों विविधता होने से गंभीर प्रभाव को कम करने में मदद मिल सकती है।

7. जमा बीमा कवरेज को 1 लाख से बढ़ाकर करने की आवश्यकता है। 15 लाख इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि पिछले 25 वर्षों से यह नहीं है बढ़ा दिया गया है और जमा और कीमतों में लगभग वृद्धि हुई है। 20 बार जमाकर्ताओं को अतिरिक्त प्राप्त करने की विकल्प दिया जाना चाहिए उनके द्वारा योगदान किए गए उचित प्रीमियम भुगतान के खिलाफ कवर।

8. दोषी व्यक्तियों की तस्वीरों के साथ विशिष्ट विवरण सरकार द्वारा उम्मीदवारों के लिए भारत निर्वाचन आयोग के दिशा-निर्देशों की तर्ज पर उनके खर्च पर प्रकाशित किया जाना।

संदर्भ ग्रंथ :-

- | | |
|---------------------------------|----------------------------|
| 1. क्रिमिनोलोजी एण्ड पेनोलोजी | 2. भारतीय दण्ड संहिता 1860 |
| 3. भारतीय दण्ड प्रक्रिया संहिता | 4. भारतीय कर विधि। |
| 5. भारतीय फोरेंसिक विज्ञान विधि | 6. स्वापक अधिनियम 1981 |



Child Abuse in India- An Unavoidable dilemma

Anita Kumawat

Government Law P.G. College, Maharaja Ganga Singh University, Bikaner

Child abuse may be defined as a variety of harmful behaviours directed against children in way of emotional and psychological abuse, physical abuse, sexual abuse or neglect of a child by anyone whether by parents or caregivers. Childhood is the primary stage of life. It knows no worries, good or evil. Childhood is a time of both ignorance and innocence. A child's heart is pure like a crystal and it is also said "God resides in a child". But some people, without understanding the importance of the fact that a child is a gift of God, abuse children to such an extent that their future gets spoiled. Even a small misbehaviour with children leaves a deep impression on their soft mind. The problem of child abuse has taken a formidable form at this time which has spread completely not only in the country but also abroad with serious life-long consequences.

Types of child abuse :

Emotional and Psychological abuse: Emotional and psychological abuse with children's is difficult to understand in general, but it has a profound effect on them. When a person intentionally tries to make a child mentally inferior or wants to make the child feel that the child is socially incompetent, worthless and unpleasant like giving the child a silent treatment, name calling, teasing or bullying, emotionally blackmailing, criticism, shouting on child, exposure to domestic and family violence, not giving permission to express their opinion, isolation or locking a child up for extended periods, rejection etc.

Sexual abuse : Sexual abuse means any act that forces the child to engage in sexual activity. Even such type of abuse can happen without touching the children. Attempts to verbally engage the children in sexual activity are also included in sexual abuse. For example child rape, touching or kissing children in inappropriate anywhere, telling or showing dirty jokes and stories, showing dirty videos, Female genital mutilation, etc.

Physical abuse : Physical abuse includes willingly attempt to harm children by using physical force such as hitting, shaking, choking, burning, poisoning, throwing and biting or as a punishment giving children to do such acts which are harmful.

Neglect : Neglect is the failure to meet the basic physical and emotional needs of children by their parents and caregivers and which directly affects children's health and developments. Often families with limited resources are not actually neglecting their children but it is not possible for them to meet these needs. Neglect can be understood in another way as negligence in adequate supervision, health care when children are sick, personal hygiene, adequate clothing, food, housing and clean-living conditions. In most of the cases child neglect is the root cause of child abuse.

Modern slavery : Modern slavery is also considered as abuse. It means exploitation of other people for personal or commercial gain. Modern slavery is all around us but often just out of sight. It includes human trafficking, domestic servitude, debt bondage, forced labour, forced and early marriage, descent-based slavery, slavery of children.

Impact of child abuse :

Child abuse has a profound impact on a child's life and often become them mentally ill. Commonly children under the age of 18 are affected as child abuse. When someone intimidates the children or exploits them physically, mentally or in any form then the child is mentally disturbed and is not able to talk openly about it with his parents, due to which that child goes into depression slowly. Many children also commit suicide due to depression. Some children who are victims of child abuse lose their self-confidence forever and live their lives by being introverted or when they grow up. They often get involved in criminal activities.

In reality child labour is also a form of continuous child exploitation. At a tender age, which is supposed to be an age of playing and going to school, some children are compelled to work in factories, industries, offices or as domestic help. If we do child labour, then we are also misbehaving with that child, despite the justification that we should help the child's family to earn their daily basic need. To protect children from child abuse, it is the responsibility of the parents to make the children aware. Children should be told that if someone harass, scares or threatens them, then they inform the parents about it. This is not a small problem; many children also lose their lives. Parents should also keep an eye on the activities of their children if there is any strange change in the behaviour of the child.

Law against child abuse :-

The United Nations Convention on the Rights of the Child (CRC) is an international agreement for the protection of the rights of the child, which obliges the member countries to legally protect the rights of child. India has a wide range of laws to protect children and child protection is increasingly accepted as a core component of social development. The core child protection legislation for children is enshrined in four main laws: The Juvenile Justice Act/Care and Protection (2000, amended in 2015), Protection of child rights act (2005), Child Marriage Prohibition Act (2006), Protection of children from Sexual Offences Act (2012) and Child Labour Prohibition and Regulation (1986, amended in 2016).

Indian Constitution :-

Article 39 of the Indian constitution declares the duty of the state that children are given opportunities and facilities develop in a healthy manner and in conditions of freedom and dignity and that childhood and youth are protected against exploitation and against moral and material abandonment.

Protection of Children against Sexual Offences Act (POCSO) :-

The most prominent law against child sexual abuse and abuse in India is the Protection of Children against Sexual Offences Act (POCSO) passed in 2012. In this act, strict punishment has been prescribed for the offenses by marking them. This Act is not gender-specific and also penalises abetment of child abuse. Along with this, there is also a provision of special court for speedy hearing. This law also identifies the intention of child sexual abuse as an offense and also gives directions to the police, media and doctors regarding any such offence.

Indian Penal Code 1960(IPC) :-

Section 315 and 316 of Indian Penal Code deals with the death of an unborn child or an infant shall punish the accused who does any act to prevent an unborn child to be born alive.

Section 317 of the Indian Penal Code deals with the abandonment of a child below the age of twelve years, if the father or mother abandons their child intentionally.

Section 366A of Indian Penal Code deals with inducing any minor girl to have sexual intercourse with another person.

Sections 375 (rape) of Indian Penal Code deals with a provision of strict law to curb sexual offenses under this section and after the Criminal Law (Amendment) Act, 2013, the punishment for rape of a minor girl has been aggravated (made more serious) under section 376(2)(i) of IPC.

Section 372 (sale of girls for prostitution) & section 373 (purchase of girls for prostitution) punishes the accused of selling or buying minor girls for prostitution and illicit intercourse for any unlawful and immoral purpose.

National Commission for Protection of Child Rights :-

National Commission for Protection of Child Rights (NCPCR) which is incorporated under the Ministry of Woman and Child Development by the central government, works to regulate all laws and programmes with a child-centric approach. The commission can also take suo-moto cognisance for violation of child rights.

Child Welfare Committee (CWC) :-

This committee is formed under the Woman and Child Development Department and looks after the child in need of care and protection. This committee is to be informed about any child abuse within 24 hours by the police officer. Child Welfare Committee appoint a person who will support the child and be responsible for the psycho-social well-being of the child. The CWC person will keep the child's family updated about the case.

Conclusion :-

However, India has a comprehensive legal framework against child sexual abuse and abuse. But despite so many laws and schemes, these incidents happen due to their technical lapses and irregularities in their implementation, due to lack of prompt action.

To prevent child abuse, it is necessary that children should be given the knowledge about right and wrong things. They should also be open to talk about these subjects, so that they can understand this exploitation and can tell it to their loved ones.

To understand physical abuse, children must be given the knowledge to feel good and bad touch.

For prevention of child abuse, awareness is necessary to family members, parents and relatives that they should be aware about the people who meet and play with their children as well as the children should also be motivated to be much aware of abnormal 'behaviour'.

Obscene material on internet, mobile, social media should be stopped immediately. The option of parental control on the same internet sites should be strengthened.



महिलाओं की बढ़ती सहभागिता का समाजशास्त्रीय अध्ययन

आशा भाटी

शोधार्थी (शिक्षा), महाराजा गंगासिंह विश्वविद्यालय, बीकानेर (राज.)

प्रस्तावना :-

सभी कालों में भारतीय महिलाओं की स्थिति का विस्तार से वर्णन किया गया है। सभी कालों में महिलाओं की स्थिति अलग-अलग है। किसी काल में अच्छी तो किसी काल में बुरी है। इसमें प्राचीन काल, वैदिक एवं उत्तर वैदिक काल, मध्य काल, आधुनिक काल और वर्तमान काल इन सब में महिलाओं की स्थिति तो कहीं सुधरी हुई परन्तु अशिक्षित महिलाओं की स्थिति बुरी है। वर्तमान में महिलाओं की शिक्षा पर ध्यान दिया जा रहा है। उनको शिक्षित किया जा रहा है जिससे उनकी स्थिति में सुधार हों।

नारी जाति को अपने ऊपर अभिमान है वह अपने आप को अबला व हीन न समझे अपनी शक्ति, अपनी क्षमता पहचानें। अपने कार्यों से परिवार, समाज देश व जगत के लिए एक आदर्श बनें। वह कठिन से कठिन कार्य को सरलता से पूरा कर सकती है। वह पुरुषों से कमजोर नहीं है। सभी क्षेत्रों में अपनी अच्छी भागीदारी निभाती है।

हमारे अतीत से वर्तमान में महिलाओं का बहुत प्रभाव पड़ता है। मां, बहन, पुत्री व पत्नी के विभिन्न रूपों से साक्षात् हुआ व समाज में प्रचलित महिलाओं की स्थिति के बारे में जानकारी बढ़ी व इतिहास के अध्ययन से सभी दिशा में प्रेरणा मिलती है कि जिन्हें देवियों के रूप में हम पूजते हैं, अराधना करते हैं व बल, बुद्धि व शक्ति के लिए प्रार्थना करते हैं। हम विद्या के लिए सरस्वती, धन-वैभव व समृद्धि के लिए लक्ष्मी, शक्ति के लिए दुर्गा की उपासना करते हैं फिर भी हमारे समाज में स्त्रियों की दुर्दशा है और उनके प्रति भेदभाव व उनको "अबला", हीन माना जाता है। हमारे समाज में बालिका (भ्रूण) हत्या कन्या वध, दहेज के लिए प्रताड़ित करना, शिक्षा प्राप्ति व व्यवसाय में भेदभाव व शोषण इत्यादि बहुत हो रहे हैं। हमारे भारतवर्ष में प्राचीन काल से ही इसके अंकुर मौजूद हैं या ये सब मुस्लिम काल, मुगलकाल, राजपूत काल व ब्रिटिश काल की देन भी हो सकते हैं।

प्राचीन काल में शिक्षा का प्रसार था इस काल में बहुत-सी विदुषियां हुईं, जो आज भी आदरणीय व अनुकरणीय हैं। उन्होंने विपरीत परिस्थितियों में धैर्य धारण किया, कठिन समय में कड़ी परीक्षा दी व अपनी भावी पीढ़ियों व संतानों को जन्म दिया व ऐसे पुत्र-रत्न पैदा किए जिनसे भारत की संस्कृति फली-फूली, पत्नी के रूप में पतियों के लिए प्रेरणा बनी व जन्म-भूमि व देश से प्रेम का पाठ पढ़ाया, पुत्री के रूप में आदर्श प्रस्तुत

किया व बहनों ने भाईयों को प्रेरणा दी व कर्तव्य-पथ पर आगे बढ़ने को सदैव प्रेरित किया ऐसी महान माताओं, पत्नियों, पुत्रियों व बहनों के योगदानों से हमारा भारत देश सम्पन्न हुआ, उनके ज्ञान भक्ति वैराग्य से संस्कृति पुष्पित-पल्लवित हुई व भावी पीढ़ियों को उनके आदर्श, त्याग व बलिदान की गाथाएं संभालनी आवश्यक हो गई, अतः उनके चरित्र से बहुत प्रेरणा मिलती है। महिलाएं कमजोर नहीं हैं वह कठिन से कठिन कार्य को सरलता से कर देती हैं वह पीछे नहीं हटती। वह सभी क्षेत्रों में अपनी भागीदारी अच्छी निभाती है।

अध्ययन के उद्देश्य -

कामकाजी महिलाओं की सामाजिक व आर्थिक पृष्ठभूमि का परिणात्मक अध्ययन ही इसका मुख्य उद्देश्य इस प्रकार है :-

1. भारत में विभिन्न कालों की महिलाओं की स्थितियों का अध्ययन करना।
2. महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक स्थिति की जानकारी प्राप्त करना।
3. कामकाजी महिलाओं के लिए कौनसी परिस्थितियां व कौनसे कारक उत्तरदायी रहे हैं।
4. बीकानेर जिले की महिलाओं की वर्तमान का पता लगाना।
5. महिलाओं की समस्या का समाधान हेतु किए गए उपायों का पता लगाना।
6. महिलाओं की सामाजिक क्षेत्र में सहभागिता का अध्ययन।
7. महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक स्थिति की जानकारी प्राप्त करना।

विभिन्न कालों में महिलाओं की प्रस्थितियां -

1. प्राचीन भारत में महिलाओं की परिस्थिति-

प्राचीन भारत में महिलाओं की परिस्थिति के संबंध में दो मत प्रचलित हैं। जो प्राचीन धार्मिक, साहित्य से उद्धरित उदाहरणों के आधार पर भारतीय महिलाओं की विरोधाभासी छवियों को निरूपित करते हैं। जहां एक संप्रदाय यह साबित करता है कि उस समय स्त्री का अपमान किया जाता और उसको कष्ट दिया जाता शोषण किया जाता था। इस समय स्त्रियों की दुर्दशा होती है इस कारण पूरे परिवार का विनाश होता है, किन्तु जहां पर खुशी होती है वहां परिवार सदैव समृद्धि को प्राप्त करता है। स्त्रियाँ पृथ्वी पर दैवीक गणों का प्रतीक हैं। स्त्रियों के संबंध में ऐसे उच्च और सम्मानतापूर्ण आदर्श रामायण और महाभारत में भी स्थान-स्थान पर दोहराए गए हैं।

2. वैदिक और उत्तर वैदिक काल में भारतीय महिला की परिस्थिति -

इस काल में भारतीय महिलाओं की परिस्थिति ठीक थी। उनको जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में स्वतंत्रता प्राप्त थी। वैदिक तथा रामायण, महाभारत काल में स्त्रियाँ कभी भी पर्दा नहीं करती थी। उन्हें अपने जीवन साथी को चुनने का अधिकार प्राप्त था। वे शिक्षा प्राप्त कर सकती थी। उन पर कोई प्रतिबंध नहीं था। विधवाओं को पुनर्विवाह करने की अनुमति थी। घर पर उन्हें पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त थी और उन्हें अर्द्धांगिनी माना जाता था। महाभारत में कहा गया था "मृदुभाषी पत्नियाँ सुख में अपने पति की मित्र होती हैं"। धार्मिक कार्यों के समय वे उनके पिता के समान होती हैं तथा दुःख व कष्ट के समय वे उनकी माता के समान होती हैं। गृहस्थ जीवन

में महिला सर्वोपरि होती थी। इस प्रकार सामाजिक क्षेत्र में महिलाओं की स्थिति पूर्ण रूपेण असहायों की भांति नहीं थी बल्कि उनकी स्थिति एक व्यक्ति की तरह थी, जो न्याय व औचित्य से प्रेरित थी।

3. बौद्धकाल में भारतीय महिला की परिस्थिति -

बौद्धकाल में भारतीय महिला की परिस्थिति में पहले से कुछ सुधार हुआ। सामाजिक क्षेत्र में उन्हें सम्मानित स्थान प्राप्त हुआ और आर्थिक व राजनैतिक स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। धार्मिक क्षेत्र में स्त्रियों को स्पष्ट रूप से उत्कृष्ट स्थान प्राप्त हुआ। इनका संघ बना जिसे भिक्षुणी संघ कहा गया। संघ ने स्त्रियों को सांस्कृतिक कार्यक्रमों, समाज सेवा तथा सार्वजनिक जीवन में अनेक स्थलों पर भाग लेने के अवसर प्रदान किए।

4. मध्यकाल में भारतीय महिला की परिस्थिति -

मध्यकालीन भारत में मुगलों के शासन की स्थापना के बाद महिलाओं की स्थिति काफी सुधरी। महिलाओं की स्थिति की दृष्टि से यह युग हिन्दुओं के सामाजिक इतिहास में एक कलंक का युग माना जाता है। ग्याहरवीं शताब्दी के प्रारंभ से ही भारतीय समाज पर मुसलमानों का प्रभाव पड़ने के कारण हिन्दु संस्कृति की रक्षा करना आवश्यक हो गया था। ब्राह्मणों ने संस्कृति की रक्षा स्त्रियों के सतीत्व और रक्त की शुद्धता बनाए रखने की दृष्टि से स्त्रियों से संबंधित नियमों को कठोर बना दिया।

5. आधुनिक काल में भारतीय महिला की परिस्थिति -

आधुनिक युग में भारतीय महिला की परिस्थिति में क्रांतिकारी परिवर्तन का शुभारंभ हुआ। स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व आधुनिक युग का अधिकांश भाग (18 वीं, 19 वीं तथा आधी 20 वीं सदी) भारत में ब्रिटिश शासन का समय चल रहा था।

इस शासन काल के दौरान हमारे देश की सामाजिक व आर्थिक संरचनाओं में अनेक आधारभूत परिवर्तन हुए। इसमें शिक्षा, रोजगार, सामाजिक अधिकारों आदि क्षेत्रों में व्याप्त स्त्री-पुरुष विषमता को कम करने की दिशा में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए। बाल-विवाह, सती-प्रथा, देवदासी-प्रथा, पर्दा-प्रथा, विधवा-पुनर्विवाह पर प्रतिबंध की प्रथा आदि कुल ऐसी परम्परागत सामाजिक बुराईयों ने भारतीय महिला को निजी व सार्वजनिक जीवन को नरक के समान बना दिया। इनको नियंत्रित करने तथा सामाजिक विधि-विधानों द्वारा समाप्त करने के प्रयास किए गए। देशभक्त, समाज सुधारक व ब्रिटिश सरकार ने भारतीय महिला की स्थिति को सुधारने के लिए अनेक प्रयत्न किए वह सुधारना चाहते।

महिला उत्थान, कल्याण के लिए जो भी नीतियां व कार्यक्रम बनाएं जाते हैं। उनका आधार व विभिन्न समस्याएं हैं। जिनका सामना समकालीन भारतीय समाज में भारतीय महिला को करना पड़ा। आज भी उनके समक्ष अनेक सामाजिक-सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनैतिक, शैक्षणिक, अपराधिक, शारीरिक व मानसिक समस्याएं हैं।

जिनसे मुक्ति मिलने पर ही भारतीय महिला सही मायनों में सशक्त हो सकती है।

महिलाओं की सहभागिता :-

महिला सभी क्षेत्रों में अपनी सहभागिता अच्छी निभाती है। वह घर से लेकर बाहर ऑफिस तक के सभी कार्य रुचि से करती है। यह पुरुषों से पीछे नहीं रही। अब उनसे कदम से कदम मिलाकर चलना चाहती है। यह सभी क्षेत्रों जैसे सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, कला, खेल, क्षेत्र, फिल्मी क्षेत्र, शिक्षा क्षेत्र और धार्मिक क्षेत्र में अच्छी सहभागिता निभा रही है। पुरुष इनको अपने से कमजोर समझते व दन को अपने बराबर का दर्जा नहीं दिलाना चाहते हैं। परन्तु आज महिला पढ़ी-लिखी है तो वह घर के बाहर के कार्य भी कर लेती है। वही किसी के दबाव में नहीं रहती है। यह कठिन से कठिन कार्य को सरलता से कर देती, उससे पीछे नहीं हटती है। यह अपने परिवार का पालन-पोषण करती है। यह परिवार के सभी सामाजिक, आर्थिक कार्य सही ढंग से करती है। परिवार को बनाए रखती है। नारी के बिना पुरुष अधुरा होता है। वह उसके बिना कोई कार्य पूरा नहीं कर सकता है। नारी अपने अलग-अलग रूपों में अपनी सहभागिता निभाती है। वह मां, पत्नी, बेटा और बहू इन सभी रूपों में वह अपना अस्तित्व निभाती है। प्राचीन काल से लेकर आज तक की महिलाओं में बहुत अंतर आया है। शिक्षा का महत्व तो प्राचीन काल में भी था और आज भी तो बहुत है। महिलाएं कठिन कार्य से डरती नहीं। उसको सरलता से व धैर्य से कर लेती है। कठिन समय में कड़ी मेहनत की ओर अपनी भावी पीढ़ियों व संतानों को जन्म दिया और ऐसे पुत्र रत्न पैदा किए जिससे भारत की संस्कृति फली-फूली, पत्नी के रूप में पतियों के लिए प्रेरणा बनी व जन्मभूमि व देश प्रेम का पाठ पढ़ाया, पुत्री के रूप में आदर्श प्रस्तुत किया व बहनों ने भाईओं को प्रेरणा दी व कर्तव्य-पथ पर आगे बढ़ने को सदैव प्रेरित किया, ऐसी महान माताओं, पत्नियों, पुत्रियों व बहनों के योगदान से हमारा भारत देश सम्पन्न हुआ। आज भी पहले से अधिक सम्पन्न है। उनके ज्ञान शक्ति, वैराग्य से संस्कृति पुष्पित-पल्लवित है।

स्वतंत्र भारतीय समाज में महिला की सहभागिता :-

स्वतंत्र भारतीय समाज में महिला ने बहुत अच्छी सहभागिता निभाई उसका आज भी समाज में महत्व है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद स्त्रियों की प्रस्थिति में क्रांतिकारी परिवर्तन आया अर्थात् उनकी स्थिति में काफी सुधार हुआ है। डॉ. श्रीनिवास के अनुसार पश्चिमीकरण, लोकिकीकरण तथा जातीय गतिशीलता ने स्त्रियों की सामाजिक, आर्थिक स्थिति को उन्नत करने में काफी योगदान दिया। जिससे स्त्रियों की स्थिति काफी सुधर गई। वही सभी क्षेत्रों में कार्य कर सकती है। उनको स्वतंत्रता प्राप्त है, क्योंकि इस समय शिक्षा का प्रसार हुआ। वह पुरुषों की तुलना में अधिक अच्छा कार्य करती है। वह स्वतंत्रता के बाद धीरे-धीरे औद्योगिक संस्थाओं और विभिन्न क्षेत्रों में नौकरी करने लगी। अब वही धीरे-धीरे आर्थिक स्थिति से आत्म-निर्भर होने लगी।

निष्कर्ष :-

भारतीय महिला की स्थिति जीवन के विभिन्न क्षेत्रों (सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, नागरिक आदि) में पुरुषों के समकक्ष हो गई है। विभिन्न अनुसंधान और रिपोर्ट निरंतर यह दर्शाती रहे कि भले ही कानूनी दृष्टि से भारतीय महिलाओं को पुरुषों के समान अवसर प्रदान किए जा चुके हैं, परन्तु वास्तविक जीवन में भारतीय महिला आज भी अनेक भेदभावों, अत्याचारों, शोषण व उत्पीड़न से पीड़ित हैं। आज भी वह स्वतंत्र नहीं है।

उस पर अनेक प्रतिबंध लगाए गए हैं। आज भी महिला आर्थिक रूप से पुरुष पर निर्भर है। उसे आज भी अनेक सामाजिक-सांस्कृतिक कुरीतियों के आगे घुटने टेकने पड़ते हैं।

आज भी उसके विरुद्ध किए जाने वाले अपराध निरंतर बढ़ते जा रहे हैं। समाज ही नहीं परिवार भी आज उसके लिए एक सुरक्षित स्थान है। कुछ उच्च व मध्यम वर्ग की शिक्षित व शहरी महिलाओं की स्थिति में उल्लेखनीय अभिवृद्धि हुई है। परन्तु ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाली देश की अधिकांश निरक्षर और घरेलू महिलाओं की स्थिति में कोई खास फर्क नहीं आया। आज भी महिला का शोषण किया जा रहा है।

इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार, गैर-सरकारी संगठनों एवं एंजेशियों, समाज सुधारकों, बुद्धिजीवियों ने भारतीय महिलाओं के उत्थान विकास के क्षेत्र में ठोस परिणाम प्राप्त करने के लिए अपनी गतिविधियों को तेज करने का प्रयास किया है। यह भी आज सर्व स्वीकार्य हैं कि महिलाओं को अधिक से अधिक अधिकारों को प्रदान करने वाले कानूनों के निर्माण कर लेने मात्र से उनकी स्थिति में आधारभूत परिवर्तन नहीं लाया जा सकता है। विभिन्न कुरीतियों को हटाने के लिए निर्मित कानूनों का प्रभावशाली क्रियान्वयन किया जाए और महिला तथा समाज में उसकी भूमिका के संबंध में सामाजिक दृष्टिकोण में ही बदलाव लाया जा रहा। महिला स्वयं अपनी पहचान के संबंध में और पुरुष महिलाओं के प्रति अपने दृष्टिकोण में ही बदलाव लाया जाए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. दीपा जैन, महिला सुरक्षा एवं महिला पुलिस, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी 2007
2. डॉ. जयशंकर मिश्र, "प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास", बिहारी हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पटना, 1980
3. मोतीलाल गुप्ता, "भारत में समाज" राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 1990
4. दृष्टव्य श्रीमद् भागवत पुराण तृतीय स्कन्ध अध्याय 3 श्लोक पेज, 31-33
5. आरजू एम.एच. "भारतीय महिला और आधुनिकीकरण" कॉमन वैल्थ पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 1993



Impact of Leadership Styles on Employee's Job Satisfaction and Relationship of Employee and Top Management in Organization

Dr. Kamal Vijayvargiya, Assistant Professor (Commerce),

Mr. Kapil Monga (Scholar, Commerce),

Tantia University, Sri Ganganagar(Raj.)

Abstract :-

Despite the fact that organizational commitment and job performance are critical for an organization's existence, little emphasis is made to the simultaneous study of both variables. The goal of this study was to see how the supervisor-employee connection, perceived leadership style, and work satisfaction influenced organizational commitment and performance. Two hundred and fifty-five media employees, ranging in age from 20 to 57 years, were conveniently sampled, with a mean age of 34.29 years. The working hypotheses were tested using stepwise multiple regression analysis.

The prediction of organizational commitment and job performance can be broken down into three parts using stepwise regression analysis. The third step reveals that job satisfaction ($=0.53$; $p.001$); supervisor-subordinate relationship ($=0.41$; $p.001$); and laissez-faire leadership styles ($=0.38$; $p.001$) are the predictors of organizational commitment, accounting for 49.7% of the variance; and job performance, accounting for 34.8 percent of the variance, the variables of working experience ($= -0.54$; $p.001$); education ($=0.31$; $p.01$); and transformational leadership Employee retention, performance management, and incentive strategies are all affected by this finding.

Introduction :-

Because of global economic competitiveness, today's workplaces are more complicated and sophisticated, necessitating erudite leadership, as leaders face unanticipated difficulties that necessitate varying degrees of leadership management. Effective staff management is seen to be possible through leadership behaviour that encourages employee dedication and productivity. Although many factors both inside and outside the organization can have a significant impact on employee effectiveness (Islam, Khan, Shafiq, & Ahmad, 2012).

Performance can be thought of as a multi-faceted concept. Borman and Motowidlo (1993), for example, distinguished between task and contextual performance. Task performance refers to an individual's ability to contribute to the organization's 'technical core' through the tasks they undertake. Contributions can be direct (in the case of production personnel), indirect (in the case of human resource employees), or both. Contextual performance refers to activities that assist the organizational social environment in the pursuit of organizational goals rather than contributing to the technical core. Helping coworkers, being a reliable part of the company, and conducting actions that serve to improve work procedures are all examples of contextual performance.

Job satisfaction is defined as the degree to which an employee's working environment matches their requirements and ideals, as well as the individual's reaction to that environment (Lambert, 2004; Tewksbury & Higgins, 2006).

It refers to people's affective reactions to their jobs. No surprise, according to Robins (2005), employees with high job satisfaction behave differently than those with low job satisfaction. Job happiness is also linked to a variety of job outcomes (Spector, 2000), including job performance (Gebauer & Lowman, 2009; Macey & Schneider, 2008; Macey, Schneider, Barbera, & Young, 2009). Managerial leadership style and subordinate job satisfaction have been demonstrated to have significant effects on subordinate work outcomes (Spector, 2000). As a result, choosing a leadership style that works best for an organization and its employees is one of the most effective and efficient ways for businesses to fulfil their goals and ensure employee happiness.

The concepts under consideration have received more research in developed economies, yielding a variety of conclusions, many of which may differ from what is available in poorer economies because to differing cultural orientations to work. As a result, the impact of leadership style, supervisor-subordinate relationships, and job satisfaction on work behaviour is investigated in this study (commitment and performance). The understanding of the impact of leadership style is predicted to help management of companies as a result of this research.

Review of The Literature :-

Social exchange theory is one of the basic hypotheses in this research. According to social exchange theory, as individual employees connect with one another over time, they feel compelled to repay the support and assistance they get. Blau (1983) coined the term "reciprocity norm" to define such a connection. Employees have a trustworthy and loyal relationship when the reciprocity standard is followed (Cropanzano & Mitchell, 2005). As a result, individual employees are more inclined to return a favour than the benefactors might anticipate (Flynn, 2003; McGuire, 2003). The social exchange theory has been used to explain how firms implement and practise a variety of mentoring activities or generate work design ideas that allow employees to feel supported and trusted by the organization. As a result, the employee develops a sense of loyalty to the company, which leads to increased job satisfaction and performance (Piening, Baluch, & Salge, 2013).

Huo, Binning, and Molina (2010) developed a dual pathway model of respect to describe the two mechanisms that drive the advantages of respect. For starters, employees often believe that the respect they receive reflects their position inside the company. That is, when managers treat employees with respect and fairness, employees believe their abilities and talents are valued by the company or team. Such perspectives boost a person's self-esteem and confidence in their abilities. Second, the employees believe that the respect they receive demonstrates a sense of similarity and belonging. Employees, on the other hand, are more likely to engage in trade when they see the accruable benefit of being a part of the system. This allows individuals to perform mental accounting, which includes a ledger of rewards, costs, and profits.

Simply said, a person will stay on a job as long as it is fulfilling to them. When the supervisor's actions defend the subordinates' interests, the relationship might be significant. A mutually beneficial connection, for example, may result in high levels of commitment and job performance among employees. The relationship between supervisors and subordinates is critical, according to Robins (2005), because of the benefits it provides in terms of organisational effectiveness, employee career growth, and well-being. That is, a positive supervisor-subordinate relationship can

have a positive impact on work outcomes.

According to the investment model of commitment, commitment is influenced not only by the outcome of present relationship values and alternatives, but also by the quantity of financial contribution to the relationship (Rusbult, 1980). The resource that is "placed into" an association with the goal of boosting the relationship's long-term worth is referred to as investment. Length of service, acquisition of non-profitable skills, and retirement plans are all common investments. Arriaga and Agnew (2001) define commitment as a psychological state including affective, cognitive, and conative components, based on the investment model. The affective component is psychological attachment to a relationship; the cognitive component is the assumption of a long-term orientation; and the conative component is the intention to stay in the relationship. Employees build commitment across the three components of identification with an organization, long-term orientation, and intention to continue, according to this study. According to McMahon (2007), an employee who performs his or her duties out of a sense of obligation may be able to stay in the relationship because of internalized standards that drive the employee to feel obligated to work for the company. This is consistent with the investment model, which states that investment size is the final driver of commitment.

Although research shows that tenure is linked to organizational commitment (Meyer & Allen, 1997), it is still unclear how this link works. One probable explanation is that as an employee's length of service grows, he or she develops an emotional commitment to the company, making it difficult to switch employment.

Similarly, a positive association between tenure and organizational commitment could represent the fact that uncommitted personnel depart while those who have a high level of commitment stay (Meyer & Allen, 1997). According to a study by John and Taylor (1999), education is expected to have a negative association with organisational commitment since employees with low levels of education have a harder time shifting employment and hence are more committed to their organizations.

Herzberg's two-factor theory gives a theoretical foundation for measuring job satisfaction scientifically (Zhao, Thurman, & He, 1999). According to Herzberg's thesis, job satisfaction is determined by three factors: the work itself, the responsibility one has in the work, and the acknowledgment one receives for doing the work (Brody, Demarco, & Lovrich, 2002; Zhao, et al., 1999). Researchers such as Robins (2003) and McShane & VonGlinow (2000) report a strong link between job satisfaction and organizational commitment, whereas Fatokun (2007) and Ogunyinka (2007) found a weak link between job satisfaction and organizational commitment, implying that job satisfaction does not always lead to organizational commitment. According to Camp (1994), low employee job satisfaction is linked to attendance issues, greater turnover rates, a lack of active participation in job activities, and psychological withdrawal from work. Employees are more content with their jobs, according to research, when they are suitably recognized for a job well done and when they have the opportunity to contribute to the organization's rules and procedures (Slate, Wells, & Johnson, 2003).

A number of studies have found a link between leadership style and organisational commitment. The development of an acceptable leadership style, according to Robins (2005), influences subordinates to create trust in management and commitment. According to Dale and Fox (2008), superiors that use a supportive, respectful, trusting, and friendly leadership style are more likely to communicate with employees on a professional, emotional,

and spiritual level.

Employees with social links to the organization may not willingly sever professional, social, and emotional ties, as Morris and Sherman (1981) equate high levels of social interaction between the leader and subordinates with higher degrees of organizational commitment.

In the same way that good leadership activities affect organizational transformation and adaptability, the organization as a system turns employees' effort and physical resources into products or services (Fleishman, Mumford, Zaccaro, Levin, Korotkin, & Hein, 1991). As a result, DeRue, Nahrgang, Wellman, and Humphrey (2011) propose that leadership models focus more on identifying proximal variables (behaviours) that may have good predictive validity, rather than distal predictors, which are effective for predicting broad behavioural trends (Connelly, Gilbert, Zaccaro, Threlfall, Marks, & Mumford, 2000). Dvir, Eden, Avolio, and Shamir (2002) found that transformational leadership had an indirect impact on performance through a layer in the hierarchy, similar to how Howell and Avolio (1993) found a link between transformational leadership styles and performance outcomes.

However, Wang, Law, Hackett, Wang, and Chen (2005) indicate that, regardless of leadership style, leadership has a significant impact on employee performance and commitment. According to Islam et al. (2012), leadership styles have a higher impact on workers' work-related behaviour, such as work performance.

According to the leader-member exchange theory, a healthy 'dyadic' connection arising from the leader's treatment of subordinates promotes greater performance ratings (Linden, Wayne, & Stilwell, 1993), stronger organizational commitment (Nystrom, 1990), and higher overall satisfaction (Scandura & Graen, 1984).

Managers who have low-quality exchanges with their line managers have weak organizational commitment, according to Nystrom (1990), whereas managers who have high-quality exchanges have strong organizational commitment.

Demographic shifts have been identified as one of the elements influencing work performance (Palakurthi & Parks, 2000). However, few researches have looked into the effect of demographic characteristics on job performance. Linz (2002), for example, found that educational attainment has little bearing on job performance. On the other hand, Ariss and Timmins (1989) claim that education has an impact on work performance since those with lower levels of education are less likely to do well at work. While the findings of McBey and Karakowsky (2001) suggest a causal association between education and job performance,

The meta-analysis results of Judge, Thoresen, Bono, and Patton (2001) demonstrate a stronger and positive link between performance and job satisfaction than previously thought. Job happiness is linked to having positive relationships with coworkers, liking the work itself, and supervisors' performance, according to Berta (2005). Similarly, Jones (2005) discovered that job happiness is related to the level of prestige associated with one's employment by outsiders. These findings suggest that implementing measures that can assist boost employee job satisfaction may not be prohibitively expensive for businesses. As a result, the following hypotheses will be tested in this study:

1. Organizational commitment is influenced by work experience, education, supervisor-employee relationships, perceived leadership style, and job satisfaction.
2. Job performance is influenced by a variety of factors, including work experience, education, supervisor-

employee relationships, perceived leadership style, and job happiness.

Methodology Design and Analysis of Research :

Because no variables are controlled, the study is based on a cross-sectional survey research methodology. Work experience, education, perceived leadership style, supervisor-subordinate interaction, and job satisfaction are predictor variables, while organizational commitment and job performance are criterion variables. Statistical Package for Social Sciences is used to examine the data. The strength of the prediction of demographic and psychological characteristics on the criteria variables of organizational commitment and work performance is tested using stepwise multiple regression analysis.

Participants :-

A total of 123 media personnel from Oyo State, Nigeria, are taking part in this study. Participants' ages range from 20 to 56 years old, with an average of 33.72 years, while their work experience spans 1 to 29 years, with an average of 6.91 years. Sixty-five percent of those who took part were men, while 34 percent were women. Their educational levels ranged from a diploma (44%) to a university degree (56%) for the majority. 45.5 percent of the participants worked as subordinate employees, 39.6 percent as supervisors, and 14.9 percent as management officers. About 45.7 percent of those polled were single, while 54.3 percent were married.

Instrument :-

A structured questionnaire is utilized to obtain pertinent data from the study's participants. Sex, age, educational level, work experience, supervisor-subordinate relationship, leadership style, job satisfaction, organizational commitment, and job performance measures are all included in the questionnaire.

The Margaret Blenkner Research Institute created and revised an 11-item supervisor-subordinate relationship assessment (Noelker & Ejaz, 2001). This metric assesses how often supervisors display effective communication, recognition, and team-building skills. The scale ranges from strongly agree (5) to strongly disagree (1) on a 5-point Likert scale (1). Higher scores indicate that subordinates have a favourable impression of their supervisor, whereas lower scores indicate a negative impression of the supervisor-employee relationship.

It has a 0.90 alpha coefficient of internal consistency. In terms of validity, better supervisory relationships are associated with higher levels of positive contact with coworkers ($r = .21$, $p < .001$). The scale produced a reliability alpha coefficient of 0.74 in this investigation.

Organizational commitment is measured using the organizational commitment scale (Mowday, Steers, & Porter, 1979), which consists of 15 items and is based on a 5-point Likert scale answer ranging from strongly agree (5) to strongly disagree (1). It has both negatively and positively written items, with negative statements being rated negatively and positively worded statements being scored positively. Previous research (e.g., Mowday et al., 1979) indicated that the scale's psychometric properties were good, with internal consistency ranging from 0.80 to 0.90. In the current investigation, the 15 items in the scale achieved a reliability alpha coefficient of 0.65.

Five transformational leadership elements, three transactional leadership factors, and one laissez-faire leadership component compose the Multifactor Leadership Questionnaire (MLQ - Form 5X) (Bass, 1998; Bass & Avolio, 1994). The 36-item nine leadership variables are used to evaluate three leadership outcomes (Avolio, Bass, & Jung, 1999). Transformational leaders are proactive in their approach, raising follower awareness of

transcendent communal interests and assisting followers in achieving remarkable goals. The 5-factor of idealized influence (attributed), idealized influence (behaviour), inspirational motivation, intellectual stimulation, and individualized consideration are loaded on the 20-item evaluating transformational leadership style.

Setting targets and monitoring and regulating outcomes are typical representations of transactional leadership, which is an exchange process, based on the fulfillment of contractual responsibilities. With a 12-item measure, transactional leadership is weighted on three factors: contingent reward, management-by-exception (active), and management-by-exception (passive). Laissez-faire leadership refers to the absence of a leadership transaction in which the leader avoids making decisions, abdicates responsibility, and does not exercise authority. It is the most passive and ineffectual kind of leadership and it is tested using a four-item scale. These things were scored on a 5-point Likert scale, with 1 denoting not at all, 2 denoting occasionally, 3 denoting occasionally, 4 denoting pretty regularly, and 5 denoting frequently, if not usually.

Participants' total job happiness is measured using a 10-item job satisfaction scale (Macdonald & MacIntyre, 1997). It has a reliability alpha coefficient of 0.77, whereas the reliability alpha coefficient in the current study is 0.64. The scale spans from strongly disagree (1) to strongly agree (5) on the Likert-type scale (5). According to the scoring process, a high score indicates high job satisfaction while a low score indicates low job satisfaction.

The 10-item job performance scale developed by Wright, Kackmar, McMahan, and Deleeuw (1995) is used as a self-report measure. It is formatted in Likert degrees of response ranging from strongly agree (5) to strongly disagree (1). High scores on this scale indicate a higher level of job performance, while lower numbers indicate a lower degree of job performance. Previous research have validated the scale's dependability alpha coefficient (Wright, et al., 1995). The reliability alpha coefficients for the 10-item scale in this study are 0.82.

Procedure :-

Before administering questionnaires, official consent from the university ethical committee and the management of the newspaper paper organizations is requested. The organization's Human Resource Section supports in the distribution and collection of questionnaires. In addition, the participants' informed consent is asked, and only those who sign the consent form are allowed to participate in the study. One hundred and eighty copies of the questionnaire were retrieved from the 300 distributed to the employees, while the rest were either invalidated due to improper responses or were not retrievable. However, 123 surveys were completed correctly, and the data was analyzed after collation, scoring, and coding.

Results :-

The supervisor-subordinate relationship is positively connected with organizational commitment ($r = .44$, $p.01$) and work performance ($r = .28$, $p.01$), according to Table 1. Work satisfaction also has a positive relationship with organizational commitment ($r = .39$, $p.01$) and job performance ($r = .20$, $p.05$). Transformational leadership style has a good relationship with transactional leadership style ($r = .71$, $p.01$) and a negative relationship with laissez-faire leadership style ($r = -.20$, $p.05$) and job performance ($r = -.29$, $p.01$). Transactional leadership style, on the other hand, has a positive correlation with laissez-faire leadership style ($r = .22$, $p.01$), as well as a negative correlation with work performance ($r = -.25$, $p.01$).

Table 1. Mean, Standard deviation and relationship between supervisor-subordinate, job satisfaction, leadership styles, organizational commitment and job performance

	Mean	SD	N	SuR	JS	Transf	Transac	Lfaire	Commit	JPerf
SuR	25.48	4.291	123	1	-.02	-.03	-.09	-.00	.44**	.28**
JS	11.90	3.325	123		1	.04	.13	-.14	.39**	.20*
Transf	67.37	13.976	123			1	.71**	-.20*	.09	-.29**
Transac	30.11	6.840	123				1	.22**	.12	-.25**
Lfaire	6.70	2.473	123					1	.11	-.04
Commit	37.33	5.066	123						1	.05
JPerf	18.39	3.117	123							1

** = $p < 0.01$ level; * = $p < 0.05$ level.

Note: SuR = supervisor-subordinate relationship; JS = job satisfaction; Transf = transformational leadership style; Transac = transactional leadership style; Lfaire = laissez-faire leadership styles; Commit = organizational commitment; JPerf = job performance.

Education, work experience, supervisor-subordinate relationship, job satisfaction, transformational, transactional, and laissez-faire leadership styles are input as predictors, and organizational commitment is entered as an outcome variable in a stepwise regression analysis. Job satisfaction ($=.44$, $p.001$) is the most prominent positive predictor of organizational commitment, accounting for 19.5 percent of the variance in explanation, $F(1, 69) = 16.68$, $p.001$.

Step 2 reveals that supervisor-subordinate relationship is the second most important predictor of organizational commitment, with the predictors accounting for 36.6 percent of the variance, $F(2, 68) = 19.59$, $p.001$, indicating that adding supervisor-subordinate relationship increased organizational commitment by 17.1 percent. Job satisfaction ($=.43$, $p.001$) and supervisor-subordinate relationship ($=.41$, $p.001$) have a considerable impact on organizational commitment, according to the results.

Step 3 shows that laissez-faire leadership style is the least important predictor of organizational commitment, with the variables explaining 49.7% of the variation, $F(3, 67) = 22.11$, $p.001$, and laissez-faire leadership style increasing organizational commitment by 13.2%. Job satisfaction ($=.53$, $p.001$), supervisor-subordinate connection ($=.41$, $p.001$), and laissez-faire leadership style ($=.38$, $p.001$) all had a substantial positive effect on organizational commitment, according to the full results.

Table 2. Stepwise regression analysis showing the effect of predictor variables on organizational commitment

Predictor	ΔR^2	B
Step 1	.20	
Job satisfaction		.44***
Step 2	.17	
Job satisfaction		.43***
Supervisor-subordinate relationship		.41***
Step 3	.13	
Job satisfaction		.53***
Supervisor-subordinate		.41***
Laissez-faire leadership styles		.38***

Stepwise multiple regression analysis is used to evaluate hypothesis two, which asserts that education, work experience, supervisor-employee connection, leadership style (transformation, transactional, and laissez-faire), and job satisfaction independently and collectively predict job performance. Table 3 shows the final result. Working experience ($= -.46$, $p.001$) is the most clear negative predictor of job performance, providing 21.4 percent variation, $F(1, 69) = 18.83$, $p.001$, according to Step 1.

Table 3. Stepwise regression analysis showing the effect of predictor variables on job performance

Predictor	ΔR^2	B
Step 1	.21	
Work experience		-.46***
Step 2	.09	
Work experience		-.54***
Education		.31**
Step 3	.05	
Work experience		-.51***
Education		.31**
Transformational leadership styles		-.22*

Step 2 finds that education is the second most important predictor of job performance, accounting for 30.2 percent of the variance explained by the predictors ($F(2, 68) = 14.75, p.001$), and that adding education to the equation increased job performance variance by 8.8 percent. Working experience ($= -.54, p.001$) is a substantial negative predictor, whereas education ($= .31, p.01$) has a significant beneficial effect on job performance.

Step 3 shows that transformational leadership style is the least important predictor of job performance, with the predictors accounting for 34.8 percent of the variation, $F(3, 67) = 11.92, p.001$. The adoption of a transformative leadership style increased job performance variance by 4.6 percent, according to the findings. Working experience ($= -.51, p.001$) and transformational leadership style ($= -.22, p.05$) are both substantial negative predictors of job performance, whereas education ($= .31, p.01$) has a significant favourable effect. Working experience is the strongest explanatory variable for job success, according to this finding.

Discussions :-

According to the data, the most common explanatory variables for organizational commitment and job performance are job satisfaction and work experience, respectively. It also shows that different leadership styles have an impact on work outcomes. That instance, for organizational commitment, a laissez-faire leadership style is used, whereas for job performance, a transformational leadership style is used.

Job happiness, supervisor-subordinate relationships, and laissez-faire leadership style all had a substantial impact on organizational commitment, with job satisfaction having the greatest impact compared to the other exogenous variables. First, there is evidence that job satisfaction can be predicted, as evidenced by Spector's (2000) study, which found a link between job satisfaction and employment outcomes. Also, according to Nystrom (1990), employees who see their line supervisors' and their own connection as positive have a higher level of organizational commitment than those who do not. The current findings are consistent with previous research, which suggests that organizational commitment is influenced by perceived leadership (Dale & Fox, 2008). Despite the findings of Bycio, et al (1995) and Podsakoff, et al (1996), which found transformational leadership style to lead to better organizational commitment, the current study highlighted laissez-faire leadership style as a predictor of organizational commitment. Nonetheless, this finding supports Wang, et al. (2005) findings that leadership has a significant impact on work outcomes such as dedication.

According to researchers, the relationship between work satisfaction and organizational commitment is either weak or non-existent (Fatokun, 2007; Ogunyinka, 2007). Work happiness has a considerable influence on organizational commitment, according to the current study, which supports Lok and Crawford (2001) and McNeese-

Smith (2001) findings that reveal a positive association between job satisfaction and organizational commitment. Work experience, education, supervisor-employee connection, perceived leadership style, and job satisfaction all have a major impact on job performance, but other exogenous characteristics are not. This is in contrast to the impact of the supervisor-employee relationship on job performance, which was reported by (Linden, et al., 1993). It's also interesting that, according to past research, perceived leadership style had no effect on work performance (Bass & Avolio, 1993).

Transformational leadership was found to have a stronger association with contextual performance than task performance in a meta-analytic analysis, as well as being favourably associated to team and organizational performance (Wang, et al., 2011). Despite the fact that education and work experience did not have a substantial joint impact on job performance, the findings demonstrated that only work experience had a meaningful impact. This is in direct opposition to what has been reported in the literature (Palakurthi & Parks, 2000; Igbaria & Shayo, 2007; Shaiful, et al., 2009). McBey and Karakowsky (2001), for example, discovered that there is a strong chance of a causal association between educational attainment and job success. According to Ariss and Timmins (1989), education has a small impact on work performance, with the lower the education level; the less likely people are to do well at work.

Recommendations and Conclusion :-

Job satisfaction, supervisor-employee relationships, and laissez-faire leadership style all had a substantial impact on organizational commitment, according to the study. In the absence of leadership, it is suggested that the organization's understudy management develop a programme and continue to engage in activities that will encourage not only job satisfaction but also good working relationships between superior and subordinates, as these contributed more to organizational commitment. This can be accomplished through employee development and training that takes into account their demands.

The study also found that the negative impact of work experience and transformational leadership on job performance should be cause for concern, indicating that management may have placed a greater emphasis on education. As a result, organizations should pay more attention to their employees' attitudes and behaviours, as well as their leadership style, in order to create a pleasant experience for all categories of employees, regardless of whether they are highly educated or not, as many experienced workers may not be highly educated. Managers may also require additional leadership training, as this will enable the firm to focus more on job performance for its employees. This discovery has ramifications for employee retention and reward strategies. As a result, managers should make an effort to communicate with all members of the organization, regardless of their demographic profiles. This can help them become more invested in the organization. To foster a culture of high performance and commitment, top workers should be recognized and compensated appropriately.

It was discovered that education and work experience had a considerable impact on job performance on their own. This finding shows that demographic factors play a role in the job performance of employees in newspaper companies. These factors must be taken into account throughout staff training, performance management, and recruitment. Aligning employees' personal needs with those of the company can aid in the creation of a committed workforce and a performance-driven system. Finally, the study suggests that management invest more in improving

their managerial capacity, as this will improve employee retention.

Limitations and Recommendations :-

Certain difficulties hampered the researchers, which had an impact on the study's final conclusions. One of the most important of these elements was the study's research design, which prevented the researcher from inferring the nature of causality. For example, it is not improbable that the predictor variables not included in the current study will have a major impact on the study's criterion variables. Furthermore, it is impossible to state categorically that changes in the predictor factors produced changes in the criterion variables and not the other way around. This demonstrates that the nature of causation is impossible to discern. Furthermore, using a self-report instrument to assess participants' responses has drawbacks, such as an increase in error method variance, which increases the superficiality of the link between the predictor and criterion variables. To improve on the conclusions of this study, interested researchers may need to use an experimental approach to deduce the nature of causality and have quantitative control over the effect of extraneous variables on the criteria variables. As a result, employing a quasi-experimental research approach will suffice. Self-reporting can be paired with a key informant interview to produce more detailed results.

References :-

1. Ariss, S. S., & Timmins, S. A. (1989): Employee education and job performance: Does education matter? *Public Personnel Management*, 18(1), 1- 9.
2. Arriaga, X. B., & Agnew, C. R. (2001). Being committed: Affective, cognitive, and conative components of relationship commitment. *Personality and Social Psychology Bulletin*, 27, 1190-1203.
3. Avolio, B. J., Bass, B. M., & Jung, D. I. (1999). Re-examining the components of transformational and transactional leadership using the multifactor leadership questionnaire. *Journal of Occupational and Organizational Psychology*, 72, 441-462.
4. Bass, B. M. (1998). *Transformational leadership: Industry, military, and educational impact*. Mahwah, NJ: Erlbaum.
5. Bass, B. M., & Avolio, B. J. (1993). Transformational leadership: A response to critiques. In M. M. Chemers, & R. Ayman, (Eds.), *Leadership theory and Research: Perspectives and directions* (pp. 49-80). San Diego, CA: Academic Press.
6. Bass, B. M., & Avolio, B. J. (1994). *Improving organizational effectiveness through transformational leadership*. Thousand Oaks, CA: Sage.
7. Becker, H. S. (1960). Notes on the concept of commitment. *American Journal of Sociology*, 66, 32-42.
8. Berta, D. (2005). Put on a happy face: High morale can lift productivity. *Nation's Restaurant News*, 39(20), 8-10.
9. Blau, P. M. (1983). *Exchange and power in social life*. New York: John Wiley.
10. Borman, W. C., & Motowidlo, S. J. (1993). Expanding the criterion domain to include elements of contextual performance. In N. Schmitt, & W. Borman, (Eds.), *Personnel selection in organizations*, (pp. 71-98). New York: Jossey-Bass.

11. Brody, D. C., Demarco, C., & Lovrich, N. P. (2002). Community policing and job satisfaction: Evidence of positive workforce effects from a multijurisdictional comparison in Washington State. *Police Quarterly*, 5, 181-205.
12. Bycio, P., Hackett, R. D., & Allen, J. S. (1995). Further assessments of Bass's (1985) conceptualization of transactional and transformational leadership. *Journal of Applied Psychology*, 80, 468-478.
13. Camp, S. D. (1994). Assessing the effects of organizational commitment and job satisfaction on turnover: An event history approach. *The Prison Journal*, 74(3), 279-305.
14. Connelly, M. S., Gilbert, J. A., Zaccaro, S. J., Threlfall, K. V., Marks, M. A., & Mumford, M. D. (2000). Exploring the relationship of leadership skills and knowledge to leader performance. *The Leadership Quarterly*, 1, 65-86.
15. Cropanzano, R., & Mitchell, M. S. (2005). Social exchange theory: An interdisciplinary review. *Journal of Management*, 31, 874- 900.
16. Dale, J., & Fox, M. (2008). Leadership style and organizational commitment: Mediating effect of role stress. *Journal of Managerial Issues*, 20(1), 109-130.
17. DeRue, D. S., Nahrgang, J. D., Wellman, N., & Humphrey, S. E. (2011). Trait and behavioural theories of leadership: An integration and meta-analytic test of their relative validity. *Personnel Psychology*, 64(1), 7-52.
18. Dvir, T., Eden, D., Avolio, B., & Shamir, B. (2002). Impact of transformational leadership on follower development and performance: A field experiment. *Academy of Management Journal*, 45, 735-744.
19. Fatokun, A. A. (2007). Influence of job satisfaction and organizational commitment on turnover intention among federal civil servants in Ogun State, Nigeria. Unpublished MMP Thesis, University of Ibadan, Nigeria.
20. Fleishman, E. A., Mumford, M. D., Zaccaro, S. J., Levin, K. Y., Korotkin, A. L., & Hein, M. B. (1991). Taxonomic efforts in the description of leader behaviour: A synthesis and functional interpretation. *The Leadership Quarterly*, 2(4), 245-287.
21. Flynn, F. J. (2003). What have you done for me lately? Temporal adjustments to favour evaluations. *Organisational Behaviour and Human Decision Processes*, 91, 38-50.
22. Gebauer, J., & Lowman, D. (2009). Closing the engagement gap: How great companies unlock employee potential for superior results. New York: Portfolio.
23. Howell, J. M., & Avolio, B. J. (1993). Transformational leadership, transactional leadership, locus of control, and support for innovation: Key predictors of consolidated business-unit performance. *Journal of Applied Psychology*, 78, 891-902.
24. Huo, Y. J., Binning, K. R., & Molina, L. E. (2010). Testing an intelligence model of respect: Implication for social engagement and wellbeing. *Personality and Social Psychology Bulletin*, 36, 200- 212.
25. Igbaria, M., & Shayo, C. (2007). Strategies for managing information system and information technology personnel. *Information and Management*, 44(2), 188-195.
26. Islam, T., Khan, S. R., Shafiq, A., & Ahmad, U. N. U (2012). Leadership, citizenship behaviour, performance and organizational commitment: The mediating role of organizational politics. *World Applied Sciences Journal*, 19(11), 1540-1552.
27. John, M. C., & Taylor, W. T (1999). Leadership style, school climate and the institutional commitment of

teachers. *International Forum*, 2(1), 25-57

28. Jones, D. (2005). Are you proud of your job? *USA Today*, May 24, p. B1.
29. Judge, T. A., Thoresen, C. J., Bono, J. E., & Patton, G. K. (2001). The job satisfaction-job performance relationship: A qualitative and quantitative review. *Psychological Bulletin*, 127, 376-407.
30. Lambert, E. G. (2004). The impact of job characteristics on correctional staff members. *The Prison Journal*, 84(2), 208-227.
31. Linden, R. C., Wayne, S. J., & Stilwell, D. (1993). A longitudinal study on the early development of leader-member exchanges. *Journal of Applied Psychology*, 78(4), 662- 674.
32. Linz, S. J. (2002). Job satisfaction among Russian workers. William Davidson Institute Working Paper No. 468. Available at SSRN: <http://ssrn.com/abstract=313641> or DOI: 10.2139/ssrn.313641
33. Lok, P., & Crawford, J. (2001). Antecedents of organizational commitment and the mediating role of job satisfaction. *Journal of Managerial Psychology*, 16, 594-613.
34. Macdonald, S., & MacIntyre, P. (1997). The generic job satisfaction scale: Scale development and its correlates. *Employee Assistance Quarterly*, 13(2), 1-16.
35. Macey, W. H., & Schneider, B. (2008). The meaning of employee engagement. *Industrial and Organizational Psychology*, 1, 3-30.
36. Macey, W. H., Schneider, B., Barbera, K. M., & Young, S. A. (2009). *Employee engagement: Tools for analysis, practice and competitive advantage*. Malden, MA: Wiley-Blackwell.
37. McBey, K., & Karakowsky, L. (2001). Examining sources of influence on employee turnover in the part-time context. *Journal of Career Development International*, 21(3), 136-144
38. McGuire, M. (2003). Is it really so strange? A critical look at the 'network management is different from Hierarchical management' perspective. Presented at the 7th National Public Management Research Conference, Washington, D. C., October 9-11.
39. McMahan, B. (2007). Organizational commitment, relationship commitment and their association with attachment style and locus of control. Unpublished Master of Science Thesis, Georgia Institute of Technology.
40. McNeese-Smith, D. K. (2001). A nursing shortage: Building organizational commitment among nurses. *Journal of Health Care Management*, 46, 173-186.
41. McShane, F., & VonGlinow, S. R. (2000). *Organizational behaviour*, 2nd Ed. McGraw Hill.
42. Meyer, J. P., Allen, (1997). *Commitment in the workplace: Theory, research, and application*. Thousand Oakes, CA: Sage.
43. Morris, J., & Sherman, J. (1981). Generalizability of an organizational commitment model. *Academy of Management Journal*, 24(3), 512.
44. Mowday, R. T., Steers, R. M., & Porter, L. W. (1979). The measurement of organizational commitment. *Journal of Vocational Behaviour*, 14, 224-247.
45. Noelker, L. S., & Harel, Z. (2001). Agency scorecard: Promoting quality of care and quality of life. Symposium conducted at the annual meeting of the Gerontological Society of America, Chicago. November.
46. Nystrom, P. C. (1990). Vertical exchanges and organizational commitments of American business managers. *Group and Organization Studies*, 15(3), 296-312.

47. Ogunyinka, M. (2007). Influence of organizational commitment, job involvement and job satisfaction on job involvement among NDLEA officers. Unpublished Master in LCS Thesis, University of Ibadan, Nigeria.
48. Palakurthi, R. R., & Parks, S. J. (2000). The effect of selected socio-demographic factors on lodging demand in the USA. *International Journal of Contemporary Hospitality Management*, 12(2), 135-142.
49. Piening, E. P., Baluch, A. M., & Salge, T. O. (2013). The relationship between employees' perceptions of human resource systems and organizational performance: Examining mediating mechanisms and temporal dynamics. *Journal of Applied Psychology*, 98, 926-947.
50. Podsakoff, P. M., MacKenzie, S. B., & Bommer, W. H. (1996). Transformational leader behaviours and substitutes for leadership as determinants of employee satisfaction, commitment, trust, and organizational citizenship behaviours. *Journal of Management*, 22(2), 259-298.
51. Robins, S. P. (2003). *Organisational behaviour*. Upper Saddle River, NJ.: Prentice Hall
52. Robins, S. P. (2005). *Organizational behaviour: Concept controversy and application*, 10th Ed. New York: Prentice Hall.
53. Rusbult, C. E. (1980). Commitment and satisfaction in romantic associations: A test of the investment model. *Journal of Experimental Social Psychology*, 16, 172-186.
54. Scandura, T., & Graen, G. B. (1984). Mediating effects of initial leader-member exchange status on the effects of a leadership intervention. *Journal of Applied Psychology*, 69(3), 428-436.
55. Shaiful A., K., Kamaruzaman, J., Hassan, A., Mohamad, I., Kamsol, M. K., & Norhashimah, A. R. (2009). Gender as moderator of the relationship between OCB and turnover intention. *Journal of Asian Social Science*, 5(6), 108-117.
56. Slate, R. N., Wells, T. L., & Johnson, W. W. (2003). Opening the manager's door: State probation officer stress and perceptions of participation in workplace decision-making. *Crime and Delinquency*, 49(4), 519-541.
57. Spector, P. E. (2000). *Industrial and organizational psychology: Research and practice*. New York, NY: John Wiley & Sons.
58. Tewksbury, R., & Higgins, G. E. (2006). Examining the effect of emotional dissonance on work stress and satisfaction with supervisors among correctional staff. *Criminal Justice Policy Review*, 17(3), 290-301
59. Wang, G., Oh, I-S., Courtright, S. H., & Colbert, A. E. (2011). Transformational leadership and performance across criteria and levels: A meta-analytic review of 25 Years of research. *Group and Organization Management*, 36(2), 223-270
60. Wang, H., Law, K. S., Hackett, R. D., Wang, D., & Chen, Z. X. (2005). Leader-member exchange as a mediator of the relationship between transformational leadership and followers' performance and organizational citizenship behaviour. *Academy of Management Journal*, 48, 420-432.
61. Wright, P. M., Kackmar, K. M., McMahan, G. C., & Deleeuw, K. (1995). Cognitive ability and job performance. *Journal of Management*, 21, 1129-1139.
62. Zhao, J., Thurman, Q., & He, N. (1999). Source of job satisfaction among police officers: A test of demographic and work environment models. *Justice Quarterly*, 16, 153-172.



A Study of Online Social Media Networks' Real-World Event Detection Techniques

-Dr. Vishal Pareek, Associate Professor (Computer Science)

-Ms. Manali Pareek (Scholar, Computer Science)

Tantia University, Sri Ganganagar(Raj.), India

ABSTRACT :-

In today's digital environment, online social media networks have become an essential source for identifying real-world events. Because it depicts many circumstances during crises or events and offers vital information about them, event detection has been an important research issue in recent years. There are several methods for identifying and analyzing events that give useful data for applications such as disaster and crisis management, disease outbreak detection, health monitoring, traffic management, and opinion mining. Due to its unique properties such as limited length, unstructured phrases, temporal sensitivity, and vast information, traditional event detection methods established for managing large, formal, and organized texts are not suitable for social media networks. This article offers a study of methods for identifying events in online social media, as well as an overview of the obstacles that can be encountered while dealing with social media posts.

INTRODUCTION :-

The ubiquitous accessibility to the internet is one of the most defining phenomenon of our day that is transforming the world. According to Statista, the widespread usage of social media is expected to increase to approximately 3.02 billion monthly active social media users by 2021, accounting for nearly a third of the world's population. China is predicted to account for about 750 million of these users by 2022, with India accounting for roughly a third of a billion. Blogs, web forums, newswire, photo-sharing platforms, social gaming, and micro blogs are examples of online social media networks. They are an effective way of communication for people who want to communicate and exchange information about a wide range of real-world events as they happen. Researchers are increasingly interested in automatically detecting real-world events, analyzing and describing the happenings of an event such as a pandemic disease outbreak, flood disasters, traffic control monitoring, news events such as electoral polls, fires, and so on, as the number of real-world events that are originated and discussed over social networks grows.

Due to the small size of messages, the significant number of spelling and grammatical errors, and the frequent use of informal and different languages, typical text mining algorithms for event detection on big text streams are not suitable to online social media data streams. This paper explores numerous ways for detecting events in online social media networks and gives an outline of the issues that come with handling social media data.

DIFFICULTIES :-

In comparison to traditional media, detecting occurrences in social media networks necessitates very different methodologies. Data from social media is created in far larger quantities and at a much faster rate than data from traditional media sources. Furthermore, social media posts contain brief, noisy, and unstructured data, necessitating the use of several strategies to handle the information retrieval challenge.

A large amount of data :-

For storing, accessing, and processing large amounts of data in a short amount of time, high-powered computational algorithms and large storage space are required. Every day, for example, the Twitter platform creates millions of tweets. So, in order to handle such enormous amounts of data, event detection algorithms must have some dynamism and a proper execution environment, so that they may continue to function without interruption even when there is a spike in social media posts owing to the occurrence of some bursty events.

The length is short :-

The majority of social media networks limit the number of characters that can be written in a post. Users on Twitter, for example, are limited to posting tweets of no more than 140 characters. Picasa comments are likewise limited to 512 characters, and Windows Live Messenger's user status messages are limited to 128 characters. Short communications comprise fewer phrases or sentences than conventional text, which contains many words and their associated data. They might not provide enough context for an efficient similarity measure, which is the foundation of many text processing approaches.

Phrases that aren't structured :-

Traditional media outlets publish well-structured and edited news releases, whereas social media posts contain a large number of meaningless messages, polluted and informal content, irregular and abbreviated words, a large number of spelling and grammatical errors, improper sentence structures, and mixed languages. Furthermore, the distribution of content quality in social networks is highly variable, ranging from extremely high-quality items to low-quality, sometimes abusive information, significantly affecting the detection algorithms' performance.

Information abounds :-

In general, in addition to the material itself, most social media platforms offer a plethora of information sharing alternatives. Users of the Twitter platform, for example, use the "#" sign, also known as a hashtag, to present themes in a Tweet; an image typically has several labels, each of which is distinguished by distinct regions in the image; and social media users share information with others (link information). Text analytics in social media can evaluate data from several elements such as user, content, link, tag, timestamps, and others, whereas previous textanalytics sources most frequently appear as a user, content>structure.

Data from a variety of sources :-

Unstructured textual data, audio, pictures, video, multivariate records, and spatiotemporal data have all contributed significantly to the massive explosion of diverse data produced by online social media networks. As a result, one of the challenges in real-time event detection is determining which data are truly helpful for the event detection under investigation and which technique must be used to process data from various sources.

Authenticity and info that isn't there :-

Event detection algorithms should account for the unreliability and incompleteness of social media data. For example, location or position data such as longitude and latitude is likely to be incorrect or missing. The level of confidence in information about environmental activity may be lower than predicted. As a result, while identifying events in social media platforms, event detection systems must consider issues such as confidence level, incompleteness, and mistakes.

TRADITIONAL MEDIA EVENT DETECTION :-

The most extensively used strategies for detecting events in traditional media data sources are Document-Pivot and Feature-Pivot. The sections that follow explain how these strategies function.

a) Techniques for Document Pivot :

Document-pivot approaches group documents by detecting events based on their linguistic similarity; these techniques presume that all documents are relevant and that each document contains events of specific interest. Because of the chaotic and unstructured nature of social media, as well as the scale and processing time constraints, document-pivot techniques are an ineffective tool for detecting events in social media.

b) Techniques for Feature-Pivot Analysis :

Most features quickly increase in frequency as the event unfolds, hence Feature-Pivot approaches describe an event as a bursty activity. Feature-pivot techniques, like document-pivot techniques, struggle with noisy data, and as a result, events may not be detected correctly. Furthermore, not all bursts are noteworthy; some may go unnoticed because they occur without explicit burst activity.

ONLINE SOCIAL MEDIA DATA NETWORKS EVENT DETECTION :-

Event detection approaches can be classified as undefined or specified procedures depending on the data availability. Specified event detection is based on prior data or aspects of the event, such as the location, type, time, and a brief description. For detecting a specific occurrence, we can adapt classic information retrieval and extraction approaches.

However, most standard methods are ineffective when we don't know anything about the type of event we're trying to identify. As a result, undefined event detection techniques rely on online data streams' temporal signals. Listening to trends or bursts in data streams, aggregating features with comparable trends, and categorizing events into distinct categories are some of the approaches used to detect undefined events. The strategies for detecting undefined and specified events are described in the subsections below.

a) Detection of a Specific Event

Known or scheduled social events are included in specified event detection. The relevant content or metadata details such as time, venue, location, and performers could be provided partially or completely with the information on these events. This section discusses the many methods for detecting certain occurrences.

Sakaki et al. investigated real-time earthquake detection by developing a classifier based on semantic analysis of tweets and constructing a spatiotemporal model for event detection. Using SVM as a classifier, tweets are automatically categorized based on keyword, statistical, and word context data. Each social media user is treated as a sensor in this article, and tweets are considered sensor information with a timestamp and the user's

geographic position. The probability density function of the exponential distribution, which handles time-series data, was used to detect the event. For detecting the location of tweets, Bayesian filters such as Kalman and particle filters are used.

Lee and Sumiya have developed a geo-social local event recognition system that uses Twitter to track crowd behaviour to locate local festivals. They gathered geo-tagged tweets for the defined region and used the k-means algorithm to divide them into multiple regions-of-interest (ROI) by assessing the acquired information's geographical coordinates. The authors came to the conclusion that an increase in user activity, such as going inside or arriving to a ROI, when combined with an increase in the number of tweets, indicates the presence of local events.

Benson et al. established a structured graphical model in which individual messages are examined, clustered, and each event property is given a canonical value. At the message level, the model uses a conditional random field (CRF) component to retrieve field values such as the artist's name and the event's location. The authors influenced the CRF's judgments to be consistent with canonical record values, resulting in consistency within an event cluster. The authors used a Twitter data stream to summaries the entertainment event record of NYC.com's city calendar division.

Popescu and Pennacchiotti proposed a method for recognizing contentious occurrences in a Twitter stream. The authors proposed a Twitter snapshot perception that includes a target entity, a time period, and a collection of tweets concerning the topic for that time period.

The writers assign a controversy score to each photo before ranking them according to the controversy score. The authors conclude that Hashtags are the most crucial semantic features for detecting the topic of a tweet, and that linguistic, structural, and sentiment variables have a significant impact on controversy detection.

Pohl et al. provided a strategy for recognizing crisis-related events using the social media platforms Flickr and Youtube. Because the authors see geo-referenced data as a critical source of information for crisis management, they developed a two-phase clustering approach for event detection. Term-based centroids are computed in the first phase utilizing geo-referenced data and a Self-Organizing Map (SOM). The assignment of best fitting data points to the estimated centroids is done in the second phase using reassignment and the cosine distance metric.

To detect upcoming events from the social media platform Twitter, Becker et al. used query building methodologies. They filtered tweets about an event using a number of basic query-building algorithms, each of which employs different combinations of the event's context features, such as title, description, venue, time, and location. They chose the final set of high-precision query strategies by having an annotator label the outcomes of each strategy. Authors use co-location approaches and term-frequency analysis to improve memory for locating descriptive event terms and phrases, which are then used to iteratively build new questions.

b) Detection of Unspecified Events

Breaking news, developing events, and general issues that cause a stir among a big number of online social media users are examples of unknown events. This section provides an overview of the many ways used to identify undefined events.

In the social media site Twitter, Phuvipadawat and Murata developed an algorithm for spotting breaking

news. It consists of two modules: story discovery and story development. Tweets are received from the Twitter API using pre-defined search queries in the module story finding, and a new story is produced by grouping messages that are similar. Tf-idf is used to find similarity between messages, with proper noun phrases, hashtags, and usernames given more weight. Each news item is assigned a suitable ranking over a period of time during module story construction. Each news story is ranked using a weighted mix of the number of followers (reliability) and the number of retweeted messages (popularity), along with a time adjustment to maintain the message's freshness.

Chen and Roy proposed leveraging the tags in the user's annotations to do event detection using Flickr photographs. Because each photo does not reflect an event, the authors employ feature-pivot techniques to find event-related tags before recognizing photo events. The method is divided into three sections: The temporal and locational attributes of tags are analyzed in the Event Tag Detection module to detect event-related tags using the Rattenbury Scale-structure Identification technique (SI). To reduce noise, a wavelet transform is applied. By evaluating the distribution patterns in the module Event Generation, the authors were able to discriminate between aperiodic-event-related tags and periodic-event-related tags. Tags connected with events are divided into clusters, with each cluster representing an event containing tags with comparable locational and temporal distribution patterns, as well as photographs with similar associations. In Event Photo Identification, photographs corresponding to the represented event were recovered for each tag cluster using a density-based clustering approach.

Signal processing approaches have been used in several studies to detect events in social networks. Cordeiro described a light-weighted technique that leverages wavelet signal analysis of hashtag occurrences to recognise events in a Twitter data stream. Instead of individual words, hashtags are employed to create wavelet signals. The author discovered that a rapid increase in the number of hashtags is a solid signal of an event taking place at a specific time. As a result, all hashtags were retrieved from the tweets and clustered at 5-minute intervals. Hashtag signals are built over time by counting the number of hashtag mentions in each interval, separating them into different time series, one for each hashtag, and ultimately concatenating all tweets that include the hashtag throughout each time series. Before utilizing the continuous wavelet transformation to provide a time-frequency representation of each signal, adaptive filters are used to remove noise. Peak and local maxima detection were utilised by the author to detect an event inside a specific time frame.

Weng et al. suggested a strategy based on grouping discrete wavelet signals built from individual Twitter stream words. Wavelet transformations are localized in both time and frequency domains, unlike Discrete Frequency Transforms (DFT), which are employed for event detection in traditional media and are only localized in frequency. As a result, they can determine the time and duration of a bursty event inside the signal. For signal synthesis, a time dependent form of document frequency–inverse document frequency (DF-IDF) is utilized, in which DF counts the number of messages that contain a certain word and IDF uses word frequency up to the current time step. The H-measure is then used to apply a sliding window to record the change over time (normalized wavelet entropy). Simple words that measure similarity between two signals as a function of time lag are extracted using signals cross-correlation. The remaining words are then clustered using a graph partitioning technique based on modularity, which divides the graph into sub graphs, each representing an event. Finally, the quantity of words and cross-correlation among the terms associated to an event are used to identify noteworthy events.

Fang et al. have described a method for grouping tweets using a clustering algorithm that considers multi-relations between tweets that are derived using multiple details such as hashtags, textual data, and timestamp.

FINAL REMARKS :-

In recent years, online social media has emerged as a key research venue. Monitoring and analysing the rich and dynamic flow of data generated by social media users can provide useful information in a timely manner that would not be possible with traditional data. In comparison to traditional media, this study outlines the issues that event detection algorithms encounter when processing online social media. It also includes a review of suggested algorithms for spotting events in online social media sites. These strategies are classified according to the type of target event, which might be either vague or specified.

Despite the fact that much research has been done on event detection in social media, there is still a need for an efficient and reliable system that continuously monitors and analyses activities from various social media sources, as well as better support for multiple languages and enhanced summarization and visualization methods.

REFERENCES :-

1. Sakaki, T., Okazaki, M., Matsuo, Y.: Earthquake shakes Twitter users: real-time event detection by social sensors. In: Proceedings of the 19th international conference on World Wide Web. pp. 851–860(2010),
2. Lee, R., Sumiya, K.: Measuring geographical regularities of crowd behaviors for Twitterbased geo-social event detection. Proceedings of the 2nd ACM SIGSPATIAL International Workshop on Location Based Social Networks pp. 1–10 (2010)
3. Benson, E., Haghighi, A., Barzilay, R.: Event Discovery in Social Media Feeds. Artificial Intelligence 3(2-3), 389–398 (2011)
4. Popescu, A.m., Pennacchiotti, M.: Detecting controversial events from twitter. In: Proceedings of the 19th ACM international conference on Information and knowledge management - CIKM '10. p. 1873. CIKM '10, ACM Press, New York, New York, USA (2010),
5. Pohl, D., Bouchachia, A., Hellwagner, H.: Automatic identification of crisis-related subevents using clustering. In: Proceedings - 2012 11th International Conference on Machine Learning and Applications, ICMLA 2012. vol. 2, pp. 333–338 (2012)
6. Becker, H., Chen, F., Iter, D.: Automatic identification and presentation of Twitter content for planned events. Proceedings of the Fifth . . . pp. 655–656 (2011),
7. Phuvipadawat, S., Murata, T.: Breaking News Detection and Tracking in Twitter. In: 2010 IEEE/WIC/ACM International Conference on Web Intelligence and Intelligent Agent Technology. WI-IAT '10, vol. 3, pp. 120–123. (2010)
8. Chen, L., Roy, a.: Event detection from flickr data through wavelet-based spatial analysis. Proceedings of the 18th ACM conference on Information and knowledge management pp. 523–532 (2009),
9. Cordeiro, M.: Twitter event detection: combining wavelet analysis and topic inference summarization. In: the Doctoral Symposium on Informatics Engineering - DSIE'12 (2012)
10. Weng, J., Yao, Y., Leonardi, E., Lee, F., Lee, B.s.: Event Detection in Twitter. Development (98), 401–408 (2011)
11. Fang, Y., Zhang, H., Ye, Y., Li, X. Detecting hot topics from Twitter: A multiview approach, Journal of Information Science, vol. 40, no. 5, pp. 578-593, 2014.



Using Educational Data Mining to Predict Student Achievement

-Dr. Vishal Pareek, Associate Professor(Computer Science),

-Ms.Sarita Juneja (Scholar, Computer Science),

Tantia University, Sri Ganganagar(Raj.), India

Abstract :-

With the rapid advancement of digital technology and the creation of virtual learning centers that provide students with online courses and degrees, E-Learning will play an increasingly important role in the future as a classroom teaching tool and a self-study platform for skill development. This research focuses on identifying key aspects of e-learning for the development of job-specific abilities. Multiple regression analysis was carried out step by step. The findings reveal that, among other things, flexibility in E-learning is the most important aspect for acquiring job-specific abilities from the student's perspective.

1. Provide an overview :-

India's current educational infrastructure is insufficient to handle the country's future problems. The Indian government's Digital India plan will increase Internet usage. This will aid the education industry in offering quality education to a larger, underserved population, and it will be a boon for learners to have access to excellent education in order to train and re-skill themselves for current and future market jobs. According to a prior report, India's E-learning market is predicted to develop twice as fast as the global average, at a compounded annual rate of 17.4 percent from 2013 to 2018. Despite the fact that India has more than half of its population under the age of 25, the country will confront a shortage of 250 million trained workers by 2022 due to a lack of education infrastructure. In this context, e-learning may play a critical role in bridging the skills gap and assisting companies in reducing the stress and cost of training.

It is critical for E-learning educators to realize that there is a need to change learners' attitudes about learning; they must be intrinsically driven to study, and to do so, educators must raise awareness and establish an understanding of the importance of employability skills among them. As educators, we must understand how to engage students, impart knowledge, develop applicable skills, and prepare them for work.

This paper is primarily concerned with identifying the various elements that inspire students to use e-learning to obtain job-related abilities. This study's findings may be useful to educators as they build course modules and delivery strategies.

2. Review of the Literature

2.1 E-learning

E-learning has recently proven to be quite effective, and there are numerous e-learning alternatives available (Hylton, Levy, & Dringus, 2016; Koohang, Paliszkievicz, Nord, & Ramim, 2014). E-learning aids in the education and training of people all over the world on a variety of topics, ranging from specific educational programmes to general interests (Koohang & Paliszkievicz, 2013; Keh, Wang, Wai, Huang, Hui, & Wu, 2008). E-learning systems are becoming a vital platform for educational institutions, organisations, and lifelong learning in general (Beaudoin, Kurtz, & Eden, 2009; Levy & Ramim, 2015).

2.2 Education and Training

Skills, according to Boyatzis and Kolb (1991), are a mix of ability, knowledge, and experience that enables an individual to improve his or her performance. Individuals' abilities to succeed in their daily activities, whether at job, in their hobbies, or in their educational pursuits, are based on their skills. It has been noted that learning and improving abilities is highly significant from a young age to maturity since it allows individuals to be competent enough in what they do (Fletcher, & Wolfe, 2016). According to Levy and Ramim (2015), skills are essential for success in any type of employment or human growth, and they are a vital aspect of e-learning courses.

2.3 Skills for Employability

Employability refers to a person's ability to find work that is acceptable for his or her educational level (Dearing, 1997). An individual's employability is determined by his or her assets, which include knowledge, skills, and attitudes; how these assets are used and deployed; and how they are presented to potential employers, as well as the context in which the individual works (for example, labour market and personal circumstances) (Hillage and Pollard, 1998). The phrase "employability" refers to a collection of accomplishments that include skills, knowledge, and personal characteristics that enable an individual to succeed in his or her chosen profession and benefit himself, the workforce, the community, and the economy (Yorke and Knight, 2004). Though it's difficult to define, employability skills are personal skills like self-management, problem-solving, and people skills that are supported by functional competencies like traditional literacy, numeracy, and effective use of Information and Communication Technologies, according to the UK Commission for Employment and Skills.

Lacking employability skills may put you at risk of losing your job, and progressing at work will be tough. Individuals, companies, the economy, and society as a whole are all concerned about poor employment skills.

3. The Study's Justification :-

From the preceding literature review, it is clear that more research is being done on E-importance learning's and benefits for learners, but there is little research being done to identify the factors that motivate students in the 25-year-old age group to adopt E-learning as an effective means of developing job-specific skills.

It is critical for educators to comprehend learners' attitudes toward E-learning as well as the elements that influence their attitudes. This will assist the company in making their programme more cost-effective and efficient. Thus, the study's particular aims are to investigate several aspects of e-learning that are related to employability skills, as well as to identify the most important aspect of e-learning that aids in the development of job-specific abilities.

4. Research Methodology :-

The current research is a mix of exploratory and causal research. Data was gathered from both primary and secondary sources. Secondary data was gathered from published sources, whilst primary data was gathered from respondents aged 18 to 25 years old who attended B schools in Delhi/NCR, India. 500 respondents were addressed using simple random sampling for data collection; however, 350 completed forms were obtained, of which only 337 were judged to be fit and considered for the study. For primary data collection, a pre-tested structured questionnaire with 21 statements on a 5-point Likert Scale was selected. The questionnaire includes items to assess the respondent's perceptions of several aspects of e-learning for employability skills, as well as to investigate the response to a dependent variable, namely the development of job-specific skills. An exploratory factor analysis was used to determine the various e-learning components that influence employability skills.

5. Results and Analysis

The dependability of the set of questions was investigated using SPSS 16, and the value of Cronbach's alpha was determined to be 0.954, which is regarded good (Nunnally & Bernstein, 1994).

The mean score of the scale 21 set of questions on the questionnaire was determined to be 78.673, with a

Table 1: Reliability Analysis & Descriptive Statistics of items

Cronbach's Alpha	Cronbach's Alpha Based on Standardized Items	N of Items	Mean	Std. Deviation
0.954	0.955	21	78.673	14.3696

From 337 replies on a 5-point scale, exploratory factor analysis was used to uncover different variables of e-learning that contribute to employability abilities. The Bartlett test of sphericity was used to determine the correlations between the variables and to assess the correlation matrix's overall significance. The KMO (Kaiser-Mayer-Olkin) value was discovered to be 0.930, which appears to be extremely good.

Table 2: KMO & Bartlett's Test

Kaiser-Meyer-Olkin Measure of Sampling Adequacy.		.930
Bartlett's Test of Sphericity		
	Approx. Chi-Square	5.454
df		210

Principal component analysis was performed to extract probable factors from 21 statements for factor analysis.

Factors with more than one Eigen value were considered important using Varimax orthogonal rotation.

Table 3: Factor Matrix

S. No.	Items	Factor Loadings	% Variance Explained	Factor	Alpha
1	E-learning is useful even at distant places and in remote areas	0.761	52.708	Easy to use & Occupation oriented	0.938
2	E-learning helps in Professional development & continued education	0.692			
3	E-learning helps in Family and other social obligation	0.619			
4	E-learning educates large number of people	0.770			
5	E-learning facilitates Interactive Collaboration	0.770			
6	Through E-learning it is easy to work in small groups.	0.620			
7	E learning develops reflective & critical thinking	0.749			
8	For using E- learning awareness training is required	0.579			
9	E-learning is relevant for many occupations in a different sectors	0.727			
10	E- learning might require additional training to be used in a new job and/or work environment	0.587			
11	E-learning is computer and network enabled transfer of skills and knowledge.	0.689	7.521	Transfer of skills & Knowledge	0.900
12	E- learning delivers a broad array of solutions and enhances knowledge and performance	0.724			
13	E -learning helps me to do my assessment efficiently and effectively.	0.775			
14	E-learning provides me the knowledge as required	0.753			
15	Through E- learning I can interact with others using various instructional formats like text, pictures, sound, and video.	0.738			
16	I can interact with others through instant message exchange and video conferencing.	0.542			
17	Overall E-learning system is useful	0.606			
18	E-learning is easy to use.	0.618	6.449	Flexibility	0.766
19	E- learning Provides more flexibility	0.832			
20	To implement E- learning careful planning is required	0.713			

Only the questions with a factor loading of 0.5 or higher were evaluated when assessing the elements of e-learning for employability skills from a 21-item questionnaire, and three variables were identified: easy to use and occupation centred, transfer of skills and information, and flexibility.

Factor 1 : It's simple to use and geared at a specific occupation.

The most important component, with a variance of 52.70 percent, indicates that respondents believe e-learning is very effective in remote locations. Professional development and ongoing education, as well as family and other social duties, are all aided by it. E-learning, they believe, educate a huge number of people and allows Interactive Collaboration, which aids in the development of reflective and critical thinking. They believe that E-Learning is relevant for vocations in various industries where learners can engage with others through instant message exchange and video conferencing, but that it may require further training to be used in a new job and work setting.

Factor 2 : Knowledge and skill transfer

Table 3 shows that the next most important factor, Transfer of Skills and Knowledge, accounts for 7.521 percent of the variance, and that respondents believe that E-learning is computer and network enabled transfer of skills and knowledge; it provides a wide range of solutions and improves knowledge and performance. According

to the findings, it also aids students in rapidly and successfully completing assessments and providing necessary knowledge.

Flexibility is the third factor to consider.

Respondents are inspired to utilize E-learning because it is simple to use and provides greater flexibility, according to the third component, which has a variance of 6.449 percent. According to the findings, it is critical for educators to plan carefully in order to ensure effective implementation.

Regression analysis with multiple variables :

Three extracted elements of e-learning for employability skills were used as independent factors, and the growth of work specific abilities was used as a dependent factor, in a stepwise multiple regression. The above-mentioned test was used to determine the importance of e-learning in the development of job-specific abilities (Table 4 & 5).

Table 4: Model Summary

Model	R	R Square	Adjusted R Square	F Change	Sig. F Change
1	0.722	.521	.520	365.988	.000
2	0.763	.581	.579	48.092	.000

Model 1: Predictors (Constant), Easy to use and Occupational oriented
 Model 2: Predictors (Constant), Easy to use and Occupational oriented , Flexibility

Two models developed during the study, and model no. 2 containing predictors such as 'Easy to use & occupational orientated' and 'Flexibility' was shown to be the better one, accounting for 57.9% of the development of job specific abilities.

Table 5: Coefficient (Stepwise multiple regression)

	Unstandardized coefficient		standardized coefficient	t	Sig.
	B	Std. Error			
Constant	-.063	.187		-.335	.738
Easy to use & Occupational oriented	.065	.006	.515	11.110	.000
Flexibility	.134	.019	.321	6.935	.000

Dependent Variable: Development of job specific skills

The b-coefficients for factors 1 and 3 are noteworthy in the coefficient table. Because all of the predictors in the current study use the same Likert scales, the b coefficient should be used instead of the Beta coefficient.

Factor 3, e-learning flexibility, is the greatest predictor of job specific skill improvement among the three variables.

6. Deliberation

Several studies have been undertaken to demonstrate the numerous aspects that contribute to student perseverance and success in e-learning courses (Bawa, 2016; Deschacht, & Goeman, 2015; Geri, 2012; Levy, 2007; Perry et al., 2008, Willging, & Johnson, 2009). Mason (2001) found that the lack of time, rather than the vast distance, is the most common reason for student withdrawal from courses. The current study further reveals that, from the perspective of students, e-flexibility learning's is the most important aspect in building job-specific

abilities. Persistence in e-learning courses is hampered by a lack of time and a vast distance; this is a significant issue because some students struggle to keep up with course activities (Gafni & Geri, 2010; Levy & Ramim, 2012).

The report also reveals that students prefer e-learning since it is simple to use and occupation-oriented, preparing them for certain jobs. Furthermore, it appears that one of the characteristics of e-learning that consumers consider is the transfer of skills and knowledge. However, the researchers believe that a student's level of information and communication technology skills has a substantial impact on their willingness to participate in e-learning activities (Fredericksen et al, 2000; Hara & Kling, 1999). As a result, educators in the e-learning industry must ensure that modules for e-learning are simple to use and career-oriented, as well as flexible.

7. Final Thoughts

According to the findings of the study, factors such as ease of use, occupation-oriented content, transfer of skills and knowledge, and learning flexibility impact students' decision to take an e-learning course. These characteristics help learners gain job-specific skills, and educators must keep the above-mentioned elements in mind while planning and developing e-learning activities and modules.

Because the study is exploratory in nature and the data was obtained from students aged 18 to 25 in Delhi/NCR with only 337 valid responses, the findings cannot be generalized to a larger population. For improved outcomes, more research with more inputs can be investigated.

References :-

1. Bawa P; Retention in online courses exploring issues and solutions—A literature review; S. Open, 2016, 6, 1-11.
2. Beaudoin, M. F., G. Kurtz, & S. Eden; Experiences and opinions of e-learners: What works, what are the challenges, and what competencies ensure successful online learning. IJELL, 2009, 5, 275-298.
3. Boyatzis, R.E., D.A. Kolb; Assessing individuality in learning: The learning skills profile. EP, 1991; 11(3), 279-295.
4. Dearing, R.; Higher education in the learning society, Report of the National Committee of Inquiry into Higher Education. Norwich: HMSO. 1997.
5. Deschacht, N., K. Goeman; The effect of blended learning on course persistence and performance of adult learners: A difference-indifferences analysis. CE, 2015, 87, 83-89.
6. Fletcher, J. M., B. Wolfe; The importance of family income in the formation and evolution of non-cognitive skills in childhood. EER, 2016, 54, 143-154.
7. Gafni, R., N. Geri; Time management: Procrastination tendency in individual and collaborative tasks. IJIKM, 2010 5, 115-125.
8. Geri, N.; The resonance factor: Probing the impact of video on student retention in distance learning. IJELLO, 2012, 8, 1-13.
9. Hylton, K., Y. Levy, L. Dringus; utilizing webcam-based proctoring to deter misconduct in online exams. CE, 2016, 92-93, 53-63.

10. Hillage, J., E. Pollard; Employability: Developing a framework for policy analysis, RB, 1999, 85.
11. Keh, H. C., K.M. Wang, S.S. Wai, J.Y. Huang, L. Hui, J. J. Wu, Distance-learning for advanced military education: Using wargame simulation course as an example. IJDET, 2008, 6(4), 50-61.
12. Koohang, A., J. Paliszkievicz, Knowledge construction in e-learning: An empirical validation of an active learning model. JCIS, 2013, 53(3), 109-114.
13. Koohang, A., J. Paliszkievicz, J. H Nord, & M. Ramim, Advancing a theoretical model for knowledge construction in e-learning, OJAKM, 2014. 2(2), 12-25.
14. Levy, Y., Comparing dropouts and persistence in e-learning courses, CE, 2007, 48, 185-204.
15. Levy, Y., & M. Ramim, A study of online exams procrastination using data analytics techniques, IJELLO, 2012, 8, 97-113.
16. Levy, Y., & M. Ramim, An assessment of competency-based simulations on e-learners' management skills enhancements, IJELL, 2015, 11, 179-190.
17. Mason, R., Time is the New Distance? An Inaugural Lecture, the Open University, Milton Keynes, 14 February, 2001.
18. Nunnally, J. C., & I. H. Bernstein, Psychometric theory (3rd Ed.), Newyork: McGraw-Hill, 1994.
19. Srivastav, P., India's e-learning market second largest after US, Live Mint, May 6, 2015
20. Yorke, M. & P.T. Knight, Embedding employability into the curriculum, Learning and Employability Series, 2004.



Constitutional Aspect of Gender Justice in Terms of Human Rights

-Dr. R.P. Verma

Principal, Seth GL Bihani SD Law PG College, Sri Ganganagar

Abstract :-

Whenever we talk about gender equality, it is directly related to the social and economic status of women. The woman who is the source of power, the basis of society, the creator of the universe, is now socially, economically, and politically backward. No matter what the religion, no matter what the caste, the position of women is almost the same everywhere. They are fighting for their existence, for their rights. It is not because they are weak, it is simply because they have become completely dependent on this system established by man. Today there is a need to make them realize what is the value of their existence. This paper aims to throw light on real status of women in society in spite of her remarkable contribution. To overcome these controversies, there is need of women empowerment.

Key words : gender equality, socially, economically, and politically backward, women empowerment

Introduction :

Equality matters and gender equality matters sincerely. Gender equality can be treated as an interlinked aspect of equity. No religion on the earth or constitutional aspect of a democratic country restricts gender equality. Man and woman are the two sides of the same coin. Both are essential organs of society. One must respect the presence of women. The Holy Prophet (PBUH) expressed His views on gender equality through the Holy Quran,

'O' people be careful of your duty to your Lord
Who created you from a single being and created
its mate of same (kind) and spread from these too
many men and women. (Holy Quran-4:1)

The Holy Prophet declared that all men and women have the same origin. They all are part of the same humanity. They have been awarded the same fundamental rights. All human beings irrespective of their sex, nationality, or race, are equal before the Almighty.

The theme of 'Gender Justice' in hand is still a worldwide burning issue despite millions of researches, conferences, governmental and non-governmental policies. The term 'gender' refers to male and female and is thus similar to the word 'sex'. The word 'gender' refers to social construction. Society includes men and women by their age and status. To maintain equality among these all is gender justice.

The word "Jus" refers to 'to join' or 'fitting.' Thus, justice carries the meaning of cementing and joining up human beings together. In its literal sense, Justice refers to fairness, which is shown in public dealings. It also means 'the fair treatment with people' or 'the quality of being fair or reasonable'.

People always expect a society of justice where no one takes advantage of the shortcoming of others. They want a society without greed and poverty, a society of fraternity where everyone would respect the dignity and worth of human personality. According to Plato, justice and injustice are subject to the rationale of the majority of the people. When an action is supported, it is justified and when it is opposed, it is injustice and that they pay lip service to justice but in the end, turn to injustice against their interests. Thus, the concept of justice may be regarded as dealings with human beings. It produces the notion of equality. It requires that no discrimination should be made among the various members of society.

The word gender, generally, refers to one male or female having social and cultural status in society. The fact of being male or female especially is the outcome of social and cultural differences, not differences in biology. Mahatma Gandhi has said that men and women, under the concept of equality have been honoured with the same dignity.

Article 1 of 'The Universal Declaration of Human Rights, 1948' declares that every person on the earth is born free with equal rights or without any prejudiced discrimination. Thus, to live with dignity is the prime characteristic of every human being. In its specific meaning, social justice is equal to gender justice. Hence, gender justice refers to a legal system where both males and females are treated equally. It is a part of human rights available to all citizens. Every woman is entitled to live with dignity without any fear. It is a global phenomenon. Goetz writes that gender justice may be defined as the absence of inequalities between women and men that makes a woman subject to the authority of men.

In the views of Prof Amartya Sen, it is now clear through the empirical research in recent years that gender inequality exists in most parts of the world, the research does show that India is the only State but most of the countries are facing the problem of gender inequality. This inequality is found in different forms. It is not alike, but a collection of uneven and interlinked problems. There may be different inequalities as mentioned under:

- **Mortality Inequality** : When due to carelessness regarding health care and nutrition, the death rate of women is found higher than men.
- **Natality Inequality** : When society gives priority to the male child over a female child subject to the illogical notion of Vansh-Varidhi.
- **Basic Facility Inequality** : when girls are excluded from schooling and education is considered a right of boys.
- **Special Opportunity Inequality** : when higher and technical education is considered worthless for females and they are made nothing but merely a housemaid. On the other hand, young men are preferred to complete their education with this foolish notion that the man is only to run the family.
- **Professional Inequality** : This happens when the female employees are underestimated while deciding on an important post or promotion.
- **Ownership Inequality** : When females are not considered a successor of a deceased dying intestate.

Their property rights are curtailed.

- **Household Inequality :** This is the worst inequality when women are not permitted to deal with the outer world. They are treated as a prisoner type member of the family. They are not allowed to leave the door without the permission of the male member in the house.

The above-mentioned gender inequalities are not the last ones, the most of the heinous crimes are committed against women. They are robbed, confined, kidnapped, raped, and murdered. The ratio of crimes against women is growing day by day. They are dishonoured not only in domestic homes but also in their workplaces. They are not paid equally; they are forced into unwanted labour. Their property rights, their right to maintenance, right to restitution of conjugal rights, right to divorce, etc. are not equal to men. They are not allowed to participate in politics freely. They seem unfit for holding the post of priests in temples. Their position in literature writings is not too good. Despite various legislations regarding gender justice, it is hard to achieve.

Constitutional Aspect of Gender Justice :-

It is The Preamble of the Constitution that tells us first about the fundamental aspect of gender equality. The framers of the constitution aimed at ensuring equality of status and opportunity through the Preamble. It clearly states that equality should be given to all citizens in terms of status and opportunity. According to the inherent idea behind the words, Equality is the touchstone of the Indian Constitution. The concept of equality becomes useless unless and until the rights are equally enjoyed by all members of the community. The Preamble of the Constitution ensures social, political and economic justice for all citizens of the country. The Preamble denotes social justice which creates an obligation on the State to ensure the abolition of all sorts of inequalities that may result from inequality in wealth, status, class, caste, sex, race, title etc. Economic justice ensures that every person should get his just dues for the labour irrespective of his/her caste, creed, sex, status etc. Political justice ensures that discrimination among men and women in political matters should not be allowed. The provision contains in itself the essence of universal adult suffrage. The Preamble talks about the dignity of an individual and that dignity has been ensured by guarantying equal fundamental rights to all individuals.

The Supreme Court of India held that the Preamble indicates the source of the constitution. It is an introduction to the statute, useful to understand the legislative intent and policy. It is key to the minds of the framers of the constitution.

Part third of the Constitution of India declares certain fundamental rights guarantees gender equality. One of the main provisions of equality is embodied in Article 14, which prohibits any discrimination and considers all are equal before the law.

In this Article, 'equality before the law' is a negative concept that removes the absence of any special privilege in favour of any individual. All are subordinate to the law of the land. They are equal before the law, no one is above the law. It ensures that all persons are equally subject to the ordinary laws of the land. If one violates existing law, shall be punished, without giving any privilege. On the other hand, 'equal protection of laws' is a positive concept, which directs the need for affirmative action. It means that the State has to do something to protect the fundamental rights of the citizen or other persons. The State has to classify the issues first and afterwards, has to prepare a strategy to protect them. For example, all cannot be treated as majors or all cannot be treated as

accused, all cannot be treated the rich or all cannot be treated males only. From the doors of Heaven, all are different. The Almighty has sent one, with full organs and others may be of unsound mind or handicap. Some lose their specification due to unnatural strikes of the time. The difference is natural and thus, equal treatment of similar protection will create inequality. Before applying equality, equity must be considered first. Thus, like should be treated alike. According to Anjali Kant, Article 14 of the Indian Constitution confers on women the equality of status and also protects them against any violation of the principle of equality.

Article 14 treats women as a class and using this Article many enactments have been passed that aim at removing the disabilities attached to women on account of their sex. Thus, positive discrimination in favour of women is not considered a violation of equality, as it is aimed at improving the status of women in society and their existence. Such a beneficial interpretation of Article 14 implies the presence of fairness inherent in the guarantee of equality, which enjoins the State to uphold a law that makes protective discrimination.

The doctrine of equality is a dynamic concept having various facets. It is embodied not only in Article 14 but also in 15-18 of Part III as well as in Articles 38, 39, 39A, 41, 42 and 46 of Part IV of the Indian constitution.

The Supreme Court in *Muthamma v. Union of India* and *Air India v. Nagresh Mirza* struck down discriminatory service conditions requiring female employees to obtain government permission before marriage and denying married and pregnant women the right to be employed.

In *Vishaka v. State of Rajasthan*, the Supreme Court raised attention towards ill-treatment with women at their workplaces and observed that equality in employment can be seriously impaired when women are subjected to gender-specific violence, such as sexual harassment in the workplace. Therefore, the Supreme Court prescribed certain norms taking into account, the definition of 'Human Rights' in Section 2(1)(d) of The Protection of Human Rights Act, 1993. This must be noted that the present civil and penal laws in India do not adequately provide for specific protection of women from sexual harassment in workplaces and that enactment of such legislation will take considerable time, It is required for employers in workplaces as well as other responsible persons or institutions to observe certain guidelines to ensure the prevention of sexual harassment of women. The guidelines are as follows:

1. Duty of the Employer or other responsible persons in workplaces and other institutions.
2. It shall be the duty of the employer or other responsible persons in workplaces or other institutions to prevent or deter the commission of acts of sexual harassment and to provide the procedures for the resolution, settlement or prosecution of acts of sexual harassment by taking all steps required.
3. Sexual harassment includes such unwelcome sexually determined behaviour expressly or impliedly as:
 - i. Body touch or another manner of physical interfere,
 - ii. Demand for sexual relations,
 - iii. Sexual and lewd comments,
 - iv. showing dirty pictures or movies etc.

The situation becomes worst when it happens with a working woman at her workplace. Where she goes to perform her duties but finds herself in a situation of sexual harassment, she feels hopeless, helpless and tortured. It happens in the name of recruitment, it is placed in the name of the promotion, it happens in the name of transfer or it happens in the name of unreasonable support in the field. She is tortured, she is raped or she is sexually abused

in various manners. She needs gender justice against such discriminating behaviour of society.

The apex court cleared its point of view that the right to live with dignity which is a part of the fundamental right under Article 21 cannot be avoided at any cost.

The Parliament, after the Vishakha guidelines, has enacted 'The Sexual Harassment of Women at Workplace (Prevention, Prohibition & Redressal) Act, 2013 (Act no. 14 of 2013), to protect working women against sexual harassment at the workplace. This Act thus protects their right to life and to live with dignity under Article 21 of the Constitution of India and the right to practice any profession or to carry on any occupation, trade or business which includes a right to a safe environment free from sexual harassment.

Article 15 prohibits any kind of discrimination giving someone benefits only on grounds of dharma, race, caste, gender, or birth-place. Article 15(1) denotes that the State cannot behave discriminately with citizens on grounds only of religion, species, gender, birth-place or any of them. In other words, the State is restricted to make any difference between man and woman who are citizens of India, only on the grounds mentioned above. Under 15(2) the word 'No citizen' includes all genders equally and their access to public places like outlets, retail shops, public canteens, hotels and other public places of amusement and utility. Article 15(3) is an advanced form of equality.

In its first instance, it seems discrimination or unequal behaviour against the male citizen in India but due to the weaker position of women and children in society, the State is empowered to make special provisions for women and children. This clause speaks about special provisions for women and children to protect them from the clutches of formal equality. The object of this clause is to impose differential benefits and advantages to women at the cost of burdening men. It is justified as it compensates for early injustice met by women and children at the hands of a male-dominated society. The thought of constitution-makers is *carte blanche* (complete freedom to act as one wishes) to protect women from all types of exploitations and violence.

There are not many specific provisions in the constitution of India regarding safeguards to protect women especially but Article 15(3). This Article empowers governments to establish the National Commission for Women at the centre and state commissions at the state levels to protect the dignity of women.

Art 39-A is a further step towards social security providing the equal opportunity of hearing to promote justice. This is not a provision especially in favour of women but due to their unsecured position depending on the male-dominated society, it is the duty of the state to secure justice by providing free legal aid to this weaker section. Article 51-A (e), which reminds our fundamental duties prescribe that we the people of India shall try to renounce the evils against the women and to protect their dignity. Article 124-A (d) prescribes the appointment of two eminent persons in The National Judicial Commission and out of them one may be a woman.

Conclusion :

Undoubtedly, we have a lot of legislative and judicial safeguards to protect the rights of women but still, the condition of Indian women has not improved. Yes, some normative legislative trends like the Muslim Women (Protection of Rights on Marriage) Act, 2019 will surely change the status of women. We need more iron women like Sarla Mudgal, Shah Bano Begum, and Shayra Bano. We have to create opportunities for women's empowerment instead of just talking.

References :

1. Luther, Martin, Our God Is Marching On! Speech presented outside the State Capitol, 2016
2. The Republic Book II, 375 B.C, Oxford Advanced Learner's Dictionary.
3. Kishwar, Madhu, (1985), Gandhi on Women, Economic and Political Weekly, Vol. 20, No. 40, p-1691.
4. The Universal Declaration of Human 1948, Art :1, “All human beings are born free and equal in dignity and rights. They are endowed with reason and conscience and should act towards one another in a spirit of brotherhood.”
5. Goetz Anne Marie, (2007), Gender Justice, Citizenship and Entitlements, International Development Research Centre & Zubaan, New Delhi, pp 29-30.
6. Sen A, (2001) Many Faces of Gender Inequality, Frontline, Vol-18, Issue -22.
7. WE, THE PEOPLE OF INDIA, having solemnly resolved to constitute India into a SOVEREIGN, SOCIALIST, SECULAR, DEMOCRATIC, REPUBLIC and to secure to all its citizens:
JUSTICE, social, economic and political;
LIBERTY of thought, expression, belief, faith, and worship;
EQUALITY of status and of opportunity; and to promote among them all
FRATERNITY assuring the dignity of the individual and the unity and integrity of the Nation;
IN OUR CONSTITUENT ASSEMBLY this twenty-sixth day of November 1949, do HEREBY ADOPT,
ENACT AND GIVE TO OURSELVES THIS CONSTITUTION.
8. Sajjan Singh v. State of Rajasthan, AIR 1965 SC 845.
9. Article:14-The State shall not deny to any person equality before the law or the equal protection of the laws within the territory of India.
10. Kant Anjali, (1997), Women and the law, pp. 131-2.
11. Ibid.
AIR1979 SCC 260
AIR 1981 SC 1829
AIR 1997 SC 3011
12. The Protection of Human Rights Act, 1993,
Section 2(1)(d)-“Human rights” means the rights relating to life, liberty, equality and dignity of the individual guaranteed by the Constitution or embodied in the International Covenants and enforceable by courts in India.
Art.15(1)-“The State shall not discriminate against any citizen on grounds only of religion, race, caste, sex, place of birth or any of them.”
Art.15 (2)- “No citizen shall, on grounds only of religion, race, caste, sex, place of birth or any of them, be subject to any disability, liability, restriction or condition with regard to—
(a) access to shops, public restaurants, hotels and places of public entertainment; or
(b) the use of wells, tanks, bathing ghats, roads and places of public resort maintained wholly or partly out of State funds or dedicated to the use of the general public.”
Art.15(3)- “Nothing in this article shall prevent the State from making any special provision for women and

children.”

Article 51A-Fundamental duties. —It shall be the duty of every citizen of India— (e) to promote harmony and the spirit of common brotherhood amongst all the people of India transcending religious, linguistic and regional or sectional diversities; to renounce practices derogatory to the dignity of women.

Article 124A-National Judicial Appointments Commission. — (1) There shall be a Commission to be known as the National Judicial Appointments Commission consisting of the following, namely: —(d) two eminent persons to be nominated by the committee consisting of the Prime Minister, the Chief Justice of India and the Leader of Opposition in the House of the People or where there is no such Leader of Opposition, then, the Leader of single largest Opposition Party in the House of the People.

Provided that one of the eminent persons shall be nominated from amongst the persons belonging to the Scheduled Castes, the Scheduled Tribes, other Backward Classes, Minorities or Women.

drpverma2022@gmail.com



Human Right and Human Health International and Constitutional Perspective

-Dr. Shiv Shankar Vyas

-Dr. Malika Parvin

Assistant Professor, Government Law PG College Bikaner

ABSTRACT :

Health is the most precious thing in human life. WHO has defined health as a state of complete physical, mental and social wellbeing and not merely the absence of diseases. Therefore, International Convention on Economic, Social and Cultural rights imposes a duty upon states parties. According to it "The State Parties..recognize the right of everyone to..just and favourable conditions of work which ensure safe and healthy working conditions....the right to..an adequate standard of living...; the enjoyment of the highest attainable standard of physical and mental health. The steps to be taken...to achieve the full realization of this right shall include those necessary for the reduction of...infant mortality and for the healthy development of the child; the improvement of all aspects of environmental and industrial hygiene; the prevention, treatment and control of epidemic, endemic, occupational and other diseases; the creation of condition which would assure to all medical service and medical attention in the event of sickness." Part IV of the Indian Constitution which is Directive Principles of State policy imposed duty on states regarding health. Article 38 of Indian Constitution impose liability on State that states will secure a social order for the promotion of welfare of the people but without public health we cannot achieve it. It means without public health welfare of people is impossible. Article 39 (c) related with workers to protect their health. Article. 41 imposed duty on State to public basically for those who are sick and disable. Article 42 makes provision to protect the health of infant and mother by maternity benefit. Other Articles like Article 47, 49, 39 (e), 41, 42 are also related to health. Not only the states also panchayat, Municipalities liable to improve and protect public health under Article 243 G and 243 W.

Right to health is not a fundamental right in Indian Constitution but the Supreme Court brought the right to health Under the purview of Article 21 in many cases. Such as consumer Education and Research Centre V. Union of India (1995), State of Punjab V. Mohinder Singh Chawla (1997), Permand Katara V. Union of India (1989).

Human health is so important that a welfare state should always endeavours to frame legislative policy for maintenance and protection of public health. participate fully in the social, economic and political processes of human settlements. A welfare state should always endeavours to frame legislative policy for maintenance and protection of public health. It is also notable that most of the people, who become the victims of health hazardous activities, are either so poor or ignorant of law that they hardly approach the courts for remedy and as a result of

that the offences against health are not checked. Therefore Public Interest Petition for maintenance of approved standards for drugs in general and for the banning of import, manufacturing, sale and distribution of injurious drugs is maintainable. A healthy body is the very foundation of all human activities and in a welfare State, it is the obligation of the State to ensure the creation and sustaining of conditions congenial to good health.

Human Right and Human Health International and Constitutional Perspective Universal Declaration of Human Rights declares that "Everyone has the right to a standard of living adequate for....health and well-being of himself and his family, including food, clothing, housing, medical care and the right to security in the event ofsickness, disability.....Motherhood and childhood are entitled to special care and assistance....."

In fact, health is the most precious thing in human life. WHO has defined health as a state of complete physical, mental and social wellbeing and not merely the absence of diseases. Therefore, International Convention on Economic, Social and Cultural rights imposes a duty upon states parties. According to it - "The State Parties.....recognize the right of everyone to....just and favourable conditions of work which ensure..... safe and healthy working conditions.....the right to....an adequate standard of living..... the enjoyment of the highest attainable standard of physical and mental health. The steps to be taken.....to achieve full realization of this right shall include those necessary for.....the reduction ofinfant mortality and for the healthy development of the child; the improvement of all aspects of environmental and industrial hygiene; the prevention, treatment and control of epidemic, endemic, occupational and other diseases; the creation of condition which would assure to all medical service and medical attention in the event of sickness."

India is a party to the international covenant on civil and Political Rights and the International Covenant on Economic, Social and Cultural Rights. Fortunately, the constitution maker imposed this duty on state to ensure social and economic justice. Part IV of the Indian Constitution which is Directive Principles of State imposed duty on states to participate fully in the social, economic and political processes of human settlements. A welfare state should always endeavour to frame legislative policy for maintenance and protection of public health. It is also notable that most of the people, who become the victims of health hazardous activities, are either so poor or ignorant of law that they hardly approach the courts for remedy and as a result of that the offences against health are not checked. Therefore Public Interest Petition for maintenance of approved standards for drugs in general and for the banning of import, manufacturing, sale and distribution of injurious drugs is maintainable. A healthy body is the very foundation of all human activities and in a welfare State, it is the obligation of the State to ensure the creation and sustaining of conditions congenial to good health

Article 38 of Indian Constitution impose liability on State that states will secure a social order for the promotion of welfare of the people but without public health we cannot achieve it. It means without public health welfare of people is impossible. Article 39 (e) related with workers to protect their health. Article 41 imposed duty on State to public assistance basically for those who are sick and disable. Article 42 makes provision to protect the health of infant and mother by maternity benefit.

In the India the Directive Principle of State Policy under the Article 47 considers it the primary duty of the state to improve public health, securing of justice, human condition of works, extension of sickness, old age, disablement and maternity benefits and also contemplated. Further, State's duty includes prohibition of consumption

of intoxicating drinking and drugs are injurious to health. Article 48 A ensures that state shall endeavour to protect and impose the pollution free environment for good health.

Article 47 makes improvement of public health a primary duty of State. Hence, the court should enforce this duty against a defaulting authority on pain of penalty prescribe by law, regardless of the financial resources of such authority. Under Article 47, the State shall regard the raising of the level of nutrition and standard of living of its people and improvement of public health as among its primary duties. None of these lofty ideals can be achieved without controlling pollution inasmuch as our materialistic resources are limited and the claimants are many. Article 39 (e) of the Indian Constitution directs that state shall in particular making its policy towards securing health of workers.

Article 41 provides right to assistance in case of sickness and disablement. It deals with "The state shall within the limits of its economic capacity and development, make effective provisions for securing the right to work, to education and to public assistance in case of unemployment, Old age, sickness and disablement and in other cases of undeserved want". Their implications in relation to health are obvious, Article 42 give the power to State for make provision for securing just and humane conditions of work and for maternity relief. Not only the State also Panchayat, Municipalities liable to improve and protect public health. Article 243 G says "State that the legislature of a state may endow the panchayats with necessary power and authority in relation to matters listed in the eleventh Schedule". The entries in this schedule having direct relevance to health are as follows :

- 11- Drinking
- 23- Health and sanitation including hospitals, primary health centers and dispensaries
- 24- Family welfare
- 25- Women and Child development
- 26- Social welfare including welfare of the handicapped and mentally retarded.

Article 243- W finds place in part IXA of the constitution titled "The Municipalities:

- 5- Water supply for domestic industrial and commercial purpose.
- 6- Public health, sanitation conservancy and solid waste management.
- 9- Safeguarding the interest of weaker sections of society, including the handicapped and mentally retarded.
- 16- Vital statistics including registration of births and deaths
- 17- Regulation of slaughter - houses and tanneries,

Unfortunately, Right to health is not included directly in as a fundamental right in the Indian Constitution. But the Supreme Court has brought the right to health under the preview of Article 21. Article 21 of the constitution guarantees protection of life and personal liberty to every citizen. The Supreme Court has held that the right to live with human dignity, enshrined in Article 21, derives from the directive principles of state policy and therefore includes protection of health". Further, it has also been held that right to health is integral to the right to life and the government has a constitutional obligation to provide health facilities.

In Kirloskar Brothers Ltd. V. Employees State Insurance corporation, the Supreme Court held that right to health is a fundamental right under Article 21 of the constitution of the India.

In a historic judgement in Consumer Education and Research Centre V. Union of India, the apex court of India has held that the right to health and medical care is a fundamental right under Article 21 of the constitution of India. Right to life in Article 21 includes protection of health and strength of a person. The expression 'life' in Article 21 does not connote mere animal existence. It has much wider meaning, which includes right to better standard of living, hygienic conditions in workplace etc. The court further held that the state be it union state Government or an industry, public or private, is enjoined to take all such actions which would promote public health and happiness.

Right to health includes proper medical assistance also. In Permanand Katara V. Union of India, the supreme court held that it is the obligation of all doctors, whether Governmental or private, to extend medical aid and assistance to the injured immediately to preserve life without waiting for legal formalities. It is the obligation of those who are in charge of the public health to preserve life so that the innocent may be protected and the guilty may be punished. No law or State action can intervene to delay the discharge of the paramount obligation of medical profession to protect public health and life.

At last, It may be concluded that Human Health and Quality of life are at the Centre of the effort to develop sustainable human settlement. We commit ourselves to the goals of universal and equal access to the highest attainable standard of physical, mental and environmental health and the equal access of all to primary health care, making particular efforts to rectify inequalities relating to social and economic conditions without distinction as to race, national origin, gender, age or disability. Good health throughout the life-span of every man and woman, good health for every child are fundamental to ensuring that people of all ages are able to participate fully in the social, economic and political processes of human settlements.

A welfare state should always endeavours to frame legislative policy for maintenance and protection of public health. It is also notable that most of the people, who become the victims of health hazardous activities, are either so poor or ignorant of law that they hardly approach the courts for remedy and as a result of that the offences against health are not checked. Therefore Public Interest Petition for maintenance of approved standards for drugs in general and for the banning of import, manufacturing, sale and distribution of injurious drugs is maintainable. A healthy body is the very foundation of all human activities and in a welfare State, it is the obligation of the State to ensure the creation and sustaining of conditions congenial to good health.

References :-

1. Article 25 of UDHR.
2. Preamble to the constitution of the world Health Organisation as adopted by the International Health Conference, Newyork 19-22 June 1946
3. International Covenant on Economic, Social and Cultural Rights, Article 7, 11 and 12
4. Ratlam Municipal Council Vs. Vardichand, AIR 1980 SC 1622
5. Javed Vs. State of Haryana AIR 2003 SC 3057.
6. Bandhua Mukti morcha vs union of India (1984) SC 802.
7. State of Punjab V. Mohinder Singh Chawla, 1997, 2 SCC 83.
8. A.L.R. 1986 S.C. 3261
9. (1995) 3 SCC 42
10. AIR 1989 SC 2039



महिलाओं का मानवाधिकार संरक्षण

-डॉ. संतोष शर्मा

प्राचार्या, श्री सबल महिला शिक्षक प्रशिक्षण, महाविद्यालय बोरुन्दा, जोधपुर

सारांश :-

प्राचीन काल में नारी के संबंध में धारणा थी कि “यत्र नार्यस्तु पुज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता” लेकिन पुरुष प्रधान सामाजिक व्यवस्था के कारण धीरे-धीरे नारी की स्थिति बदलती गई और बदलते – बदलते आधुनिक काल में ऐसी हो गयी, जिसके लिए राष्ट्र कवि श्री मैथिलीशरण गुप्त ने कहा कि –

“अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी।

आंचल में हैं दूध और आंखों में पानी”।।

किन्तु 21वीं सदी में नारी कानून की दृष्टि में अब अबला नहीं सबला हैं। पुरुष जगत् का ध्यान इस तथ्य की ओर आकृष्ट हुआ कि नारी भी विश्व जीवन का उतना ही आवश्यक और महत्वपूर्ण अंग हैं जितना कि पुरुष वह पुरुष की भावना तृप्ति का एक साधन मात्र नहीं हैं बल्कि वह जननी सहचारी और मार्गदर्शिका भी हैं।

आज के समय में मानव अधिकार एक ऐसी सुविधा हैं जिसके बिना हमारा जीवन काफी भयावह और दयनीय हो जायेंगे क्योंकि बिना मानव अधिकारों के हम पर तमाम तरह के अत्याचार किये आ सकते हैं और बिना किसी भय से हमारा शोषण किया जा सकता है वास्तव में मानव अधिकार सिर्फ आज के समय में ही नहीं पूरे मानव सभ्यता के इतिहास में भी काफी आवश्यक रहें हैं भारत में भी प्राचीनकाल में कई सारे गणतांत्रिक राज्यों के नागरिकों को कई विशेष मानव अधिकार प्राप्त थे। आज के समय में अन्तः स्तर पर कैदियों से लेकर युद्धबंदियों तक के मानव अधिकार को तय किया गया है। इन अधिकारों की देख रेख और नियमन कई प्रमुख अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं राष्ट्रीय व राज्य संस्थाओं और संगठनों द्वारा किया जाता है।

यदि मानव अधिकार ना हो तो हमारा जीवन पशुओं से भी बदतर हो जायेगा, इसका प्रत्यक्ष उदाहरण हमें आज के समय में कई तानाशाहों और धार्मिक रूप से संचालित होने वाले देशों में देखने को मिलता है जहाँ सिर्फ अपने विचार व्यक्त कर देने पर या फिर कोई छोटी सी गलती कर देने पर किसी व्यक्ति को मृत्युदण्ड जैसी कठोर सजा सुना दी जाती है क्योंकि ना तो कोई वहां मानव अधिकार नियम हैं ना तो किसी तरह का कानून इसके साथ ही ऐसे देशों में सजा मिलने पर भी बंदियों के साथ पशुओं से भी बुरा सलूक किया जाता है।

वहीं दूसरी तरफ लोकतांत्रिक देशों में मानव अधिकारों को काफी महत्व दिया जाता है और हर व्यक्ति चाहे फिर वह अपराधी या युद्धबंदी ही क्यों ना हो उसे अपना पक्ष रखने का पूरा अवसर दिया जाता है, इसके साथ ही सजा मिलने पर भी उन्हें मलूम सुविधाएं अवश्य दी जाती हैं इस बात से हम अंदाजा लगा सकते हैं कि मानव अधिकार हमारे लिये कितने जरूरी, आवश्यक है और ये कितना महत्व रखते हैं।

यह बदलाव राष्ट्रीय आयोग कानून 1990 तथा राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग कानून 1993 से परिलक्षित होता है। इन संस्थाओं के आने के बाद महिलाओं से जुड़ी समस्याओं पर ज्यादा गहराई से अध्ययन किया गया, उनका निदान ढूँढा गया तथा लॉ. कमीशन ऑफ इण्डिया को महत्वपूर्ण सुझाव दिये गये, जिनके आलोक में विभिन्न कानून बनें।

भारतीय समाज के कुछ हिस्सों में जिस तरह एक बेटे की चाह में लोग सदियों से बालिकाओं की हत्या जन्म लेते ही करते हैं वे लोग गर्भ में बालिका शिशु की हत्या करने लगे। यह तकनीक इस हद तक बढ़ी की गर्भाधान करने के लिए ही ऐसा किया जा सकता है कि सिर्फ बालक शिशु का ही गर्भाधान हो सके, बालिका शिशु गर्भ में आ ही ना सकें। नतीजा यह हुआ कि भारत के कुछ राज्यों में बालिकाओं की संख्या बालकों से काफी हद तक कम हो गई लिंग के आधार पर जन्म लेने के पहले ही बालिकाओं के साथ भेद-भाव को देखते हुये कानून-मंत्रालय ने प्रीकन्सेप्शन एण्ड प्रीनरेल डायग्नोस्टिक टेक्नीक्स कानून (Prohibition of Sex Selection) कानून 1994 बनाया गया। इस कानून के अनुसार धड़ल्ले से चल रहें जेनेटिक काउन्सलिंग सेन्टर्स, जेनेटिक लेबरेटरीज तथा जेनेटिक क्लीनिक्स पर रोक लगाई गई।

इन सबको चलाने के लिये इनका रजिस्ट्रेशन अनिवार्य किया गया। रजिस्ट्रेशन के बाद ही इनका प्रयोग सिर्फ तभी किया जा सकता था जब भावी माता किसी तरह की ऐसी असामान्यता या बीमारी की शिकारी हो, जो बच्चा और जच्चा के जीवन के लिये खतरनाक हैं। इन सब दोषों को पाये जाने के पश्चात् भी (1) स्त्री की उम्र 35 वर्ष से ज्यादा हों, (2) गर्भवती स्त्री के 2-3 गर्भपात खुद-ब-खुद हो गये हों (3) गर्भवती स्त्री ड्रग्स रेडियेशन इन्फेक्शन या केमिकल से प्रभावित हो (4) स्त्री या उसके पति के परिवार का मानसिक रोगी होने का इतिहास हों, या और कोई महत्वपूर्ण कारण हों। इसके अलावा गर्भवती स्त्री की लिखित सहमति गर्भपात के लियें हों।

इस कानून के उल्लंघन की सजा 3 वर्ष सश्रम कारावास तक हैं।

इस कानून में 2003 में संशोधन भी किया गया, पर इसका लाभ नगण्य रहा, क्योंकि परिवार, समाज डॉक्टर पुलिस प्रशासन सभी की मानसिकता इस मामले में एक जैसी ही हैं। सभी बेटे की चाह रखते हैं बेटे की नहीं। सबसे ज्यादा डॉक्टर्स दोषी नजर आते हैं जो कुछ हजार रूपयों के लिये गर्भपात कर देते हैं। ये काफी पढ़े-लिखे समृद्ध हैं उन्होंने हर की जान बचाने की शपथ खाई होती हैं, उनके द्वारा इस तरह बालिका भ्रूण हत्या करना शर्मनाक हैं।

सन् 2005 में स्त्रियों को शारीरिक, यौन, मौखिक भावनात्मक आर्थिक हिंसा से मुक्त कराने, सुरक्षित रखने का वादा किया।

इस कानून के आने से पहले घर के अंदर स्त्रियों की सुरक्षा का कोई मतलब नहीं था, वे घर के अंदर घर के लोगों द्वारा प्रताड़ित होने के लिये मजबूर थी उन्हें भरपेट खाना नहीं देना शिक्षा पाने के अवसर नहीं देना, उनके हिस्से की सम्पत्ति का खुद के लिये उपयोग करना उन्हें गाली-गलौच, ताने देना, मारना – पीटना या यौन हिंसा तक का प्रयोग करना जैसे आम बात हैं। यह सब कुछ घर के अंदर की बात हैं या आपस की बात हैं कहकर कोई भी अपराध करना सामान्य सी बात हैं। पर इस कानून ने स्थिति में बदलाव किया हैं।

इस कानून के अनुसार घर में रहने वाली बच्ची माँ, बुआ, चाची या लिव-इन-रिलेशनशिप (सहजीवन)

में रहने वाली स्त्री यदि किसी भी प्रकार घर के किसी सदस्य द्वारा प्रताड़ित होती हैं तो वह अदालत की शरण लेती हैं।

इस कानून में पहली बार पीड़ित स्त्री द्वारा पुलिस या अदालत में न जा पाने की स्थिति में वह सर्विस प्रोवाइडर या प्रोटेक्शन ऑफिसर को सूचित कर सकती हैं, जो उसकी कंप्लेन मजिस्ट्रेट के यहां फाइल कर उसे आर्थिक सहायता से प्रताड़ित रक्षा समुचित इलाज स्त्री धन प्राप्त करवाना, शिक्षा पाने की सुविधा प्राप्त करना, नौकरी करने की स्वतंत्रता, साथ घर में सुरक्षित रहने या अलग घर लेकर रहने (जिसका खर्च उसको प्रताड़ित करने वाला देगा) हर्जाना दिलवाने आदि का आदेश अदालत से ला कर दे सकता है।

इस कानून में समझौता बीच-बचाव कराने का प्रावधान है मूल बात है कि परिवार का वातावरण सौहार्दपूर्ण हों कोई भेदभाव या मनमानी न हों। पहले यह समझा गया था कि प्रताड़ित करने वाला घर का पुरुष सदस्य ही होगा, पर अब अदालत ने साफ कर दिया है कि घरेलू हिंसा स्त्रियों द्वारा भी की जाती है और उनके विरुद्ध भी मामला चल सकता है।

यह कानून स्त्रियों पर किसी भी प्रकार की हिंसा होने पर त्वरित न्याय दिलाने के लिये बनाया गया पर यहाँ भी अदालती कार्यवाही वर्षों से चल रही है।

इसके अलावा इस कानून का प्रयोग शहरों में हो रहा है, जबकि ग्रामीण समाज, जहाँ घरेलू हिंसा बड़े पैमाने पर व्याप्त है, वहाँ इसका प्रयोग नहीं के बराबर है, कानून वहाँ अदालती इन्फ्रास्ट्रक्चर ही नहीं है।

सत्र 2005 में ही हिन्दू उत्तराधिकार (संशोधन) कानून 2005 आया। इस कानून की धारा-6 के अनुसार स्त्रियों को जन्म के साथ ही पुश्तैनी सम्पत्ति पर घर के पुरुषों की तरह उत्तराधिकार बना दिया गया। पुश्तैनी सम्पत्ति पर लड़कियों को वही अधिकार मिल गए जो अब तक लड़कों के रहे हैं। भले ही लड़कियों के दायित्व भी लड़कों के समान हो गए।

यह सर्वविदित है कि आज पुरुषों का वर्चस्व समाज में है, तो यह उसका संपत्ति पर मालिकाना हक होने की वजह से ही है। धन-सम्पत्ति से वंचित व्यक्ति जैसे ही काफी कमजोर स्थिति में होता है, और यही हालत एक ही घर की संतान होते हुए भी स्त्री की होती है उसे न चाहते हुये भी पुरुष की गुलाम होने के लिये मजबूर होना पड़ता है।

पूरे देश में यह संशोधन 2005 में आया पर भारत के कुछ राज्यों, जैसे कर्नाटक में यह संशोधन 30/07/1994 से आंध्रप्रदेश में, 5/09/1985 से तमिलनाडू में 25/03/1989 से तथा महाराष्ट्र में 22/06/1994 से ही आ गया था। कहना न होगा कि ये राज्य स्त्रियों के मामलों में ज्यादा प्रगतिशील तथा अग्रजी रहते हैं।

पर दुःख के साथ कहना पड़ता है कि पुश्तैनी सम्पत्ति में बेटे को बेटे के बराबर का अधिकार अभी मात्र कागजों पर ही है जो भी बेटे इस अधिकार की मांग करती हैं उसके सबसे पहले तो, घर से रिश्ते टूट जाते हैं और कहीं – कहीं उसे मुकदमें सामने हैं जिसमें भाई ने शादी के दिन बहन का कतल इसलिये कर दिया कि वह सम्पत्ति में से अपना हिस्सा मांग रही थी। पुरानी मान्यताओं को मानने वाले वे लोग कहते हैं – पैतृक सम्पत्ति में से बेटियों को हिस्सा देने की बात ही नहीं उठती। मैंने अपनी सम्पत्ति अपने भतीजे के नाम लिख दी है, जिससे कि हमारी सम्पत्ति हमारे पास रहे। एक पंचायत ने वहां भी दो बेटियों द्वारा सम्पत्ति के हिस्से के मांगने

के लिये अदालत की चौखट लांघना महंगा पड़ा। उनके घर वाले कहते हैं, उन्होंने हमारे घर की इज्जत मिट्टी में मिला दी। पूरे गांव के सामने हमारी आँखे झुक गई हैं।” हर किसी के गांवों में लड़कियों को सम्पत्ति के नाम पर कुछ दे देना अत्यंत शर्म की बात समझी जाती है भाइयों के खिलाफ जाकर पैतृक सम्पत्ति में से हिस्सा मांगना उनका हिस्सा छीनना लड़कियों के लिये पूरे समाज में अपनी नाक कटवाने जैसा है।

इन समस्याओं हेतु घरेलु हिंसा का कानून की तरह “सर्विस प्रोवाइडर या प्रोटेक्शन ऑफिसरों” की नियुक्ति करनी होगी जो बेटियों को उनकी सम्पत्ति के हिस्से के आदेश को अदालत से निर्गत करवा कर धर कर लाकर दे सकें।

हिन्दू एडीप्शन एण्ड मेन्टेनेन्स एक्ट 1956 के अनुसार पहले पति बच्चे को गोद ले सकता था और उसे इसके लिये पत्नी की सहमति लेनी पड़ती थी। पर पत्नी पति के जिन्दा रहते बच्चा गोद नहीं ले सकती थी। यह प्रावधान पत्नी को पति के सामने समानता का अधिकार नहीं देता था। पर इस असमानता को एडीप्शन एक्ट की धारा-8 ने 31/08/2010 से समाप्त कर दिया। अब पत्नी भी अपने पति की सहमति से बच्चा गोद ले सकती है। उस पर भी वे ही अन्य शर्तें लागू होगी, जो एक पति पर लागू होती हैं।

जैसे एक गैर शादीशुदा तलाकशुदा विधवा, जिसके पति ने सन्यास ले लिया हो या जिसे सक्षम अदालत द्वारा पागल घोषित कर दिया गया हो, जो स्वस्थ मस्तिष्क की हो, बालिग हो, पहले भी बच्चा गोद ले सकती थी। इस ग्रुप में यह स्त्री शामिल नहीं थी, जो शादीशुदा है और जिसका पति जीवत है अब यह बाधा दूर हो गई है— जो स्त्री को एक अतिरिक्त सम्मान तथा हिम्मत प्रदान करती है।

इसी प्रकार पहले पिता अकेला ही अपने बच्चे को गोद ले सकता था, पत्नी की सहमती आवश्यक नहीं थी पर आज उसे पत्नी की सहमती बच्चा गोद देने के पहले लेनी होगी। हिन्दू मैरिज एक्ट 1955 में 24/09/2001 से संशोधन लाकर एक महत्वपूर्ण प्रावधान जोड़ा गया है। इसके अनुसार किसी भी प्रकार की अदालती कार्यवाही जो इस कानून से संबंधित है के अंतर्गत यदि अदालत को यह लगता है कि पत्नी के पास कोई आय का स्रोत नहीं है तो वह मुकदमें का खर्च तथा भरण-पोषण की मांग किये जाने पर, प्रतिपक्षी को नोटिस मिलने के बाद से 60 दिनों के अंदर पत्नी को प्रतिपक्षी से खर्च दिलवाएगी।

यह एक ऐसा प्रावधान है जिसका लाभ अक्सर पत्नियों को प्राप्त होता है। खर्च मिलने पर पत्नी भी अपना मुकदमा अच्छी तरह से लड़ सकती है। ऐसा न होने पर एक तरफा फैसला होना आमबात हो गयी है। इस प्रावधान पर कर्नाटक उच्च न्यायालय का फैसला भी है आर. सुरेश बनाम चन्द्रा एम. ए. आई. आर. 2003 कर्नाटक 183.

संयुक्त परिवारों के टूट जाने पर भारत में वृद्धों का जीवन अत्यन्त कठिन हो गया है खास कर विधवाओं का जीवन। उन्हें अपना जीवन अकेले, बिना किसी भावनात्मक सहारे के और अक्सर बिना पैसे के गुजारना पड़ता है। इसी वजह से आपराधिक प्रक्रिया संहिता 1973 की धारा – 125 के रहने के बावजूद सरकार को 2007 में मेन्टेनेन्स एण्ड वेलफेयर आफ पेटेन्ट्स एण्ड सीनियर सिटीजन्स एक्ट लाना पड़ा। इस कानून की वजह से अब माता-पिता तथा सीनियर सिटीजन उन लोगों से (जिन्हे उनकी सम्पत्ति मरणोपरान्त प्राप्त होगी) – बच्चों से भरण-पोषण दवा सिर पर एक छत की मांग अदालत द्वारा कर सकते हैं। ये सीनियर सिटीजन वे हैं जिसके पास धन तो है पर जिनके बच्चे नहीं हैं दूर-दराज के वे रिश्तेदार हैं जिनके पास उनकी संपत्ति मरणोपरांत चली जाती है पर यदि ऐसा नहीं है, तब भी जिनके पास सम्पत्ति सम्पत्ति नहीं है, वे राज्य से अपनी देख-रेख की

मांग कर सकते हैं।

यह कानून सन् 2008 से लागू हुआ है इसके अनुसार बच्चे वे हैं, जो वृद्धों के पुत्र-पुत्री, पोता-पोती हैं, पर इनमें नाबालिग बच्चे शामिल नहीं हैं। यहाँ भरण-पोषण का अर्थ है— भोजन, कपड़े घर, चिकित्सा आदि। माता-पिता का अर्थ है, माता-पिता जैविक गोद लेने वाले, सौतेले पिता या सौतेली माता – भले ही माता पिता वृद्ध न हों। “सीनियर सिटीजन का अर्थ है वह जिसकी आयु 60 वर्ष या उससे ज्यादा है। रिश्तेदार का अर्थ है— जिसके खुद के बच्चे नहीं हैं, पर जिसकी संपत्ति, उसकी मृत्यु के बाद वारिसों के पास चली जाएगी।

ऐसे वृद्ध जिन्हें भरण-पोषण की जरूरत है, वे मेन्टेनेन्स ट्रिब्यूनल के पास खुद शिकायत पत्र डाल सकते हैं यदि वे जाने में असक्षम हैं तो किसी और व्यक्ति को या किसी संस्था को अधिकार पत्र देकर शिकायत पत्र डलवा सकते हैं या ट्रिब्यूनल खुद ही शिकायत दर्ज कर सकती है, यदि उसे किसी माध्यम से पता चले कि कोई वृद्ध या वृद्धा अभावों में जी रही है।

ट्रिब्यूनल प्रतिपक्षी को नोटिस मिलने के 90 दिनों के अंदर मामले की जांच कर भरण-पोषण का अधिकार दिलवा सकती है।

यदि आदेश के बावजूद बच्चे या रिश्तेदार आदेश का पालन नहीं करते हैं तो प्रतिपक्षी के विरुद्ध वारण्ट निर्गत किया जा सकता है और उसे भरण-पोषण देने के लिये बाध्य किया जा सकता है। इसके अलावा जिनका कोई नहीं है, उनके लिये राज्य सरकारें वृद्धाश्रम बनायेंगी। ऐसे आश्रमों को हर जिले में बनाने की योजना है जहाँ कम से कम 150 वृद्धों को रखा जा सकेगा। ऐसे लोगों को सरकारी अस्पतालों में रख कर इलाज करवाने का प्रावधान है। उनके लिये अलग लाईन लगाने आदि की व्यवस्था का प्रावधान भी है।

सन् 2006 में चाइल्ड मैरिज रेस्ट्रिक्ट एक्ट आया। यह कानून सबसे पहले 1929 में लाया गया था उस समय भारत की गुलामी का समय था। ज्यादातर बच्चों के विवाह दूध पीते उम्र में ही हो जाता था। ऐसे विवाहों को धार्मिक स्वीकृति प्राप्त थी, पर इसके कुपरिणाम भी देखने में आते थे। छोटी सी उम्र में विधवा होकर बड़ी कठिन परिस्थितियों में लड़कियाँ अपना जीवन गुजारने पर मजबूर थी। विवाह का यह स्वरूप ब्रिटेन में कभी नहीं रहा। इसके बाद इस कानून का संशोधित रूप 1949 में तथा फिर 1978 में आया। इन कानूनों के सहारे धीरे-धीरे विवाह की उम्र बढ़ाई गई। पर जिस मात्रा में बाल-विवाहों को रोका जाना था, वैसा 1978 के कानून से नहीं हो पाया। इसलिये 2006 में बाल-विवाह कानून में और भी संशोधन किये गये।

राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग ने 2001-2002 में कुछ सुझाव दिये जो उसकी गहन सोच और अध्ययन पर आधारित हैं केन्द्रिय सरकार ने राज्य सरकारों राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग की सभी अनुशंसाओं को मान लिया तथा नया कानून बना दिया।

यह स्पष्ट है कि यह कानून बाल-विवाह (खासकर लड़कियों के लिये) पर अच्छी रोक लगाता है – दोनो ही तरफ के अभिभावकों को चेताता है कि यदि वे इस तरह के विवाह करवाते हैं तो उन्हें नतीजा भोगना पड़ेगा। इसके अलावा इस रोक से लड़कियों को शिक्षा से वंचित नहीं होना पड़ेगा। उनका विवाह कम से कम 18 वर्ष की उम्र में होगा, जिससे उनका शारीरिक मानसिक उत्पीड़न रुकेगा। कम उम्र में विवाह बच्चे लड़कियों के जीवन से खेलने जैसा है और ऐसा होने पर न तो उनका सशक्तिकरण हो सकता है और न ही विकास। इस दिशा में यह एक बड़ा कदम है।

यौन उत्पीड़न मामले जो भारतीय दंड संहिता की धारा 354 में आते थे, और उसकी सजा अधिकतम 2 वर्ष थी। अपराध जमानतीय था, और शायद ही अधिकतम सजा अपराधी को मिलती थी।

हरियाणा के डी. जी. पी. राठौर के मामले में रुचिका गहरोत्रा को जिस तरह न्याय न पाने पर जान तक देनी पड़ी, यह सर्वविदित हैं एक ही तरह के अपराध में बालिगों की अपेक्षा बच्चों के मन में यह अपराध जिस तरह का असर डालता है वह उनका बचपन जवानों सम्पूर्ण व्यक्तित्व ही नष्ट – भ्रष्ट कर देता है अपराधी भी कम सजा, कम रिपोर्टिंग का लाभ उठाकर बच्चों को आसान शिकार समझते हैं।

बलात्कार की पुरानी परिभाषा भी बच्चों के मुकदमों को कमजोर करती थी मानव-अंग के प्रयोग के अलावा जिन वस्तुओं का प्रयोग यौन-उत्पीड़न में होता है उन्हें भी बलात्कार की व्याख्या में शामिल करने की मांग लंबे समय से हो रही थी इन सबको ध्यान में रख कर अब किसी भी प्रकार का यौन-उत्पीड़न बलात्कार में शामिल किया गया है। बच्चों के लिए अब अलग से यौन अपराधों से बच्चों की सुरक्षा कानून 2012 लाया गया है।

इसी प्रकार 16 दिसम्बर 2012 को “निर्भया” का सामूहिक बलात्कार होने के बाद भारत में एक जन आंदोलन उमड़ने के बाद “वर्मा कमेटी” ने बलात्कार तथा अन्य अपराधों की संख्या में बेतहाशा बढ़ोतरी के कारण और निदान का अध्यापन किया। इस कमेटी ने रेकॉर्ड समय में “क्रिमिनल लॉ (एमेण्डमेण्ड) एक्ट 2013 बनाया जो 2 अप्रैल 2013 को आ गया। इस कानून में आपराधिक प्रक्रिया संहिता 1973 भारतीय साक्ष्य अधि. 1872 भा. द. संहिता तथा यौन अपराधों से बच्चों की सुरक्षा 2012 में महत्वपूर्ण संशोधन किये। भा. द. संहिता की धारा 100 – में सातवां क्लॉज जोड़ा गया, जिसमें जानबुझ कर किसी पर तेजाब फेंकना तथा तेजाब फेंकने या पिलाने का प्रयास करना, जिससे गंभीर चोट पहुँचने का खतरा हों, जोड़ा गया। सजा बढ़ाई गई। भा. द. सकी धारा 166 में धारा 166 ए तथा 166 बी भी जोड़े गये,

महिलाओं से संबंधित अपराधों में पुलिस द्वारा F.I.R. न रिकॉर्ड करने पर पुलिस अधिकारी को 2 वर्ष तक की सजा का प्रावधान लाया गया। पीड़िता का इलाज न करवाने की सजा पुलिस, अधिकारी के लिये 1 वर्ष कारावास की गई। भा. द. स. की धारा 354 (अश्लील छेड़-छाड़) की सजा बढ़ा कर 3 वर्ष की गई। साथ ही अश्लील छेड़-छाड़ की परिभाषा में बदलाव किया गया। पहले की तरह किसी भी किस्म की छोड़-छाड़ यौन हमले इसमें न हों रहें, बल्कि शा. कॉन्टैक्ट या ऐसे पास आने की कोशिश जो अस्वीकार्य हैं काफी स्पष्ट हैं इन्ही तक सीमित किया गया।

इसके अलावा इसमें यौनेच्छा जाहिर करना, महिला की इच्छा के विरुद्ध पोनोग्राफी दिखाना या द्विअर्थी शब्दों, जिसमें यौनिक भाषा का इस्तेमाल है, को अपराध माना गया। इसके अलावा स्टाकिंग लगातार पीछा करना, वोरिज्म-स्ट्री को उसके एकान्त स्थल में बिना कपड़ों के देखने की कोशिश उसकी इस अवस्था में फोटो खिंचना आदि भी जोड़े गए। इसमें भी सजा को तीन वर्ष से पांच वर्ष तक का प्रावधान जोड़ा गया।

इस प्रकार बलात्कार की परिभाषा बदली गई। ताउम्र जेल में रहने की सजा दी गई है। पर आश्चर्य की बात तो यह है कि जितना इलाज किया गया, मर्ज बढ़ता ही गया।

निर्भया के मामलों के बाद लगता था कि लोग स्त्रियों के प्रति घिनौनी हरकत से बाज आएंगे कड़े कानून का उन पर असर होगा पर हुआ उल्टा ही, स्त्रियों पर ऐसे अपराधों की संख्या कई गुना बढ़ गई, बच्चियों को नहीं बख्शा गया। और तो और नाबालिग अपराधियों ने भी इस तरह के अपराधों से खुद को दूर नहीं किया।

वास्तव में देखा जाये तो कड़े कानूनी प्रावधान अपराधियों का मनोबल नहीं गिराते। जब तक लॉ इन्फोर्सिंग एजेन्सीज एजेन्सीज पुलिस प्रासिक्यूशन तथा न्यायपालिका अपना कर्तव्य सफलतापूर्वक नहीं निभाती – स्त्रियों की सुरक्षा नहीं हो सकती। “कन्विकशन रेट” इन मामलों में 24 प्रतिशत से कम हैं, तथा अभियुक्तों की रिहाई 76 प्रतिशत हैं F.I.R. होने में देरी, आधा-अधूरा F.I.R. दर्ज होना।

मामले की जाँच में बहुत सारी खामियों का होना फैसला आने में काफी देर होना, गवाहों का देरी के कारण अपने बयान से पलटना, उन्हें अपराधियों द्वारा धमकाया जाना, उनकी सुरक्षा का इंतजाम न होना, स्त्रियों के साथ एक तरह की लापरवाही बरतना, उनके प्रति पूर्वाग्रहों से भरा होना आदि कारण हैं, जिनकी वजह से अपराधियों को अपने जीत जाने का पूरा विश्वास हो जाता है।

कानून में अनेक प्रगतिशील तथा आवश्यक सुधारों के समावेश होने के बावजूद व्यावहारिकता में पुलिस अदालत द्वारा उन उपायों की अनदेखी करना भी स्त्रियों के प्रति अन्याय है। जैसे हाल ही में मुंबई में हुये “शक्तिमील के सामूहिक बलात्कार की शिकार लड़की को अनावश्यक रूप से वे पोनोग्राफी क्लिप्स कोर्ट में दिखाये गए जिन्हे अपराधियों ने उसे बलात्कार के पहले देखने के लिए मजबूर किया था। नतीजा वह निकला जिसकी आशा थी। लड़की वहीं बेहोश हो गयी, क्या इन क्लिप्स को दिखाना जरूरी था, अपने ऊपर हुये बलात्कार को साबित करने के लिये? बिल्कुल नहीं, फिर ऐसा क्यों हुआ और हुआ तो किस कानून के अंतर्गत इसके अलावा उसको अदालत बुलाने की जरूरत भी नहीं थी, विडियो कोन्फ्रेन्सिंग से उसका बयान लिया जा सकता था, यह सब कहीं परवर्स प्लेजर के लिये तो नहीं था।

जिस तरह बाल पीड़ितों के अभियुक्त को सामने नहीं लाया जाता, वैसा ही कुछ बालिग पीड़ितों के लिये भी किया जाना चाहिये। कार्यस्थल पर हुये पीड़ितों को भी अभियुक्तों के सामने करने की इजाजत नहीं है वास्तव में यही तरीका हर प्रकार भी यौन पीड़ितों से साथ करने की जरूरत है यह सचमुच एक दुःखद स्थिति है कि घर से लेकर समाज, पुलिस अदालतें एक सुर में दोहराते पाये जाते हैं कि लड़की को रात में नहीं निकलना चाहिए। मित्र के साथ नहीं होना चाहिए, पर्याप्त कपड़े पहनने चाहिये आदि – आदि। यह माइण्डसेट हर जगह काम करता है जिसका नतीजा है महिलाओं का पढ़ना-लिखना, बाहर काम करना, डर से भरा होता है।

कहना न होगा कल्याणकारी राज्य में सरकार का दायित्व बनता है कि मानवाधिकारों की सुरक्षा के लिये प्रत्येक व्यक्ति के प्रति जवाबदेही हो, सुशासन वह महत्वपूर्ण तथ्य है जो मानव अधिकारों की रक्षा को प्रभावी तौर पर सुनिश्चित करता है बेहतर समाज के लिये यह भी जरूरी है, मानव अधिकारों का संरक्षण हों, सरकार के साथ-साथ सभी नागरिक संवेदनशील रहते हुये, एक-दूसरे के अधिकारों की रक्षा कर अपने कर्तव्यों का निष्ठापूर्वक निर्वाह करें।

अन्त में मैं महाकवि श्री जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित “कामायनी” की निम्न पंक्तियां याद करते हुये कीना चाहूँगी कि ये पंक्तियाँ याद रखनी होगी कि

नारी! तुम केवल श्रद्धा हो, विश्वास रजत नग पग तल में।

पीयूष स्त्रोत सी बहा करो, जीवन के सुंदर समतल में।

तब निश्चय ही “जूलू शब्दकोष” में दी गई पुरुष की यह परिभाषा सार्थक सिद्ध हो सकेगी।

“एक पशु जिसका प्रशिक्षण नारी करती है।”

मो. – 9414708656



Human Rights and Intellectual Property Rights

-Dr. Maninder Pal Singh

Assistant Professor, Government Law College, Sri Ganganagar

As the name implies, intellectual property rights are the rights granted to an inventor or creator as a reward for producing or inventing something new as a result of his own intelligence. To benefit society as a result of that invention.

Human Rights are the rights that are bestowed upon humans not by chance or decision, but by virtue of their humanity. They are the rights that ensure Human Beings' basic survival.

Now, when we study the nature of Intellectual Property Rights in relation to Human Rights, we discover that: Intellectual Property Rights are non-fundamental Human Rights, open to State interference in order to fulfil Human Rights duties.

As a result of these definitions, we may easily move in comprehending the conflicts between the two, as well as in resolving disputes between Human Rights and Intellectual Property Rights.

Human Rights and Intellectual Property Rights are two areas of law that developed independently. Intellectual Property Rights are statutorily recognised rights that provide incentives for private sector participation in many industries and strive to contribute to technological growth. Human Rights, on the other hand, are the fundamental rights recognised by the state and are inherent rights tied to human dignity.

Because many developing countries, particularly the least developed countries, are unable to implement TRIPS standards in their jurisdiction without jeopardising their development at the expense of human rights, the globalisation of intellectual property rights sparked a debate on the relationship between human rights and intellectual property rights.

According to the indigenous communities, the government should acknowledge their claim to their traditional knowledge matter, which is related to agriculture, biodiversity, and so on. Traditional knowledge is regarded to be in the public domain under the Intellectual Property Rights framework since it does not fit the statutory standards for protection or private ownership. Because this traditional knowledge is not owned, various commercial firms use it for subsequent inventions and then protect their discoveries with patents, copyrights, and so on, while indigenous populations are deprived of their lawful portion.

Thus, the present fault in the Intellectual Property Rights regime leads to the exploitation of indigenous communities by various firms, resulting in violations of indigenous communities' Human Rights. In this regard, Intellectual Property Rights Law infringes on Human Rights Law. The government should pass legislation that allows indigenous tribes to seek restitution for unauthorised use of their traditional knowledge. The government can

also safeguard traditional knowledge by refusing patents, copyrights, and other rights to things developed from traditional knowledge. The fundamental reason cited in support of Intellectual Property Rights is that these incentives and rewards to innovators and producers result in societal advantages.

The relationship between Human Rights and Intellectual Property is intriguing since it crosses distinct levels and aspects of each legal subject. However, it appears that the link between the two is primitive since Intellectual Property Rights set constraints on the accessibility and realisation of Human Rights by increasing its scope of protection.

The Intersection between Intellectual Property Rights and Human Rights Law :

Human Rights Law and Intellectual Property Law now overlap significantly more than was originally anticipated. Intellectual property has already made its way into the realm of human rights. The Universal Declaration of Human Rights (UDHR) and the United Nations Declaration on the Rights of Indigenous Peoples both include the right to intellectual property (UNDRIP).

The Universal Declaration of Human Rights (UDHR) is undoubtedly the most prominent international text to be stated to annotate the Human Rights framework, which effectively annotates Intellectual Property Rights on a global basis. Although not explicitly stated, Article 27 (2) of the UDHR stipulates that...everyone has the right to the protection of moral and material interests arising from any scientific, literary, or creative contribution of which he is the author.

UDHR (Universal Declaration of Human Rights) And the Intellectual Property Rights :

Article 27.1 of the Universal Declaration of Human Rights clearly states that everyone has the right to freely participate in the cultural life of the community, to enjoy the arts, and to share in scientific advancement and its benefits, and Article 27.2 of the Universal Declaration of Human Rights states that everyone has the right to the protection of moral and material interests resulting from any scientific, literary, or artistic production of which he is the author. These two paragraphs of the same UDHR provision demonstrate the complicated and sometimes confusing link between intellectual property rights and human rights, which can lead to inconsistencies.

Trade-Related Aspects of Intellectual Property Rights and Human Rights Agreement :-

Human Rights and Intellectual Property Law are two distinct subjects that have evolved substantially independently. The passage of the Agreement on Trade-Related Aspects of Intellectual Property Rights (TRIPS Agreement) and its ramifications for developing nations dramatically altered the character of the discussion about Intellectual Property Rights and Human Rights. For a variety of reasons, their connection should be reconsidered. This can be seen in two ways:

To begin, since the implementation of the Trade Related Aspects of Intellectual Property (TRIPS) Agreement, the effects of Intellectual Property Rights on the fulfilment of Human Rights such as the Right to Health have been considerably more obvious. Second, the development in Intellectual Property Rights has resulted in an expansion of the scope of Human Rights laws in preserving individual contributions to knowledge in the field of medical patents.

IPR and Human Rights Realization (Patent Rights Vs. Right To Health and Right To Food) :-

In the case of the Human Right to Health, the nexus between Intellectual Property Rights and Human

Rights has been obvious in the case of medical patents and the Right to Health, particularly in light of the HIV/AIDS epidemics. This is because patents cover a number of HIV/AIDS medications. As a result, patents, drug prices, and drug accessibility all have a direct relationship.

Patents in the realm of genetic engineering, the limiting of farmers' rights, and access to food are all linked to the right to food. While the link between Intellectual Property Rights and Human Rights has been established, it has largely been explored in Human Rights forums. To put it another way, there is still a noticeable imbalance in that Human Rights language has not infiltrated Intellectual Property Rights institutions, although Intellectual Property Rights language is now routinely handled in Human Rights organisations.

ICESCR and IPR :-

The International Covenant on Economic, Cultural, and Social Rights particularly protects the right to the best possible bodily and mental health (ICESCR). The requirement of ensuring the Right of Access to Health Facilities, especially for disadvantaged or marginalised groups, is one of member states' core commitments. This includes the provision of critical medications in the case of primary health care. More detailed explanations of these requirements have been provided in the case of HIV/AIDS.

The United Nations Human Rights Commission passed resolutions stating that access to medication in the context of HIV/AIDS is a critical component of fully realising the Right to Health. In other words, accessibility of medicines and their affordability are two main components of the Right to Health. Medical Patents have direct impacts on accessibility and affordability.

They have the ability to enhance access by providing incentives for the creation of novel pharmaceuticals, but they also have the potential to restrict access due to patented products' considerably higher prices. A relevant aspect is the fact that trademarked pharmaceuticals are consistently more expensive than generic drugs. Other factors that affect availability include situations in which generic producers have little competition, local levies, and mark-ups for wholesaling, distribution, and dispensing. As a result, improving access cannot be restricted to lowering prices through competition alone, but must also incorporate other measures such as public subsidies or price control. Better drug access might be viewed through the lens of medical patents or the Right to Health.

The duality is unavoidable since each relevant legal framework is substantially isolated from the other, yet both must be evaluated concurrently because, in practise, a solution centred on medical patents that ends up constituting a rejection of the Right to Health would not be acceptable.

Just like this there is one branch of IPR which is known as Geographical Indication and in the field of Geographical Indication there are having violation of human rights which is the dark side of this field in this part, we are going to discuss it.

Geographical Indications (GI) are a sort of intellectual property right that is related with place names. Geographical indications, in other words, identify a good as originating in a locality where a specific quality, reputation, or other aspect of the good is mostly related to its geographical origin.

Darjeeling tea, Kancheevram sarees, Agra petha, Mysore silk, and so on. They tell consumers about the origin and raise expectations in them based on the reputation gained by the product as a result of its cultural link with the region or environmental conditions and natural features.

Other factors such as manufacturing method, human efforts, and so on may be involved. In a nutshell, geographic information systems (GIs) emphasise the relationship between human actions, culture, land resources, and the environment. Examples include Thirupati Laddu, AranmulaKannadi, and others. Geographical Indications are thought to be more appropriate to indigenous peoples' ethos and cultural practises than other Intellectual Property Rights.

Handicrafts-related problems :-

As previously said, many GIs are created through human labour; the question is whether these individuals benefitted from the GI tag or were rewarded for their efforts, as stated by Locke in his Second Treatise on Government.

There are several types of GIs, such as handicrafts, culinary products, and so forth. Handicrafts are among the most vivid and significant documents of a nation's identity. It is a full-time labour-intensive vocation that requires innovation to develop useful, aesthetically pleasing, and cost-effective goods. The material, pattern, manufacturing technique, talent of the craftsman who made them, and peculiarities of the place in which they were manufactured all contribute to the value of handicrafts goods.

Handicraft products are in high demand in both the domestic and international markets because they are manufactured entirely of natural materials and have regional and traditional characteristics in terms of colour, design, pattern, shape, composition, and, in certain cases, production technique.

Handicrafts are created by men, women, and children. The majority of GIs, including handicrafts, are of the domestic variety. It is important to note that family employees are not any less exploited. Parents can sometimes become the most merciless exploiters of their own children. Females dominate the labour force in these professions, with males accounting for fewer than one-third of the craft work force.

Workers are affected by a variety of issues, including inappropriate physical development, various types of illness and physical abnormalities, harm to the central nervous systems, a lack of ability to relate to other people in society, incapacity to voice opinions, and so on.

According to a survey done by B.A. Bhat and T.A. Rather, the majority of persons working in the handicrafts industry come from economically challenged families; the greater the poverty, the worse the issue. Men and women, most likely youngsters, begin working in the field at a young age alongside their parents/relatives and sometimes with experienced artisans. Because the majority of GIs are households, the engagement of children should be noted because they are naturally involved in the task.

According to a study, the majority of the labour they do is tedious, repetitive, and dull, and it is frequently unsuitable for their physical and mental capacities. Some children are mistreated, humiliated, and even beaten, whilst others are cared for by their parents, which functions as an incentive and drives these young children to do difficult and hard work beyond their capacity for an extended period of time. This has a negative impact on their health and well-being.

Handicrafts work, particularly shawl bawfi and carpet weaving, necessitates intensive use of fingers for dealing with wool and cotton threads while concentrating heavily on the fine knots needed for weaving while sitting for hours. Aching and irritation of the eyes, fingers, joint pain, back ache, and chest pains produced by hailing of

cotton and wool dust might be considered natural in this situation. They must stand for long periods of time due to the nature of their employment; in short, they must work for eight hours straight.

The Factory Act of 1948, on the other hand, mandated five and a half hours of work each day for juvenile labourers. In most circumstances, there will be a lack of medical treatment at work. According to the report, if the employers become unwell, their employers will not assist them financially, exacerbating the situation.

The primary goal of the GI Act is twofold.

To defend the interests of consumers by preventing them from being duped by bogus imitations offered under the guise of a high-quality, well-known commodity.

Protection of manufacturers' interests to ensure that their reputation is not harmed as a result of counterfeit versions sold in the market under their product's brand.

However, in the case of many GIs, this is not the case. Giving Thirupati Laddu a GI sticker, for example. It does not intend to defend the interests of experienced cooks by allowing traders to partake in commercial income. TTD is the single producer and beneficiary in this case.

The Government of India has passed a number of legislations on worker protection, geographical indications, human rights dimensions, and so on, but the most important fact is that ninety percent of labourers were unaware of any such legislations and their rights. A key cause for the lack of understanding regarding the Act is a lack of quality education, as well as a lack of care on the side of the government and civil society. In terms of child labour, a complete prohibition or similar measure is not the solution; rather, the working conditions of children must be improved.

The Conflict's Resolution :-

Thus, the fundamental argument is how to preserve a balance between Intellectual Property Rights and Human Rights, because the presence of both is essential for the appropriate and rich economic and social growth of society as a whole.

In order to resolve the dispute between Human Rights and Intellectual Property Rights, the specific Rights that are being violated must be determined. In order to comply with the terms of the TRIPS Agreement, Human Rights Organizations should develop specific interpretations of ambiguous Rights (primarily economic, social, and cultural rights). Second, if the TRIPS Agreement is viewed through the lens of human rights, consumers of intellectual property items will be on an equal footing with owners of intellectual property rights. According to the agreement, the users of these things are inferior to the owners. However, if the Human Rights clause is incorporated to the agreement, the customers will be the holders of these internationally mandated Rights as well.

This would serve as a check on the ever-increasing standards of Intellectual Property Rights protection. It is also suggested for better human rights protection if a minimum required standard of human rights protection is to be maintained while realising any kind of Intellectual Property Rights. Finally, international forums on Intellectual Property Rights, such as the World Intellectual Property Organization (WIPO), the World Trade Organization (WTO), and others, should analyse new Intellectual Property Rights laws from a Human Rights viewpoint. Only under such conditions can the Human Rights Law and the Intellectual Property Rights Law be able to coexist successfully.



मानव अधिकार : ट्रांसजेंडर भी अधिकारों का हकदार

Kiran

Assistant Professor of Political Science, Maharaja Ganga Singh University, Bikaner

अधिकार हमारे सामाजिक जीवन की अनिवार्य आवश्यकताएं हैं, जिसके बिना न तो व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का विकास कर सकता है और न ही समाज के लिए उपयोगी कार्य कर सकता है। वस्तुतः अधिकारों के बिना मानव जीवन के अस्तित्व की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। अतः मनुष्य के व्यक्तित्व के विकास के लिए अधिकारों का अस्तित्व अत्यंत आवश्यक होता है।

विश्व स्तर पर द्वितीय विश्वयुद्ध के काल में मानवीय अधिकारों पर जो कूटाराघात हुआ, उसके कारण ही अनुभव किया गया कि भविष्य में मानव अधिकारों की रक्षा के लिए ठोस व्यवस्था की जानी चाहिए और इसका उत्तरदायित्व ग्रहण करते हुए संयुक्त राष्ट्रीय संघ ने इस पर योजना प्रस्तुत की और इस योजना को बड़े स्तर पर स्वीकृति मिली और 10 दिसंबर 1948 को मानव अधिकारों की 'सार्वभौमिक या विश्वव्यापी घोषणा' की। इस घोषणापत्र में मानव अधिकारों के संबंध में 30 धाराएं हैं जिनमें मानव के सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक और राजनीतिक अधिकारों का विस्तृत उल्लेख किया गया है जिसमें से प्रथम दो प्रमुख हैं

अनुच्छेद 1 –सभी मनुष्य जन्म से स्वतंत्र और अधिकार तथा मर्यादा में समान हैं।

अनुच्छेद 2—प्रत्येक व्यक्ति जाति, रंग, लिंग, भाषा, धर्म, राजनीतिक अथवा सामाजिक उत्पत्ति, जन्म अथवा अन्य किसी प्रकार के भेदभाव के बिना सभी अधिकारों और स्वतंत्रताओं का पात्र है

आदि अधिकारों का उल्लेख इसमें किया गया एवं सभी देशों से आग्रह किया गया कि अपने-अपने देशों में सभी मनुष्य के अधिकारों को सुनिश्चित करें और इसके सकारात्मक परिणाम भी देखने को मिले।

लेकिन कहीं ना कहीं समाज का एक वर्ग संकीर्ण मानसिकता और सामाजिक मान्यता के कारण इन अधिकारों का हिस्सा नहीं बन पाया। जिसे ट्रांसजेंडर (परलैंगिक व्यक्ति) कहा जाता है हालांकि बदलते वक्त के साथ इनके प्रति नजरिया बदला है लेकिन फिर भी सामान्य मनुष्य के रूप में इनको अभी भी स्वीकृत प्राप्त करने में कई दिक्कतों का सामना करना पड़ रहा है।

ट्रांसजेंडर कौन है?

Transgender लोग वह होते हैं जो अपने शरीर की संरचना या जननांगों (जेनिटलस) के अनुसार अपने आप को लैंगिक रूप से बिल्कुल अलग महसूस करते हैं। इसका मतलब है कि कोई व्यक्ति जिसका लिंग उसके जन्म के समय से भिन्न होता है, वह अपने आप को पुरुष या महिला के रूप में समझ सकते हैं और यह भी

हो सकता है कि उन्हें लग सकता है कि कोई भी लेबल उन पर फिट नहीं बैठता है।

ट्रांसजेंडर शब्द दो शब्दों के मेल से बना है Trans + Gender.

Trans एक लैटिन शब्द है जिसका अर्थ – के (उस) पार; के परे; दूसरे स्थान पर; दूसरी अवस्था में; (Across and Beyond) होता है और Gender का अर्थ लिंग होता है अर्थात् ट्रांसजेंडर शब्द का अर्थ दूसरी अवस्था में लिंग है एक Transgender मनुष्य की पहचान ट्रांस महिला और ट्रांस पुरुष के तौर पर होती है ...और यही वजह है इनको सामान्य मनुष्य से अलग बनाती है और इसी वजह से इनको परिवार; समाज एवम राज्य में भेदभाव का सामना करना पड़ता है।

ट्रांसजेंडर लोगों को कार्यस्थल सार्वजनिक होटलों या अन्य आवासीय स्थान ढूँढने और स्वास्थ्य सेवाएं में भेदभाव का सामना करना पड़ता है और इन सब भेदभाव से बचाने के लिए कानूनी संरक्षण की कमी है। इसलिए जरूरी है कि न केवल समाज बल्कि सभी देशों और विश्व स्तर पर तीसरे लिंग को मान्यता दी जाए और उनके कानूनी संरक्षण के लिए प्रयास किए जाए।

अगर बात भारत की जाए तो भारतीय संस्कृति और न्यायपालिका तीसरे लिंग को मान्यता देती है। इन्हें 'हिंजडा' कहा जाता है।

भारत में 15 अप्रैल 2014 को सुप्रीम कोर्ट ने एक तीसरे लिंग को मान्यता दी ,जो न तो पुरुष और न ही महिला, यह कहते हुए कि तीसरे लिंग के रूप में ट्रांसजेंडर की मान्यता एक सामाजिक व चिकित्सीय मुद्दा नहीं बल्कि मानवाधिकार मुद्दा है। भारत में ट्रांसजेंडर समुदाय (हिंजडा सहित अन्य लोग) का भारत में और हिंदू पौराणिक कथाओं में एक लंबा इतिहास रहा है। न्यायमूर्ति के. एस. राधा कृष्णन अपने फैसले में कहा कि 'शायद ही कभी हमारे समाज को उस आघात, पीड़ा और दर्द का एहसास होता है जिससे ट्रांसजेंडर समुदाय के सदस्य गुजरते हैं और न ही लोग ट्रांसजेंडर समुदाय के सदस्यों की जन्मजात भावनाओं की सराहना करते हैं। विशेष रूप से जिनके मन और शरीर ने उनके जैविक लिंग को अपनाने से इंकार कर दिया। हिंजडो को सरचनात्मक भेदभाव का सामना करना पड़ता है ...जिसमें ड्राइविंग लाइसेंस प्राप्त न कर पाना और विभिन्न सामाजिक लाभों तक पहुंच से निषिद्ध होना शामिल है। आम समाज से उन्हें भगा दिया जाना भी आम है।'

सुप्रीम कोर्ट के निर्णय के पश्चात सरकार के द्वारा कई प्रयास किए गए और तमाम विवाद; विरोध; सुझाव और परामर्श के पश्चात अंततः सरकार के द्वारा 'ट्रांसजेंडर अधिकार संरक्षण बिल-2019' संसद से पास करवा लिया गया और राष्ट्रपति के हस्ताक्षर के बाद ही कानून बन गया।

इस अधिनियम के माध्यम से ट्रांसजेंडर को समाज की मुख्यधारा से जोड़ने का पूरा-पूरा प्रयास किया गया है मसलन शिक्षण संस्थाओं में प्रवेश; नौकरी-सरकारी या प्राइवेट में; स्वास्थ्य देखभाल; निवास का अधिकार; पब्लिक प्राइवेट ऑफिस खोलने; पब्लिक को दी जा रही सुविधाओं का लाभ उठाने का अधिकार एवं आंदोलन करने का अधिकार दिया गया है, और वो सभी व्यवहार अपराध की श्रेणी में शामिल किए गए हैं जिनसे उनके सम्मान और गरिमा को ठेस पहुंचती है। इस बिल के मुताबिक ट्रांसजेंडर के खिलाफ ये सारे अपराध करने वालों को 6 महीने से 2 साल तक की सजा हो सकती है साथ ही जुर्माना भी लग सकता है अर्थात् काफी हद तक

कोशिश की गई है उनको अधिकार दिलाने की और व्यवहार में भी स्थिति बदली है अब हर सरकारी प्रपत्र पर तीसरे जेंडर का कॉलम दिखने लग गया है ट्रांसजेंडर को उनकी जगह दी जाने लग गई है।

लेकिन हम जानते हैं सुधार और बदलाव के लिए कानून पर्याप्त नहीं होते हैं उसके लिए हमारे व्यक्तिगत और सामूहिक प्रयास भी जरूरी है और इसके लिए जरूरी है कि हम मन से उनको स्वीकृति और मान सम्मान दे; जितना हमें स्वयं को चाहिए होता हैक्योंकि ट्रांसजेंडर भी अधिकारों का और मान सम्मान का उतना ही हकदार है जितना की सामान्य महिला और पुरुष!

Note :-

अनुच्छेद (1) में प्रारंभ में सभी मनुष्य की जगह सिर्फ पुरुष लिखा गया था! बाद में इसकी जगह मनुष्य शब्द जोड़ा गया था जिसका श्रेय भारतीय संविधान सभा की महिला हंसा जीवराज मेहता को जाता है उन्हीं के सुझाव पर मनुष्य शब्द जोड़ा गया!

संदर्भ ग्रन्थ :-

1. बसु, डी.डी. – भारतीय संविधान।
2. ए.आई.आर., 2019, 2020 व 2021
3. राजस्थान पत्रिका।
4. दैनिक भास्कर।
5. विकिपीडिया, ट्रांसजेण्डर (परलैंगिक व्यक्ति)।
6. यू.एन.ओ. चार्टर।
7. बोहल शोध मंजूषा, साहित्य समाज और किन्नर विशेषांक।
8. किन्नर महाविशेषांक, बोहल शोध मंजूषा, अप्रैल 2021



A MOTHER : CREATOR OF A CHILD

Meha Khiria

Scholar, Maharaja Ganga Singh University, Bikaner

Abstract :

A mother actually creates a child. That is why the mother is referred to as the children's first school. The Guru provides education to the students in the school and this education is beneficial in the development of the child's life. Sanskars are also instilled in youngsters by their mothers. The foundation is laid by the sanskar offered by the mother. Childhood, youth and old age are the three stages of human life. Childhood is the time in a person's life when they are forming their identity. In this stage, the process of weaning the seeds of development and decline was completed.

Keywords : Mother, Child, Sanskar, Child behaviour, Women empowerment.

Woman is very revered in Indian culture. Women are considered to be worshiped in the Vedas. Woman is the epitome of compassion. There is this very famous Sanskrit quote regarding the same, as :

जननी जन्म भूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी ।
अपि स्वर्णमयी लंका न मे लक्ष्मण रोचते ॥

Mother and birthplace is greater than heaven. Lord Shri Ram has told this fact to Lakshmana. A woman is the one who gives birth to a child. There are many forms of woman. She appears as a girl in her childhood. When she grows up, she is like someone's wife. When a son or daughter is born, she is called mother. Thus he is respected in every way. It is the woman who gives sanskars the power that makes the child a great man by giving rites. It was his mother who made Shivaji, Shivaji. Women have the highest position in the world, be it any field, women are leading in every field. In success, women are not less than men in any way. Male and female are the two wheels of the chariot in the form of a householder. The creation goes on due to the combination of both. Nowadays, women are adorning high positions with their hard work and intelligence. Women are worshiped in many forms like Lakshmi, Durga, Saraswati. that's why it's said

“यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः ।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्रा क्रियाफलाः ॥”

It means, where women are worshipped, gods reside there and where women are not worshipped, all actions prove fruitless. In the form of Durga, the woman controls the lion. Lion is considered to be the most powerful animal in this world. Because of controlling the most powerful animal, it has been shown that if a woman

comes in her natural form, then she can control the cruel demonic force. In the form of Lakshmi, the woman is Grihalakshmi. Lakshmi is considered the presiding deity of wealth. The woman runs the entire system of the house, keeps it tidy and also manages her family when needed. Saraswati is considered the presiding deity of learning. No member of the family does as much work as the mother does, inculcating values in the child, giving elementary education, educating the child, teaching, etc. That is why woman is considered as the form of Saraswati. Women weave the fabric of material and spiritual prosperity.

Role of women in modern era :-

The times are changing. In the medieval period, when India was ruled by the Yavanas, there were many atrocities on women at that time, as a result of which the practice of purdah started in India. The position of women gradually deteriorated. Due to the weak position, the woman reached a pitiable state. Women were confined to the chulha-chak only. Women did not have any special contribution in other works. Women began to be considered only an object of luxuries. Many types of atrocities started being done on women. The practice of Sati, the practice of child marriage etc. started to flourish in the society. Due to this the condition of women deteriorated. Social reformers made a lot of efforts to raise the status of women again. Social reformers like Swami Dayanand Saraswati, Raja Rammohan Roy, Keshwachandsen etc. strongly opposed the practice of Sati and child marriage and spread a new consciousness in the society. Strongly supported widow marriage. In this way, women were again given a high position by making them reputable in a high position in the society. Nowadays there is no discrimination of any kind between children and girls. From the schools of education to all the important places, women are getting high position with their power and intelligence. In the political field also, women are respected in high positions. For development in every sphere of life, women are coming forward and moving ahead with the men.

In almost all the countries of the world, women are moving ahead in the political field. In India, women are occupying high positions in the field of army, police, paramilitary, administrative services, education, social service and science. Women are increasing the pride of the country by being appointed on the basis of their qualifications and experience in important posts like President, Prime Minister, Lok Sabha Speaker, Chief Minister, Minister, MP and MLA. Women are making an important contribution in the defense of the country by being appointed in important posts like army and paramilitary forces. Whether it is social service or service to the nation, the contribution of women in every field is commendable. Women are progressing in every field in India. Women with job profession do all their work at home, sending children to school on time, taking care of family, as well as doing their office work and fulfilling responsibilities, all these work can be done only by women. While doing all this work, it is empowering the society and the nation.

Mother is the First school of a child :-

A mother actually creates a child. That is why the mother is referred to as the children's first school. The Guru provides education to the students in the school, and this education is beneficial in the development of the child's life. Sanskars are also instilled in youngsters by their mothers. The foundation is laid by the sanskar offered

by the mother. Childhood, youth, and old age are the three stages of human life. Childhood is the time in a person's life when they are forming their identity. In this stage, the process of weaning the seeds of development and decline was completed.

The arrival of a new child in the family is a source of great joy for everyone involved, and it marks the start of a new adventure for everyone. The infant is carried in the mother's womb for nine months. Every maternal impulse has an impact on the unborn child. The mother is required to listen to nice stories, sermons, eat decent food, and be healthy and happy while pregnant. Because the everything that is consumed by the mother, is transformed into juice, the when a child feeds on it, he receives energy and remains healthy.

After the child is born, the mother looks after him or her with immense affection. Despite the fact that the baby does nothing except eat, sleep, cry, and pee the diaper, he adjusts to his new environment and learns about it. Every child is different, therefore it is usual for children's growth rates to vary. There is no need to be concerned if the child's development takes longer or shorter than expected, or if the infant fails to acquire specific abilities at a certain point, because every child is unique in his growth and development. It depends upon different factors. It only requires a little special attention. Children perform independent play. They are more satisfied with adults around them and show greater interest in social interaction with them. Beginning in early childhood, children exhibit a pattern of parallel play, i.e., two children play the game independently (spontaneously) even when they are together. After 'independent play', the pattern of 'associative play' appears and basic social attitudes are developed in the child. They learn to participate with others and do things accordingly. They develop a sense of cooperation too. The major social behaviours of this stage are imitation, competition, negation, aggression, strife, cooperation, affect, selfishness, empathy and social approval etc. They develop these all naturally by seeing and learning thing around them by their own observation.

In childhood, various social behaviours are displayed in children through methods like leadership style, reading-learning, entertainment etc. The process of development of social behaviour continues in late childhood.

In this stage, children usually form groups and interact in the group, so that their growth rate continues uninterrupted. This stage is also called the 'Group/Team stage'. In this stage, the child engages in all social and anti-social behaviour such as playing, showing mutual cooperation, harassing people, eating tobacco, having bad or dirty conversations, etc. Children are highly influenced by the behaviour of friends and see their social acceptance as being related to the approval of the friend. It is in this stage that the quality of leadership develops. The child who exhibits the most dominance in the team is automatically chosen as the leader of their team and he becomes the leader of the group. He is more popular than the other members of the group.

The sexual development of the child takes place only at the age of five years. After this his desire for sex pauses for a while. it wakes up again at thirteen years of age and keeps on increasing this time by being awoken. Because of this, the adolescent life of the child is of extraordinary significance. The emotional development of the child stops in the previous phase, but his physical and intellectual development continues. All types of development

of the child take place in adolescence. This age contains all the major changes in the adolescent and prepares him for adulthood.

The actual improvement of all creatures happens from their pregnancy. Two primary things work in this turn of events, one is regular development and the other is the nature of learning. The thing that matters is just that where normal development is more significant in the existence improvement of different animals; there is a transcendence of learning in the advancement of the youngster. Whenever the child stays in the mother's womb for a very long time, then, at that point, he begins learning. We had seen one of such examples in our ancient scripts too; Abhimanyu learned the act of breaking the Chakravayuh when he was in the womb. He could break the Chakravayuh as far as he had learned to break it in the womb. The child whose mother is always kept in fear during pregnancy, that child is fearful. The combatants of the world were the children of mothers who had to lead a life of war in pregnancy. Such was the life of the mothers of Napoleon and Shiva. For the development of children, telling historical and geographical stories is suitable for their mental development.

The brain of a child is like a blank paper at the time of birth, whatever sanskar are put on it, it becomes the same. Therefore, caution is required in the formation of Sanskar. A mother plays a very important role in putting that effect in a child's over all personality and the great personalities together creates the great society together and makes this world a better place for everyone.

Thus it is safer to say that a woman as a mother is a creator of child which leads to creation of well-established society.

References :-

1. A hemistich of a sanskrit shloka from Ramayana, and the national motto of Government of Nepal.
2. Manusmriti Shloka 3.56
3. Raja Ram Mohan ray's contributions to women's rights and education : its current relevance by Mr. Anup Baugh. (Towards excellence - ISSN - 0974-035) Can indexed refereed & Peer-reviewed Journal of higher education) UGC-HRDC.
4. Views of Swami Vivekananda on women education.
5. Swami Vivekananda on women empowerment (Philosophical commentary on Issue of today) by Dr. V.K. Maheshwari, Farmer Principal, K.L.D.A. (P.G.) College, Roorkee, India.
6. A handbook of child behavior and psychology.
7. Study of the material related to children and parenting.
8. Statistical data analysis of participation of women in the Indian politics, Defence Services and in the other fields of representation and empaloyment.
9. Abhimanuu - in Mahabharata, Sanskrit epics of ancient India.
10. Reforms Brought by Dayanand Sarswati written by Sthiti Das.
11. An article by India Today 'Arya Samaj Founder Swami Dayanand Saraswaties idea of a modern India' Published on October 30, 2018
12. Google Search.
13. Online Wikipedia.



Is Political Offence a Fair Ground for Protection of Human Rights of an Alleged Offender

-Renuwati Rajpurohit

Research scholar, Department of Law, Faculty of Law
J.N.V.University, Jodhpur 342001(India)

Abstract :-

Effective extradition procedures are an indispensable tool of international law enforcement. Having a link between extradition and human rights entitled a balance between the suppression of crime in an endeavour to protect society, and the protection of human rights concerning to an individual to respect the dignity of a person. This article explains the political offence as a ground of protection of human rights of an alleged offender which can be utilised as a tool in achieving non-derogable protection of human rights. This paper aims to emphasize the political offence in human right, which are intended to safeguard individual rights. Because of the political reason a person has to take shelter in another country because he is scared that he will not give fair deal in the country where the act was committed whether it amounts to offence or does not. The country refuses to extradite him/her on the grounds of political offence because it may happen that he will not be given a fair deal in the country into which he will be extradited. The right to life and the prohibition of torture is one of the prominent issues in this study.

Key word :- Political offence, Extradition, Human right

Introduction :-

The praxis of refusing to extradite (often involving the grant of asylum) person accused or convicted of political offences is virtually derived from principles of humanitarianism.

According to Manuel R.Garcia – Mora, “when a country demands that a refugee from its territory be extradited to stand trial on a criminal charge, the requested state is faced with the delicate problem of determining whether the defendant is charged with an extraditable or a “political” offence. After distinguishing pure and relative political crimes, consideration for the rights of the individual and recognition of the changing modes of preventing political tyranny.”

Extensively speaking, a political offence is an act directed against the security of the state. Maximum extradition treaties include a clause exempting from surrender persons accused of political offences so that normally they are given asylum in the state wherein they have taken refuge. The historical reason for this implementation was the well-founded apprehension that to surrender political criminals would surely amount to delivering them to their summary execution or, in any incident, to the risk of being tried and punished by tribunals coloured by political zeal.

Because the discovery of a political offence in specific cases has been furiously litigated, no uniform norm exists regarding this concept so vitally connected to the protection of human rights.

The human rights development, which has had such a powerful manoeuvre on international law and relations in the post-world war II period, has in recent years turned its attention to extradition. Treaties executive acts and judicial decisions on extradition have all been impressed. At the same time, transnational and international crime has increased. The international community has responded by generating new institutions and spreading the network of bilateral and multilateral treaties designed to outlaw transnational crime, promote extradition, and permit mutual assistance. Necessarily, there is a tension between the claim for the inclusion of human rights in the extradition process and the demand for more fruitful international cooperation in the suppression of crime, which resembles the tension in many national legal systems between the “law and order” and human rights perspective to criminal justice. As in domestic society, it is compulsory to strike a balance between the two to establish a system in which crime is suppressed and human rights are respected.

Methods :-

The research problem which has been undertaken in this studies that how the political offence is acting an important role in the protection of human rights of an alleged offender. The answer to this question is given in explanatory methods. Historical aspects are used for understanding the background content of the problem. The comparative case study method is also used considerably to understand about what the standards those are common in the various countries, following the explanatory method, an author needs first of all to operationalize the terms used in the article, like a political offence. This article is devoted to having a link between political offence and human rights.

Study the problem and discussion :-

The background :

Much of the unpredictability touching the determination of political offences can be attributed to roughly three factors. First domestic tribunals frequently contend that the practice of extradition is entirely a matter of domestic jurisdiction and hence any determination relating to the question is to be made based on the major interests of the state involved without any indication to international law. Usually, therefore, it has been held that the nonextradition of political offenders is exclusively a domestic practice, not a principle of international law, and each state is authorized to determine the scope and extent of the practice according to its national standards. It is appropriately declared that in the absence of a treaty a state may if it chooses, surrender a person accused of the political offence without in any way violating a rule of international law.

Similarly, it has been argued forcefully that even where there is a treaty prohibiting a political offender's extradition, he may be surrounded for the reason of national policy. The most troublesome effect of this position is that the determination of whether or not to surrender political criminal is left to the liberated discretion of the different states without any regard for the rights of the individual. Extradition law was planned to play a dual function, namely, to protect the accused and to achieve international cooperation in the suppression of crime. The traditional prominence on the second element may well be the reason for the general practice of allowing the individual states such as wide discretion. This may mainly explain why some countries interpret the concept of a

political offence widely to protect the individual, while others think about a strict interpretation more consonant with the requirements of international cooperation. It is not astonishing, therefore, that a political offence in the courts of one country may be a common crime in those of another.

Secondly, since the determination of political offences in real cases may depend upon an infinite variety of factors, both the essential and the desirability of giving an exact definition of the description of the concept have been critically questioned by courts and international jurists.

Finally, in a treaty providing that extradition will not be permitted for a political offence. The problem is, however, complicated by the fact that the concept "political offence" has been commonly used in two different contexts. In the first position, it chooses "purely political offences" or objective offences in the narrow sense. These offences directed against the state which contain none of the elements of ordinary crime. Secondly, "political offence" means 'relative political offence' in which a common crime is so connected with the political act that the entire offence is regarded as political and present-day, more than a hundred years since the passing of Belgian law, through the nature of a purely political offence is fairly easy to find out, the determination of relative political offences is far from being settled. This right problem examined the most acute in extradition law, still present's considerable difficulties in application.

Nature of political offences :-

One important question is generally comes up that who is the political offender and what is the definition of political crime. In the international debate is given special emphasis on this question. Political crime definition has been a concern of legal theory and jurisprudence since the origin of the legal texts at the beginning of the 19th century.

There is no law or treaty to define positively the term, "political offence and offence of political character. In the non-appearance of any accepted definition, the court and legal writers turn to categorize the political offence into :-

1. Pure political offences
2. Relative political offences

1. Pure political offence :-

A pure political offence is one that is solely aimed at the state or against political interest, without harm private persons, property or interest and not accompanied by the commission of a common crime. These offences are directly aimed at the government and have none of the components of ordinary crimes. They cover treason, sedition, espionage .

2. Relative political offences :-

The relative political offence can be an expansion of the purely political offence, when in concurrence with the latter, a common crime is also committed or when without committing a purely political offence, the offender commits a common crime to inspire by ideological motives .

Extradition and human rights implication :-

The correlation between extradition law and human rights have to be made to examine the applicability of human rights norms in the extradition proceedings and difficulties involved therein, the emphasis should be upon the need for drawing a balanced approach in dealing with extradition matters.

International human rights law does not create the right not to be extradited. On the contrary, it is an

instrument which enables states to obtain custody of and prosecute the alleged perpetrators of human rights infringement. Extradition can make an important contribution to the fight against impunity for such crimes. Human rights law does, however, impose determined restrictions and conditions on the freedom of states to extradite, by prohibiting the surrender of the wanted person to a risk of serious human rights infringement. In some situation, this means an absolute bar to extradite, while in others –in particular, cases entail death penalty – it has long been established practise granting extradition only if the requesting state gives assurance regarding the treatment of the wanted person upon return.

Mutual association ship between human rights and extradition is often characterized as a ‘tension’ between protective and cooperative functions of this form of international legal assistance. Therefore, there is currently a sharper need in extradition cases to find a proper balance between the recognition of state’s claim to sovereignty on the one hand and respect for individuals civil and human rights, on the other.

Human rights safeguards under extradition law :-

Extradition treaties, bilateral or multilateral, grant fugitive offenders with several human rights safeguards. These safeguards are varied and arose out of different grounds and satisfy different purposes and concerns.

The existing system of extradition already includes the safeguards for individual rights, such as the political exception, the rule of double criminality, and the principle of speciality which specifies that the extradited individual will only stand trial for an offence described in the extradition. But not all civil and human right concerns areas simply dealt with in extradition; conflicts in specific cases have revolved around the use of the death penalty torture in criminal proceedings, harsh interrogation technique, questionable trial and incarceration, conditions and cruel, inhuman or degrading treatment and punishment.

A. Human rights as an absolute bar to extradition :-

It is now been a normally established practice that some human rights are being recognized as an absolute bar to extradition. These human rights cover like- the right to life, fair trial, protection against torture or degrading treatment and discrimination. Subsequently follows a discussion of such rights which put a bar on extradition.

Many states refuse extradition where the offender would be subjected to the death penalty and construct extradition conditional upon an assurance that the death penalty if imposed will be commuted to a sentence of imprisonment. There is no common rule of international law prohibiting the death penalty.

The newest example, in this case, is the extradition of Abu Salem, where the Portuguese government give consent to extradite Abu Salem to India only when the government of India secured the death penalty would not be imposed on him.

B Fair trial :-

The duty to safeguard the wanted person’s right to a fair trial under international and regional human rights instruments requires the requested state to access the quality of the criminal proceedings which would await him or her if surrounded.

It is among the important civil and political rights. It holds an eminent place in a democratic society.

C. Torture and other cruel, inhuman or degrading treatment or punishment :-

The right to safekeeping against torture, cruel, inhuman or degrading punishment belongs to the category of

absolute rights. As a peremptory norm of international law (Jus cogens) the prohibition of torture is compulsory on all states. It applies in all circumstances, together with during armed conflict and in times of national emergency.

The United Nations convention against torture and other cruel, inhuman or degrading treatment or punishment, 1984 needs that members' states would not expel, return or extradite the person to states if there are substantial grounds for believing that they would be at risk of being subject of torture.

D Discrimination :-

The European Convention on extradition of 1957 condition that a person shall not be extradited if the requested state has substantial grounds for believing that a request for extradition for an ordinary criminal offence has been made for the cause of prosecuting or punishing a person on account of his race, nationality or political opinion .

Conclusion :-

An attempt has been made here to display the elements which make up a political offence. It is crystal clear that the courts have had no difficulty in determining purely political offences, while the problem regarding the nature of a relative political offence is still not free from controversy and uncertainty. In the discussion has communicated that is no single criterion to determine the nature and scope of complex crimes. It is thinkable that what is a relative political offence to the courts of one country may well be a common crime to those of others.

It has been forcefully suggested that a person should not be surrendered when the political element of the offence is unmistakably accepted. Considerations of justice and deep regard for human rights would seem to demand this course of action exactly at this time when the humanitarian function of the principle of nonextradition of political offenders is most vitally needed.

Human rights law is a vital feature of international law. Extradition is not immune from the result of this branch of the law. Progressively, governments and courts are acting following this reality. The fear that identification of this reality in extradition treaties will impede the implementation of transnational criminal law is understandable but unwarranted. As has been shown, in proper circumstances states do deny extradition in the interest of human rights, even where such denial results in an infringement of their obligations under an extradition treaty. New extradition treaties and supplementary protocols to existing treaties should take an amount of the human rights element and regulate it so that courts and executives can exercise their powers in a coherent manner that balances the interest of the fugitive's human rights with that of law implementation. The implementation of international criminal law is better served by an extradition law that expressly accommodates the interests of human rights than by one that fails to acknowledge the expand to which human rights law has reshaped this branch of international cooperation.

In this article, an author tried to answer that political offence is a fair ground for protection of Human Rights of an alleged offender.

Acknowledgements :-

The author is grateful to the Prof. Chandan Bala, Dean, Faculty of law J.N.V.University, Jodhpur for regular supervision and logistic support during the study period and to Mr Kamlesh Rajpurohit for helping computation type work.

References :-

1. Martin E. Gold, "Non-extradition for political offenses : The communist perspective", Harvard international law journal, 191, (1970).
2. Manuel R. Garcia-Mora, "The nature of political offenses: A knotty problem of extradition law" vol. 7, Virginia law review, 1226, (1962).
3. Id.
4. The universal declaration of human rights, adopted by the united nations general assembly on December 10, 1948 state in article 14 that "everyone has the right to seek and to enjoy in other countries asylum from persecution and that this right may not be invoked in the case of prosecutions genuinely arising from non-political crimes or from acts contrary to the purposes and principles of the United Nations."
5. John Dugard & Christine van den wyngaert, "Reconciling extradition with human rights", The American journal of international law, vol. 92, no. 2, 187 (1998).
6. Mora, supra note 2.
7. Id. at 1227.
8. Id. at 1227.
9. Chandan bala & Renuwati Rajpurohit, "Study the political offence in the extradition", International journal of advanced research and development, vol.6, Issue 1, p.2, (2021).
10. Id. at 2.
11. Saroj Chhabra, "Political offence an exception to extradition", (2019), published Ph.D. thesis, Maharishi Markandeshwar University, Mullana.
12. Id.
13. Saroj Arora, "Legal regime of extradition: National and international perspective", (2013), published Ph.D. thesis, department of law, Punjabi university, Patiala.
14. Michael Plachta, "Contemporary problem of extradition: human rights, grounds for refusal and the principle Aut Dedere Aut Judicare" report on 114th International training course visiting papers 64, available at : <http://www.Unafei.er.jp> (visited on December 12, 2010).
15. Arora, supra note 13, at 98.
16. M. Cherif Bassiouni, "Law and practice of united states" as quoted by Aftam Alam "Extradition and human rights" 48 OKOL 287 (2008)
17. Otis H. Stephens, Jr. John M. Sceb, et.al., (eds.), "Extradition international", encyclopaedia of American civil rights and liberties, available at : <http://www.mathieudeflem.net/> (visited on December 12, 2011)
18. Arora, Supra note 13, at 102
19. Aftab Alam, "Extradition and human rights", 48 Indian journal of international law (IJIL) 90 (2008)
20. Puneet Vyas, "Laws governing extradition : A special reference to Abu Salem's extradition", available at : <http://www.legalserviceindia.com> (visited on December 20, 2011)
21. Universal declaration of human rights, 1948, Article 10-14 ; International conventions on civil and political rights, 1966, Article 14.
22. The European convention for the protection of human rights and fundamental freedoms, 1950, Article 6; and the American convention on human rights, 1969, Article 8
23. Arora, Supra note 13, at 111
24. Id. at 111
25. Id. at 111
26. Id. at 111

Email Id: - renusinghraj123@gmail.com



A Method for Comparing Different Deep Learning Architectures for Sentiment Analysis that is Based on an Experimental Approach

-Dr. Kulvinder Singh, Assistant Professor (Computer Science)

-Ms. Nivedita (Scholar, Computer Science)

Tantia University, Sri Ganganagar(Raj.), India

ABSTRACT :-

This work uses a publicly available unilingual dataset to investigate the efficacy of several seq2seq deep learning architectures for solving harmful speech classification and performing efficient sentiment analysis. To demonstrate the efficacy of the various NLP techniques and confirm the experimental findings of the research, numerical examples are offered together with numerous validation metrics and graphs. We also compare and contrast classic natural language processing models with cutting-edge models such as Transformers' Bidirectional Encoder Representations or BERT.

I. INTRODUCTION :-

Everyone is connected through the internet in today's information age. Multimedia content like as films, files, text messages, and other types of content can now be sent to any location on the planet. We may easily communicate our opinions and address the matter with the present system's highest authority.

While this may appear to be a blessing to our modern culture, it also has certain disadvantages. A single toxic remark can have a negative impact on a person, sabotaging his ability to communicate the genuine objective of the conversation to the wider public.

In such cases, the person may be forced to retract a legitimate comment from various social media sites or online forums. Although constructive criticism is always welcomed by the general public, the use of unpleasant or insulting language does not guarantee that an issue will be rectified.

The consequences of using poisonous comments can be numerous, often leading to a variety of psychological issues in the individual. Individuals may experience depression and anxiety, as well as heightened feelings of sadness and loneliness, irregular sleeping and eating patterns, health problems, and sluggishness.

Because the difficulties listed above are pervasive, we must prohibit particular age groups from accessing dubious websites and devise a means to effectively separate these poisonous contributions. Using these strategies, we can develop a more secure and collaborative internet.

Various groups have addressed these difficulties, including: • University of Thessaly Lamia, Greece's

Convolutional Neural Networks for Toxic Comment Classification.

- Identifying toxicity triggers in online forums.

The authors intend to examine multiple deep learning model approaches in order to determine the optimal model for classifying harmful remarks from various data sources.

The paper compares different seq2seq deep learning models such as simple recurrent neural networks (Simple RNN), gated recurrent unit (GRU), bi-directional recurrent neural networks (Bi-Directional RNN), long short-term memory network (LSTM), and the state-of-the-art model - bidirectional encoder representations from transformers (BERT). The project investigates the model's use with binary classification on solely word-level granularity.

II. MOTIVATION :-

In the age of digitization, one must be able to express oneself freely. With the click of a button, you may now create online content. Posting on social media has the potential to influence a large number of people.

The combination of words used has an impact on a person's intelligence. This concoction of words can be both useful in expressing your feelings and dangerous in ruining the reader's experience.

The author wishes to identify such hazardous content on the internet in order for the internet to grow more capable. The so-called Twitter wars and other distressing comments on online forums provided the impetus for classifying poisonous comments. A single indecent tweet or remark might lead to character assassination or worse. It is the responsibility of online platforms to ensure that dangerous content does not appear on their platforms. It's critical to keep online chats interesting. To do so, it's critical to classify poisonous comments like hate, insults, and threats automatically.

Kaggle built several multi-headed models to recognise toxicity and its subcategories in the 2018 Toxic Comment Classification Challenge. Similarly, in 2019 - Unintended Bias in Toxicity Classification Challenge, the community constructed toxicity models that could work consistently over a wide range of topics. We are using the M60 GPU to create sentiment analysis models with English-only training data in the year 2020.

In this century, our computational power and modeling capabilities have increased dramatically. As a result, we've been able to fully realize our potential to promote healthy online dialogues. The author has devised methods for developing effective hazardous speech classification models.

As a result, the author has concentrated on constructing a model that can generate a forecast for categorising the comments into two groups.

THE DATASET (PART III) -

A. The Complete Dataset :

The authors used the "Toxic Comment Classification" dataset to develop multiple deep learning architectures in order to discover a solution to the natural language processing challenge. Comments from the Wikipedia talk page are included in this dataset. The entire dataset is made up of English-language comments. The dataset contains 223,549 comments with human expertise labelled as 'toxic,' 'threat,' 'obscene,' 'severe toxic,' 'insult,' and 'identity hate.' The dataset is split into two parts: an 80 percent training set and a 20% validation set. There are 21384 harmful and 201081 non-toxic comments in the dataset. In addition, as demonstrated in fig 3.1, the distribution of

harmful data into distinct types of toxicity. The majority of the comments are roughly 500 characters long, but a few go above that.

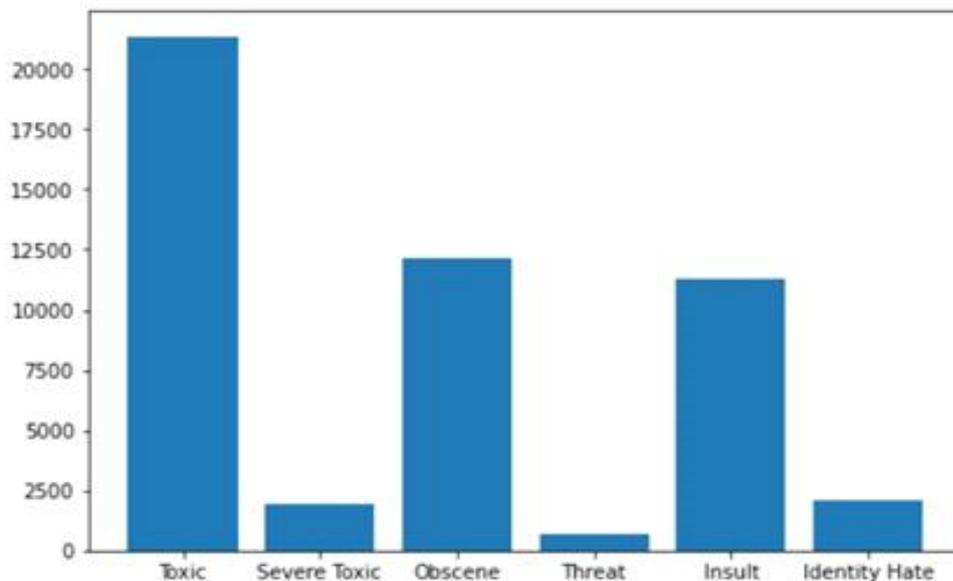


Figure 3.1 shows the distribution of poisonous comments in a dataset, with the horizontal axis indicating the toxicity category and the vertical axis indicating the number of comments for that type.

B. Information on training :-

There are 178,839 comments in the training dataset. For binary categorization, the authors of this study integrated the toxic, threat, severe toxic, insult, obscene, and identity hate into one common class called toxic. As a result, the processed dataset had three columns: unique ids, comments, and harmful labels. The BERT training dataset includes two additional columns: input word id and input mask.

The pie chart in figure 3.2 can be used to visualize the distribution of the training dataset.

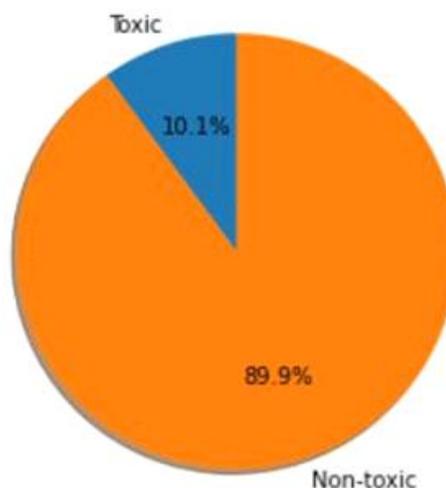


Fig 3.2. Dataset distribution for training data

IV. MODELS :-

We will compare and analyze different deep learning models to determine if a language is hateful or toxic in this study. The performance of the following approaches is compared by the authors:

1. RNN with a simple structure
2. LSTMs \s3. GRUs

RNNs with Bi-Directional Directions (Bi-Directional RNNs)

5. BERT :-

Every model architecture's training is done on the same computer configuration. A. Simple Recurrent Neural Network GPU Training: 1 x Nvidia M60, CPU: 12 Core Intel Xeon CPU E5-2690 v3 @2.6Ghz RAM: 56 GB

We begin with a basic RNN model. Recurrent Neural Networks (RNNs) are an effective model architecture for learning temporal patterns in sequential data. These networks are a subtype of deep neural networks in which the previous stage's output is fed into the next step. Unlike typical neural networks, where all the inputs and outputs are unrelated to each other, we need the ability to recollect prior words in natural language processing where we need to anticipate following words of a phrase. As a result, we utilized RNN to predict whether a sentence contains a poisonous comment because it overcomes the layer relation problem by adding a hidden layer. Because of the vanishing gradient descent concerns, researchers previously concluded that recurrent networks were difficult to train using primitive optimizers like stochastic gradient descent. The authors of the research employ the Adam optimizer to reduce loss in each iteration and construct a highly accurate model for the dataset. We employ tensorflow 2.0 and high level keras api(s) to train the simple recurrent model architecture.

To avoid the deep learning model architecture from overfitting the dataset, the model employs several callback mechanisms such as model checkpoint and early termination. The training dataset, as described in the dataset part, has roughly 178,839 comments, of which only 10% are harmful. A random state of '42' is used to partition the dataset into train and test indices, and it is also used to initialize the internal random number generator. When the code is run numerous times, this makes it easier to review and validate the data. Setting a fixed value for the random state ensures that the same sequence of random numbers is generated each time the code is run. We divided the training data into two parts: 80 percent for training and 20 percent for testing. We can see that all of the harmful categories have converged into a single column when we print some rows from the train dataset, making it a binary classification problem (fig 4.1).

	id	comment_text	toxic
0	0000997932d777bf	Explanation\nWhy the edits made under my usern...	0
1	000103f0d9cfb60f	D'aww! He matches this background colour I'm s...	0
2	000113f07ec002fd	Hey man, I'm really not trying to edit war. It...	0
3	0001b41b1c6bb37e	"\nMore!\nI can't make any real suggestions on ...	0
4	0001d958c54c6e35	You, sir, are my hero. Any chance you remember...	0

fig 4.1. Training dataset head

Tokenizing is a process that divides a piece of text or a comment into smaller pieces called tokens and is done on the training dataset. The keras function tokenize is used to convert the comments into words. Every word in the dataset is represented by a single hot vector with dimensions equal to the vocabulary word count Plus 1. The keras tokenize collects all of the corpus' unique terms, creates a dictionary with the words as keys and the frequency

of their occurrences as values, then arranges the dictionary in decreasing order of counts. When the dataset is seen after tokenization, it can be observed that each word is represented by a digit. After the training data has been tokenized, padding is used to ensure that the convolutions can be computed quickly and that all of the input phrases have the same dimensions. Padding a token is usually done with a vector of zeroes. The keras function of pad sequences of the sequence library is used for padding.

The authors of the research create a sequential model for training when it comes to the model architecture of simple RNN. The next layer is an embedding layer, which takes in input as an n-dimensional one-hot vector for each word and converts it to a 300-dimensional vector, giving us word embeddings comparable to word2vec. The following layer is a Simple RNN layer with 100 units and no dropout or regularization.

Then, without any dropout or regularization, we add 100 RNN units. Finally, we add a single neuron with sigmoid activation function that accepts the output of 100 Simple RNN cells and predicts the results as label 0 or 1 and compiles it using Adam optimizer while monitoring the binary cross entropy loss.

There are 90 million trainable parameters in all. The model is trained for 5 epochs with 512 batch size and achieves 98.59 percent accuracy right away. This model has some overfitting that can be readily corrected using hyper parameter tuning techniques such as adding more RNN units, batch normalization, dropout layers, and so on. The goal is to contrast several simple architectures and discuss the advantages of using one over the other. The model is then put to the test on a dataset with toxicity labels.

On the test set, the model earns an AUC score of 0.90, which is excellent for such a simple and primitive technique.

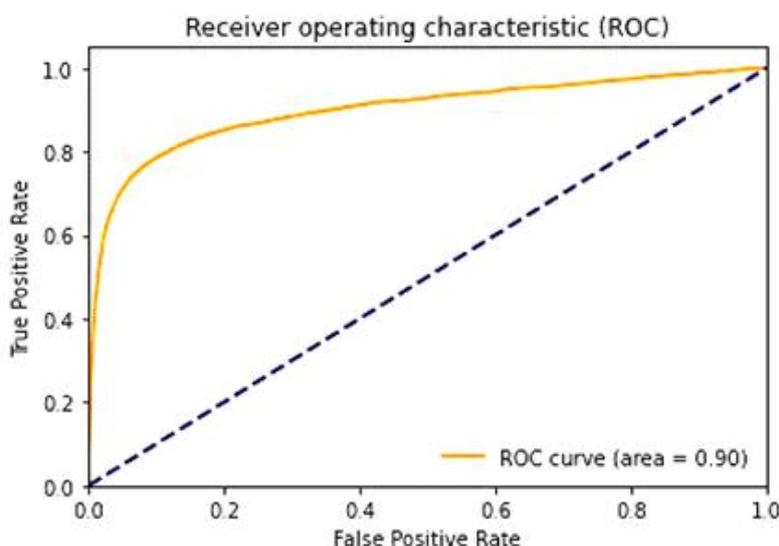


fig 4.2. receiver operating characteristic curve for simple RNN model

B. Short-term memory that lasts a long time (LSTM) :-

The short-term memory problem was solved using long short-term memory (LSTM) and gated recurrent units (GRU) [10]. By tracking long-term dependencies, both LSTM and GRU aim to minimize the vanishing gradient problem. An LSTM is made up of a memory cell and three regulators (input, output, and forget), which are commonly referred to as gates. The knowledge about how the input items are interdependent is stored in the memory cell. The input gate oversees the quantity of information to be used for activation of the LSTM unit, while

the output gate controls and regulates the passage of fresh values in the cell.

Figure 4.3 shows how the LSTM design works. Each line of the input contains a whole vector, with the output of the preceding node feeding into the input of subsequent nodes. The diagram's green circles represent pointwise operations such as vector addition. Red boxes represent learned neural networks. Concatenation is indicated by connecting lines, whereas splitting lines represent the copied text being distributed to different areas.

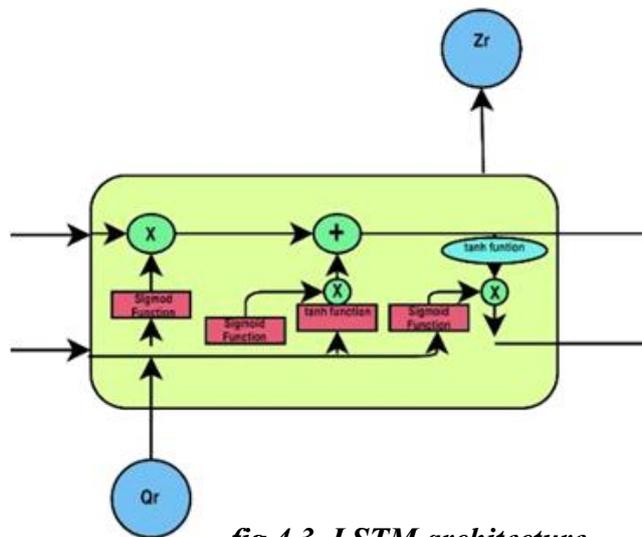


fig 4.3. LSTM architecture

The embedding layer outputs a 300-dimension vector from an n-dimensional one-hot vector. The LSTM layer follows, which produces a 100-dimensional output vector. Finally, in the last layer, a single neuron provides binary toxicity classification. There were approximately 90 million parameters in total, with 160,501 of them being trainable.

The authors of this research choose the Global Vectors for Word Representation (GloVe) technique for word embedding. GloVe creates a co-occurrence matrix with the frequency of words in the context. GloVe eliminates redundancy by using the same vectors for words with comparable meanings. The model was trained using the Adam optimizer with a batch size of 256 comments. The LSTM unit was activated using the sigmoid function. The model was trained over 5 epochs and validated over 44,710 comments on a train dataset of 178839 comments. The model attained a 95.67 percent accuracy with a 98 percent AUC score (fig.4.4), which is extremely impressive, and it also closes the gap between accuracy and AUC. We can see that we employed dropout in this example to avoid overfitting the data.

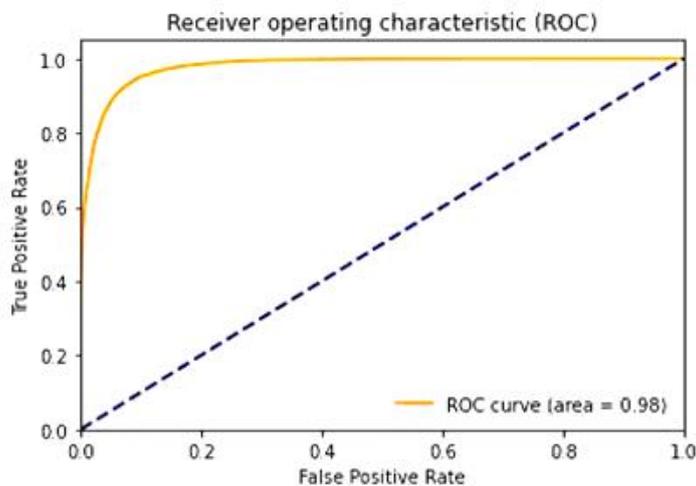


fig 4.4. receiver operating characteristic curve for LSTM model

The Gated Recurrent Unit (GRU) is a type of recurrent unit that is (GRUs) :-

A gated recurrent unit (GRU) controls the flow of information within the unit without requiring a separate memory. The GRU is similar to the LSTM, but with fewer parameters and a forget gate. In GRU, the output is missing. Because the input and state are the same size in GRU, it's simple to generalize. In comparison to the LSTM, GRU requires less memory and time and can produce nearly identical results in terms of accuracy. The GRU can outperform the LSTM units in specific situations. When compared to LSTM units, they can provide better CPU time convergence and generalization.

In prior model architectures, the same tokenization and padding approaches were applied. The first layer is the embedding layer, which takes an nth-dimensional one-hot vector as input and outputs a 300-dimensional vector. The authors used the Keras API to dump a complete 1D feature map using the SpatialDropout1D layer. Dropping a feature map reduces the strong correlation between neighboring frames, which improves the model's generalization performance and reduces the likelihood of overfitting. The GRU layer follows, which produces output vectors with 300 dimensions.

Finally, there is a single neuron with sigmoid activation function that receives input from 300 GRU cells and produces binary classification for harmful or non-toxic output.

For the vector representation of the words, the authors employed the GloVe method. Only 541,201 parameters were trainable out of a total of 90 million. To minimize the loss, the authors employed Adam optimizer. The model is fed a dataset of 178,839 comments with a batch size of 128. Over the course of 5 epochs, the model was refined.

Over a dataset of 44,710 comments, the validation accuracy for each epoch is calculated. The initial validation accuracy at the conclusion of the first epoch was 95.05 percent, and by the fifth epoch, it had grown to 96.46 percent. The AUC score for the model was 98 percent (fig. 4.5), which is the same as the AUC value for the LSTM.

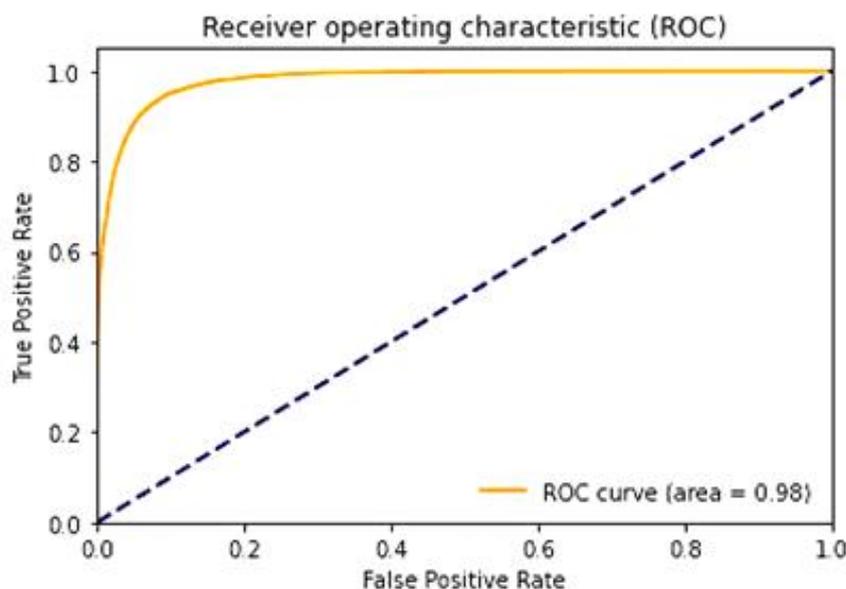


fig 4.5. receiver operating characteristic curve for GRU model

D. Bi-directional recurrent neural networks (Bi-directional recurrent neural networks) are a type of recurrent :

So far, the authors have shown that multiple seq2seq models are efficient and perform well. These algorithms, on the other hand, aren't very good at predicting sentiments based on the last few words of a phrase. We need to change the present recurrent net design we have in place if we wish to make right inferences based on look ahead ability. As a result, [Schuster & Paliwal, 1997] proposed bi-directional recurrent neural networks, which have proven to be quite effective. The aim is to run RNN not only in forward mode, starting from the first symbol, but also in back-to-front mode, starting from the last sign. In bi-directional neural networks, an additional hidden layer is introduced that transfers information backwards, allowing the model to interpret data more flexibly.

The same tokenization and padding procedures are used by the authors as before. We employ word embeddings even with the Bidirectional RNN. Word embeddings allow us to group together words that have similar meanings in order to eliminate repetition. For word embeddings, the authors use Global Vectors for Word Representation (Glove). Glove is an extension of the word2vec technique, which is used to learn word vectors quickly. Moving on to the Bidirectional RNNs model architecture, the authors create a sequential model for training the dataset. We'll utilize the Glove - embedding layer again, which will take the input from the previous phase, which is an n-dimensional one hot vector for each word, and convert it to 300 dimensions.

The Bidirectional RNN layer, which is nothing more than an LSTM with bidirectional word vector processing capabilities, is the next layer in our neural network. We also supply dropout value and recurring dropout values of 0.3 for this Bidirectional, which has 300 units. The final layer is made up of a single neuron with sigmoid activity. Finally, we use the Adam optimizer to construct the model with binary cross entropy loss, with accuracy as the training set measure.

With a batch size of 64, the dataset is trained for 5 epochs. On the training data, the model obtains a 96.06 percent accuracy. When we use the Bidirectional RNN model to infer the test data, we achieve an AUC score of 0.980242, which is the highest of any model so far. On the test set, an AUC of 98 fig (4.6) is very remarkable. The capacity of this model to understand word sequences in both directions is the fundamental reason for its success.

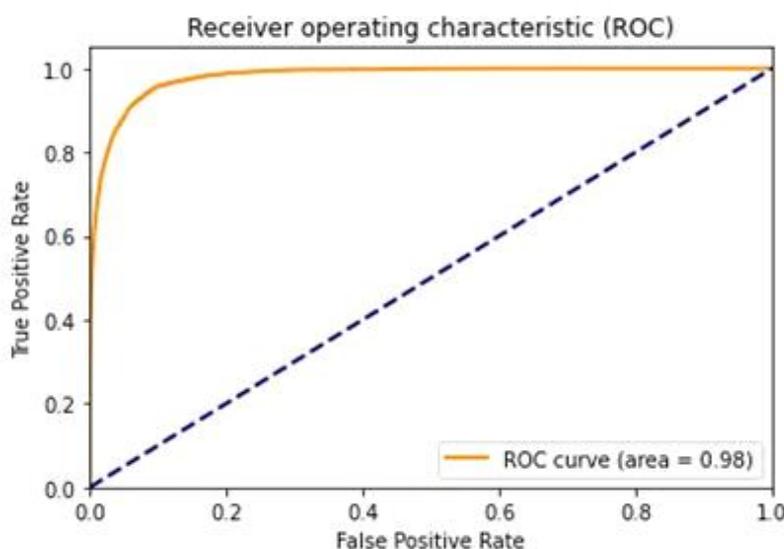


fig 4.6. receiver operating characteristic curve for Bi-directional RNN model

E. Transformer Representations of Bidirectional Encoders (BERT) :-

A work on BERT (Bidirectional Encoder Representations from Transformers) was recently published by Google AI Language.

This study produced outstanding results for a variety of natural language processing (NLP) tasks, including natural language deduction, question answering, sentiment analysis, and a few others.

Bidirectional training of transformers, a prominent attention paradigm for language modeling, is used by BERT. This differs from prior sentiment analysis methods, which scanned text sequences from left to right or merged both ways training. Previously, we've seen a number of high-performing models that use an attention mechanism to correlate encoders and decoders. In, the study introduces the transformers, a newer, simpler network design based simply on attention mechanisms. The recurrence and convolutions are completely ignored in this strategy. We may conclude that the BERT performs admirably in terms of parallelism and trains in a fraction of the time.

The authors even demonstrate that the transformer generalizes successfully with a previously encountered English language comment dataset in the real world. As a result of the preceding findings in this study, it can be concluded that language models that are trained bidirectional have a finer grasp of language context and sequence than single-direction language models.

The procedure for applying BERT in this work is simple; we may use it for a variety of jobs with only a minor layer added to the underlying model. By adding a classification layer before the transformer output, we may execute classification tasks like sentiment analysis. When fine-tuning the BERT model, the majority of the hyperparameters remain intact.

The model parses the sentences and transfers the data it has gathered to the next model. The DistilBERT technique, a lesser variant of BERT created and open-sourced by the HuggingFace team, is shown here. DistilBERT takes the sentence and extracts some information from it, which it then sends on to the next layer. HuggingFace's team developed and open-sourced DistilBERT, a smaller version of BERT. It's a lighter variant of BERT with performance that's close to BERT's.

By changing the previously pre-trained weights and training on the given dataset, we fine-tune the BERT model even more.

We feed the word vectors to our BERT model architecture, just as we did before with tokenization. We input this layer into the DistilBERT layer and use transformers to create the pretrained BERT model architecture.

The model's last layer is made up of a single neuron with a sigmoid activation function, which produces a binary output that allows us to distinguish between poisonous and non-toxic phrases.

We can see that this model has a total of 134 million trainable parameters, giving us a very high level of granularity in terms of data processing. Finally, we assemble the model using binary cross entropy loss, adam optimizer, and a custom learning rate of $1e-5$, with accuracy as the training set measure.

On the training dataset, the authors train the model for 5 epochs and attain an accuracy of 98.66 percent.

When we use the BERT model to pass the test data for inference, we receive an AUC score of 0.99 (fig 4.7), which is the greatest of any model so far. BERT's performance on the test set was remarkable, with a 99

percent accuracy rate. BERT receives the highest training and testing scores, making it a true cutting-edge model.

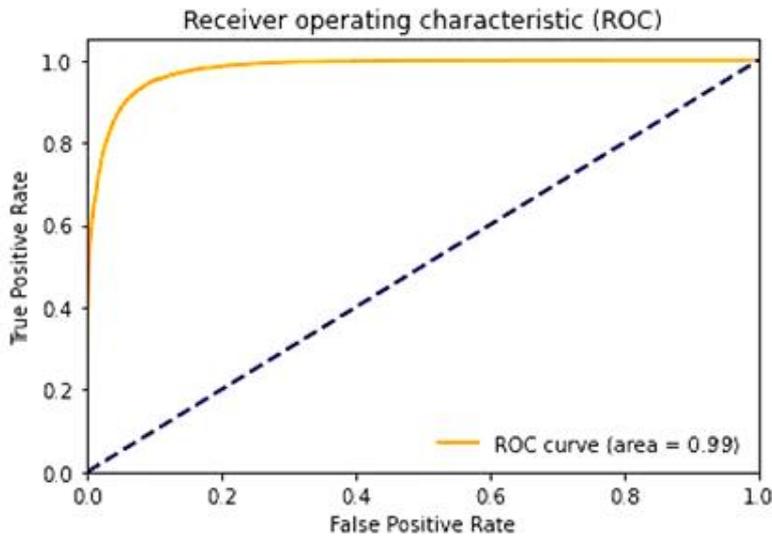


fig 4.7. receiver operating characteristic curve for BERT

F. Summary of model scores :

TABLE 1 . MODEL ROC SCORES

Models	ROC - AUC scores
Simple RNN	0.899157
LSTM	0.978637
GRU	0.980105
Bi-Directional RNN	0.980105
BERT	0.990210

CONCLUSION :-

This paper presented many algorithmic models and their architectures that try to tackle the provided toxic speech categorization problem, as well as some of the significant research challenges in the field of sentiment analysis.

The authors also explained one of the most common uses of sentiment analysis and gave a credible list of algorithms that can be used to execute its solutions.

Many of today's algorithms lack granularity at the word level, and basic techniques are still frequently

utilized in many commercial applications.

In this research, we show how a state-of-the-art model outperforms several classic models and how deep learning techniques can be used to solve one of the world's most difficult issues

REFERENCES :-

1. Pantic I. Online social networking and mental health. *Cyberpsychol Behav Soc Netw.* 2014;17(10):652-657. doi:10.1089/cyber.2014.0070
2. Georgakopoulos, Spiros V., et al. "Convolutional neural networks for toxic comment classification." *Proceedings of the 10th Hellenic Conference on Artificial Intelligence.* 2018.
3. Almerkhi, Hind, et al. "Detecting toxicity triggers in online discussions." *Proceedings of the 30th ACM Conference on Hypertext and Social Media.* 2019.
4. Toxic Comment Classification Challenge Identify and classify toxic online comments [<https://www.kaggle.com/c/jigsaw-toxic-comment-classification-challenge>]
5. Unintended Bias in Toxicity Classification Challenge [<https://www.kaggle.com/c/jigsaw-unintended-bias-in-toxicity-classification>]
6. Mikolov, Tomas, et al. "Learning longer memory in recurrent neural networks." *arXiv preprint arXiv:1412.7753* (2014).
7. Abadi, Martín, et al. "Tensorflow: A system for large-scale machine learning." *12th {USENIX} symposium on operating systems design and implementation ({OSDI} 16).* 2016.
8. Chollet, F., & others. (2015). Keras. <https://github.com/fchollet/keras>.
9. Maite Gimnez, Javier Palanca, Vicent Botti, Semantic-based padding in Convolutional Neural Networks for improving the performance in Natural Language Processing. A case of study in Sentiment Analysis., *Neurocomputing*(2019),doi:<https://doi.org/10.1016/j.neucom.2019.08.096>
10. Hochreiter, Sepp, and Jürgen Schmidhuber. "Long short-term memory." *Neural computation* 9.8 (1997): 1735-1780.
11. Chung, Junyoung, et al. "Empirical evaluation of gated recurrent neural networks on sequence modeling." *arXiv preprint arXiv:1412.3555* (2014).
12. Tompson, Jonathan, et al. "Efficient object localization using convolutional networks." *Proceedings of the IEEE conference on computer vision and pattern recognition.* 2015.
13. Schuster, Mike, and Kuldip K. Paliwal. "Bidirectional recurrent neural networks." *IEEE transactions on Signal Processing* 45.11 (1997): 2673-2681.
14. Pennington, Jeffrey, Richard Socher, and Christopher D. Manning. "Glove: Global vectors for word representation." *Proceedings of the 2014 conference on empirical methods in natural language processing (EMNLP).* 2014.
15. Devlin, Jacob, et al. "Bert: Pre-training of deep bidirectional transformers for language understanding." *arXiv preprint arXiv:1810.04805* (2018).
16. Vaswani, Ashish, et al. "Attention is all you need." *Advances in neural information processing systems.* 2017.
17. Sanh, Victor, et al. "DistilBERT, a distilled version of BERT: smaller, faster, cheaper and lighter." *arXiv preprint arXiv:1910.01108* (2019).



भारत में वृद्धावस्था की समस्याएं : वरिष्ठ नागरिकों के अधिकार

Upasana Sharma

Assistant Professor, Maharana Pratap Law College, Chittorgarh.

Abstract :- वृद्धावस्था मानव जीवन से जुड़ा वह यथार्थ है, जिसका सामना प्रायः हर किसी को करना पड़ता है। वृद्धावस्था को जीवन की शाम कहा गया है। इस शाम के गहराने के साथ ही वृद्धावस्था से जुड़ी अनेक समस्याएं सिर उठाने लगती हैं और जीवन की यह शाम बोझिल होने लगती है। वस्तुतः वृद्धावस्था अपने आप में एक ऐसी बीमारी है, जिससे उबर पाना इस उम्र में संभव नहीं रह पाता है। वेदव्यास महाभारत में कहते हैं कि वृद्धावस्था और मृत्यु के वश में पड़े हुए मनुष्य को औषधि, मंत्र, होम और जप भी नहीं बचा पाते हैं। इस बात से हम वृद्धावस्था की भयावहता को समझ सकते हैं। 'वेदव्यास महाभारत में कहते हैं कि वृद्धावस्था और मृत्यु के वश में पड़े हुए मनुष्य को औषधि, मंत्र, होम और जप भी नहीं बचा पाते हैं। इस बात से हम वृद्धावस्था की भयावहता को समझ सकते हैं।'

परिचय :- परिवार के हर सदस्य का यह दायित्व बनता है कि वह घर के बुजुर्गों की देखभाल करे और उन्हें समुचित समय प्रदान करे। बुजुर्गों को आर्थिक सुरक्षा मुहैया करवाना समाज, परिवार और सरकार सभी की जिम्मेदारी बनती है। हमें इससे विमुख नहीं होना चाहिए। बुजुर्गों के प्रति संवेदनशील व मानवीय बर्ताव कर हम एक ऐसा प्रेरक माहौल प्रस्तुत कर सकते हैं, जिससे उनकी स्थिति में सुधार आ सकता है और वे मानसिक संतापों व कष्टों से बच सकते हैं। चूंकि परिवार, समाज की प्रारंभिक इकाई होता है, अतएव यह प्रेरक पहल परिवार ही शुरू होनी चाहिए, ताकि बुजुर्गों के प्रति एक सम्मानजनक और गरिमामय वातावरण निर्मित हो सके। हमें यह याद रखना चाहिए कि हमारे बुजुर्ग परिवार, समाज और राष्ट्र के लिए किसी धरोहर के समान होते हैं, अतः हमें अपनी इन धरोहरों की सेवा तन-मन से करनी चाहिए। ऐसा करके ही हम वृद्धावस्था को अभिशाप बनने में बचा सकते हैं।

बुढ़ापा एक प्राकृतिक प्रक्रिया है, जो अनिवार्य रूप से मानव जीवन चक्र में घटित होती है। यह बुजुर्गों के जीवन में कई चुनौतियाँ लेकर आता है, जो ज्यादातर उनके शरीर, दिमाग, विचार प्रक्रिया और रहने के पैटर्न में बदलाव के कारण होती हैं। वृद्धावस्था मानव शरीर के अंगों की कार्यात्मक क्षमता में गिरावट को संदर्भित करता है, जो ज्यादातर दो शारीरिक परिवर्तनों के कारण होता है, इसका मतलब यह नहीं है कि सब कुछ समाप्त हो गया है। वरिष्ठ नागरिक ऐसे मानव संसाधन का एक अनमोल भंडार है जो विभिन्न प्रकार के ज्ञान, विविध अनुभवों और गहरी अंतर्दृष्टि के साथ उपहार में दिया गया है। हो सकता है कि वे औपचारिक रूप से सेवानिवृत्त हो गए हों, फिर भी उनमें से अधिकांश शारीरिक रूप से स्वस्थ और मानसिक रूप से सतर्क हैं। इसलिए, उचित अवसर दिए जाने पर, वे अपने राष्ट्र के सामाजिक-आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान देने की स्थिति में हैं।

संवैधानिक संरक्षण :- अनुच्छेद 41—कुछ मामलों में काम, शिक्षा और सार्वजनिक सहायता का अधिकार : राज्य आर्थिक क्षमता और विकास की सीमा के भीतर काम, शिक्षा और सार्वजनिक सहायता के अधिकार को सुरक्षित करने के लिए प्रभावी प्रावधान करेगा। बेरोजगारी, बुढ़ापा, बीमारी और अपंगता, और अन्य मामलों में अवांछित आवश्यकता के मामले में।²

अनुच्छेद 46 —और अन्य कमजोर वर्ग के शैक्षिक और आर्थिक हितों को बढ़ावा देना : राज्य कमजोर वर्ग के लोगों के शैक्षिक और आर्थिक हितों को विशेष सावधानी के साथ बढ़ावा देगा..... और सामाजिक अन्याय और सभी रूपों से उनकी रक्षा करेगा।³

हालाँकि, इन प्रावधानों को भारतीय संविधान के चौथे अध्याय यानि निति के निदेशक सिद्धांतों में शामिल किया गया है। निदेशक सिद्धांतों, जैसा कि अनुच्छेद 37 में कहा गया है, किसी भी न्यायालय द्वारा प्रवर्तनीय नहीं हैं।⁴ लेकिन निदेशक सिद्धांत राज्य पर सकारात्मक दायित्व थोपते हैं, यानी उसे क्या करना चाहिए। निदेशक सिद्धांतों को देश के शासन में मौलिक घोषित किया गया है और राज्य को कानून बनाने में उन्हें लागू करने के लिए बाध्य किया गया है। हालाँकि, अदालतें एक निदेशक सिद्धांत को लागू नहीं कर सकती हैं क्योंकि यह किसी व्यक्ति के पक्ष में कोई न्याय संगत अधिकार नहीं बनाता है। यह सबसे दुर्भाग्य पूर्ण है कि राज्य ने एक भी अधिनियम नहीं बनाया है जो सीधे बुजुर्गों से संबंधित है।

कानूनी सुरक्षा :

व्यक्तिगत कानूनों के तहत :- माता—पिता को बनाए रखने का नैतिक कर्तव्य सभी लोगों द्वारा पहचाना जाता है। हालांकि, जहां तक कानून का संबंध है, इस तरह के दायित्व की स्थिति और सीमा एक समुदाय से दूसरे समुदाय में भिन्न होती है।

हिंदू कानून : हिंदुओं के बीच, अपने वृद्ध माता—पिता को बनाए रखने के लिए बेटों के दायित्व, जो अपनी कमाई और संपत्ति से खुद को बनाए रखने में सक्षम नहीं थे, शुरुआती ग्रंथों में भी मान्यता प्राप्त थी। और यह दायित्व पारिवारिक संपत्ति की स्थिति के संदर्भ में निर्भर नहीं था, या किसी भी तरह से योग्य नहीं था। यह एक व्यक्तिगत कानूनी दायित्व था जिसे संप्रभु या राज्य द्वारा लागू किया जा सकता था। हिंदू व्यक्तिगत कानून के तहत माता—पिता के रख रखाव के लिए वैधानिक प्रावधान हिंदू गोद लेने और रख रखाव अधिनियम, 1956 की धारा 20 में निहित है।⁵ यह अधिनियम भारत में पहला व्यक्तिगत कानून कानून है, जो बच्चों पर उनके माता—पिता को बनाए रखने के लिए एक आवेदन लागू करता है। जैसाकि खंड के शब्दों से स्पष्ट है, माता—पिता को बनाए रखने का दायित्व केवल पुत्रों तक ही सीमित नहीं है, और बेटियों का भी माता—पिता के प्रति समान कर्तव्य है। यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि केवल वे माता—पिता जो किसी भी स्रोत से अपना भरण—पोषण करने में आर्थिक रूप से असमर्थ हैं, इस अधिनियम के तहत भरण—पोषण प्राप्त करने के हकदार हैं।

मुस्लिम कानून :- मुस्लिम कानून के तहत तभी बच्चों का कर्तव्य है कि वे अपने वृद्ध माता—पिता का भरण—पोषण करें। मुल्ला के अनुसार : (अ) आसान परिस्थितियों में बच्चे अपने गरीब माता—पिता को बनाए रखने के लिए बाध्य होते हैं, हालांकि बाद में वे अपने लिए कुछ कमाने में सक्षम हो सकते हैं।

(ब) एक बेटा हालांकि तनावपूर्ण परिस्थितियों में अपनी मां को बनाए रखने के लिए बाध्य है, अगर मां गरीब है, भले ही वह कमजोर न हो।

(स) एक बेटा, जो गरीब होते हुए भी कुछ कमा रहा है, अपने पिता का समर्थन करने के लिए बाध्य है जो कुछ भी नहीं कमाता है।⁶

तैयब जी के अनुसार, गरीब परिस्थितियों में माता-पिता और दादा-दादी, हनफ़ी कानून के तहत, अपने बच्चों और पोते-पोतियों से, भरण-पोषण के हकदार हैं, जिनके पास साधन हैं, भले ही वे अपनी आजीविका कमाने में सक्षम हों। मुस्लिम कानून के तहत बेटे और बेटियों दोनों का कर्तव्य है कि वे अपने माता-पिता का भरण-पोषण करें। हालाँकि, दायित्व उनके पास ऐसा करने के लिए साधन होने पर निर्भर है।⁷

ईसाई और पारसी कानून : ईसाई और पारसियों के पास माता-पिता के रख रखाव के लिए कोई व्यक्तिगत कानून नहीं है। जो माता-पिता भरण-पोषण की मांग करना चाहते हैं, उन्हें आपराधिक प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों के तहत आवेदन करना होगा।

आपराधिक प्रक्रिया संहिता 1973 के तहत :- 1973 से पहले, संहिता के तहत माता-पिता के भरण-पोषण का कोई प्रावधान नहीं था। हालाँकि, विधि आयोग ऐसा प्रावधान करने के पक्ष में नहीं था। इसकी रिपोर्ट के अनुसार : ऐसे प्रावधान के लिए cr.pc उपयुक्त स्थान नहीं है। इस प्रकार की संक्षिप्त कार्यवाही में बच्चों के बीच विनियोग करने वाले माता-पिता को दी जाने वाली भरण-पोषण की राशि में काफी कटिनाई होगी। यह वांछनीय है कि इस मामले को दीवानी न्यायालयों द्वारा निर्णय के लिए छोड़ दिया जाए।

हालाँकि, यह प्रावधान पहली बार आपराधिक प्रक्रिया संहिता 1973 की धारा 125 में पेश किया गया था।⁸ यह भी स्थापित होता है कि माता-पिता का मानना था कि दूसरे पक्ष के पास पर्याप्त साधन हैं और उन्होंने उसकी उपेक्षा की या उसे बनाए रखने से इन्कार कर दिया, अर्थात्, माता-पिता, जो करने में असमर्थ हैं खुद को बनाए रखना। यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है किसी आर.पी.सी. 1973, एक धर्म निरपेक्ष कानून है और सभी धर्मों और समुदायों के व्यक्तियों को नियंत्रित करता है। विवाहित बेटियों सहित बेटियों का भी कर्तव्य है कि वे अपने माता-पिता का भरण-पोषण करें।

माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों का भरण-पोषण और कल्याण अधिनियम, 2007;⁹

भारतीय समाज के पारंपरिक मानदंडों और मूल्यों ने बुजुर्गों की देखभाल करने पर जोर दिया। हालाँकि संयुक्त परिवार प्रणाली के खत्म होने के कारण बड़ी संख्या में बुजुर्गों की देखभाल उनके परिवार द्वारा नहीं की जा रही है। नतीजतन, कई वृद्ध व्यक्ति, विशेष रूप से विधवा महिलाएं अब अपने गोधूलि वर्ष अकेले बिताने के लिए मजबूर हैं और भावनात्मक उपेक्षा और शारीरिक और वित्तीय सहायता की कमी का सामना कर रहे हैं। इससे स्पष्ट रूप से पता चलता है कि वृद्धावस्था एक बड़ी सामाजिक चुनौती बन गई है और वृद्ध व्यक्तियों की देखभाल और सुरक्षा पर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है। हालाँकि माता-पिता दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के तहत भरण-पोषण का दावा कर सकते हैं, यह प्रक्रिया समय लेने वाली होने के साथ-साथ महंगी भी है। इसलिए, माता-पिता के लिए भरण-पोषण का दावा करने के लिए सरल, सस्ते और त्वरित प्रावधान किए जाने थे। इसलिए, एक विशेष कानून जिसे 'माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों का भरण-पोषण और कल्याण अधिनियम, 2007' कहा जाता है, ऐसे व्यक्तियों पर एक दायित्व डालने के लिए लाया गया है जो ऐसे वृद्ध रिश्तेदारों को बनाए रखने के लिए अपने वृद्ध रिश्तेदारों की संपत्ति विरासत में लेते हैं और इसके लिए प्रावधान करने का भी प्रस्ताव करते हैं। बुढ़ापा स्थापित करना गरीब वृद्ध व्यक्तियों को रख रखाव प्रदान करने के लिए घर। यह

अधिनियम वरिष्ठ नागरिकों को बेहतर चिकित्सा सुविधाएं प्रदान करने और उनके जीवन और संपत्ति की सुरक्षा के प्रावधानों के साथ-साथ निम्नलिखित के लिए भी प्रावधान करने के लिए अधिनियमित किया गया है।

- (अ) माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों को आवश्यकता-आधारित रख रखाव प्रदान करने के लिए उपयुक्त तंत्र स्थापित किया जाना;
- (ब) वरिष्ठ नागरिकों को बेहतर चिकित्सा सुविधाएं प्रदान करना;
- (स) वृद्ध व्यक्तियों के जीवन और संपत्ति की सुरक्षा के लिए एक उपयुक्त तंत्र के संस्थागतकरण के लिए; तथा
- (द) प्रत्येक जिले में वृद्धाश्रमों की स्थापना।

सरकारी सुरक्षा :- भारत सरकार ने 13 जनवरी, 1999 को वृद्ध व्यक्तियों के लिए राष्ट्रीय नीति को मंजूरी दी ताकि कल्याणकारी उपायों में तेजी लाई जा सके और बुजुर्गों को उनके लिए लाभकारी तरीके से सशक्त बनाया जा सके। इस नीति में निम्नलिखित प्रमुख चरण शामिल थे।

- (क) उन व्यक्तियों के लिए सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए पेंशन फंड की स्थापना जो असंगठित क्षेत्र में सेवा कर रहे हैं,
 - (ख) प्रत्येक 3-4 जिलों के लिए वृद्धाश्रम और डे केयर सेंटर का निर्माण,
 - (ग) 60 वर्ष से अधिक उम्र के लोगों के लिए संसाधन केंद्रों और पुनर्रोजगार ब्यूरो की स्थापना,
 - (घ) शहरों के भीतर और बीच यात्रा के लिए रियायती रेल/हवाई किराए, यानि ट्रेन में 30 प्रतिशत छूट और इंडियन एयरलाइंस में 50 प्रतिशत की छूट,
1. सभी सार्वजनिक अस्पतालों में वृद्धावस्था की अनिवार्य देखभाल सुनिश्चित करने के लिए कानून बनाना।
 2. न्याय और अधिकारिता मंत्रालय ने एज वेल फाउंडेशन नामक वृद्ध व्यक्ति के लिए एक राष्ट्रीय परिषद की स्थापना के संबंध में घोषणा की है। यह उनके लिए जीवन को आसान बनाने के उपायों पर वृद्धों की राय लेगा।
 3. स्कूली बच्चों को बुजुर्गों के साथ रहने और काम करने के लिए संवेदनशील बनाने का प्रयास। चौबीसों घंटे हेल्पलाइन स्थापित करने और वृद्ध व्यक्तियों के सामाजिक बहिष्कार को हतोत्साहित करने का काम शुरू किया जा रहा है।
 4. सरकारी नीति पेंशन, भविष्य निधि (पीएफ), ग्रेच्युटी आदि के शीघ्र निपटान को प्रोत्साहित करती है ताकि सेवानिवृत्त व्यक्तियों को किसी भी कठिनाई से बचाया जा सके। यह कराधान नीतियों को अधिक संवेदनशील बनाने के लिए भी प्रोत्साहित करता है।
 5. यह नीति उनकी स्वास्थ्य देखभाल आवश्यकताओं को भी उच्च प्राथमिकता देती है।
 6. सेक के अनुसार, आयकर अधिनियम के 88-बी, 88-डी और 88-डीडीबी में वृद्ध व्यक्तियों के लिए कर में छूट है।
 7. भारतीय जीवन बीमा निगम (एलआईसी) भी वृद्ध व्यक्तियों के लाभ के लिए कई योजनाएं प्रदान कर रहा है, अर्थात् जीवन धारा योजना, जीवन अक्षय योजना, वरिष्ठ नागरिक इकाई योजना, चिकित्सा बीमा योजना।
 8. पूर्व प्रधानमंत्री ए.बी. वाजपेयी ने वृद्ध व्यक्तियों के लाभ के लिए 'अन्नपुराण योजना' भी शुरू की। इस योजना के तहत लावारिस वृद्धों को हर माह 10 किलो भोजन दिया जा रहा है।
 9. शहरी एवं ग्रामीण निम्न आय वर्ग के लिए शासकीय योजनाओं के अन्तर्गत निर्मित आवासों में से 10

प्रतिशत वृद्धजनों को आसान ऋण पर आवंटित करने का प्रस्ताव है। नीति का उल्लेख है :

आवास कॉलोनियों का ले आउट बुजुर्गों की जरूरतों और जीवन शैली का जवाब देगा ताकि उनकी गतिशीलता में कोई शारीरिक बाधा न हो; उन्हें भूतल आवंटित किया गया है; और समाज के पुराने सदस्यों के साथ उनका सामाजिक संपर्क मौजूद है।¹⁰

इन सभी प्रयासों के बावजूद, बुजुर्गों को जीवन में बदलती परिस्थितियों के साथ तालमेल बिठाने और यथासंभव युवा पीढ़ी के साथ सामंजस्य बिठाने की कोशिश करने की आवश्यकता के बारे में बताने की जरूरत है।

यह बताया जा सकता है कि हाल ही में मद्रास उच्च न्यायालय की मदुरै पीठ ने फैसला सुनाया है कि विकलांग व्यक्तियों (समान अवसर, अधिकारों की सुरक्षा) की धारा 47 के तहत एक सरकारी कर्मचारी, जो अपनी सेवा अवधि के दौरान विकलांग है, को दिए जाने वाले लाभ और भरा हुआ भागीदारी) अधिनियम, 1995 को केवल सात प्रकार की चिकित्सा स्थिति को सीमित नहीं किया जा सकता है जिसे अधिनियम में विकलांगता के रूप में परिभाषित किया गया है। सात चिकित्सा स्थितियां हैं अंधापन, कम दृष्टि, कुष्ठ। ठीक होने, सुनने में अक्षम, चलने में अक्षमता, मानसिक मंदता और मानसिक बीमारी।¹¹ न्यायमूर्ति एफ.एम. इब्राहिम और जस्टिस के वेंकटरमण ने कहा : हमें लगता है कि अगर कोई व्यक्ति अधिनियम के तहत राहत का दावा करने वाले व्यक्ति के दरवाजे पर दस्तक देता है तो अदालत अपनी आंखें बंद नहीं कर सकती है। भारत जैसे कल्याणकारी राज्य में, उदार कानून के लाभों को केवल अति तकनीकी के आधार पर अस्वीकार नहीं किया जा सकता है यह ध्यान दिया जा सकता है कि यह अधिनियम सीधे तौर पर वृद्ध व्यक्ति से संबंधित नहीं है, लेकिन इस अधिनियम में निर्धारित सात चिकित्सा स्थितियां वृद्ध व्यक्ति के सामान्य लक्षण हैं।

निष्कर्ष :- यह कहकर निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि बुजुर्गों की समस्या को तत्काल और अत्यंत सावधानी से संबोधित किया जाना चाहिए। वृद्ध व्यक्ति की सुरक्षा के लिए विशेष प्रावधान के लिए संविधान में संशोधन करने और इसे मौलिक अधिकार की परिधि में लाने की तत्काल आवश्यकता है। संयुक्त परिवार प्रणाली के पतन, परिचित बंधनों के विघटन और वृद्ध व्यक्ति के लिए सम्मान की हानि के साथ, आधुनिक समय में परिवार को उनके लिए सुरक्षित स्थान नहीं माना जाना चाहिए। इस प्रकार, उप शामक देखभाल सहित वरिष्ठ नागरिक के कल्याण और अतिरिक्त सुरक्षा के लिए एक अधिनियम बनाना राज्य का संवैधानिक कर्तव्य होना चाहिए।

संदर्भ :-

1. श्रीमद्भगवद्गीता सार।
2. भारतीय संवैधानिक विधि, अनुच्छेद-41
3. भारतीय संवैधानिक विधि, अनुच्छेद-46
4. भारतीय संवैधानिक विधि, अनुच्छेद-37
5. हिन्दू दत्तक मुद्रण एवं भरण-पोषण अधिनियम, 1956
6. मुल्ला - मुस्लिम विधि (पुस्तक)
7. बदरुद्दीन तैयब जी की जीवनी।
8. आपराधिक प्रक्रिया संहिता, 1973
9. माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों का भरण-पोषण अधिनियम 2007
10. राष्ट्रीय वृद्धधन नीति-1999
11. विकलांग व्यक्ति अधिनियम, 1995



कामायनी में मानव के अधिकार एवं उनके मध्य समरसता

डॉ. वन्दना तिवारी

असिस्टेंट प्रोफेसर (हिन्दी विभाग), श्री जैन पी.जी. कॉलेज, बीकानेर (राजस्थान)

शोध सारांश

कामायनी आधुनिक युग का अमर महाकाव्य है। कामायनी में मानवता के उस विकास का वर्णन है, जिसमें उठती-गिरती मानवता निरंतर गतिमान रहती है। मानव मन का अंतः विश्लेषण करते हुए प्रसाद जी ने अनेक भावनाओं का आरोह-अवरोह दिखाया है। कथाक्रम की दृष्टि से कामायनी की कथा का आधार पौराणिक एवं ऐतिहासिक है। शतपथ ब्राह्मण की जलप्लावन की घटना से लेकर पुराणों में बिखरी हुई सामग्री तक का प्रयोग प्रसाद ने किया है। कवि ने बताया कि देव संस्कृति का विकास मानव के लिए अभिप्रेरित नहीं है और न यह उसका लक्ष्य है उसका लक्ष्य है, समरसता के द्वारा आनंद की प्राप्ति, भावनाओं, कर्तव्य और अधिकारों का समन्वय ही समरसता है। नारी-पुरुष, हृदय-बुद्धि, सुख-दुख, आशा-निराशा आदि सभी दृष्टिकोणों से कामायनी का लक्ष्य जीवन में सामंजस्य का प्रयास है।

मुख्य शब्द – सभ्यता, समाज, यथार्थ, समरसता, मानवता, अधिकार।

प्रस्तावना

'कामायनी' महाकाव्य प्रसाद की अद्भुत कृति है। कामायनी की कथा में बताया है कि किस तरह देव-सृष्टि के विध्वंस के उपरान्त श्रद्धा और मनु के संयोग से मानव-सृष्टि का विकास हुआ और मानवता के विकास का सर्वांगीण इतिहास अंकित किया गया है। इस कथा में भारतीय संस्कृति के सत्-असत् दोनों पक्षों का निरूपण करते हुए यह दिखाने की भी चेष्टा की है कि मानव के लिए दोनों पक्षों की नितान्त आवश्यकता है, परन्तु दोनों में समन्वय तथा समरसता का होना अनिवार्य है। अन्यथा मानव में असत् कार्यों की प्रबलता होने से वह अपने अधिकारों का दुरुपयोग करते हुए दुष्कर्मों में प्रवृत्त हो जायेगा।

शोध की उपादेयता एवं उद्देश्य

कामायनी की कथा का आरम्भ एक भयंकर जल-प्लावन से बचे हुए मानव-जाति के आदि पुरुष तक मनु से होता है। मनु जानते हैं कि उनकी देव जाति बहुत ही समृद्धशाली थी। उनमें अपार बल, वैभव और आनन्द भरा हुआ था तथा समस्त दिशाओं में उनकी कीर्ति एवं शोभा का प्रसार था, परन्तु कुछ समय पश्चात इस अपार बल-वैभव एवं अजेय शक्ति के परिणाम स्वरूप देवताओं में दम्भ, विलासिता आदि की अधिकता हो गई, वे अपने अधिकारों एवं कर्तव्य को भूलकर निरनतर नृत्य, गान, सुरा-पान आदि विलास क्रीड़ाओं में निमग्न रहने लगे। इतना ही नहीं, उस देवजाति में पशु यज्ञों की भी अधिकता हो गई और वे निस्संकोच भाव से निरीह पशुओं की बलि देने लगे। देवों के दंभ, अहंकार निर्बाध विलास, पशुबलि की अधिकता के कारण ही विनाशकारी भयंकर जल प्लावन आया।

इसका समाधान प्रसाद जी ने यह बताया है कि अतिशयता, अत्यधिकता का दुष्परिणाम ही होता है। अतः संयमित जीवन से ही मनुष्य का उचित उत्कर्ष संभव है। मनुष्य को अपने अधिकारों एवं कर्तव्य के बीच समन्वय करके चलना चाहिए।

जीवन के किसी भी क्षेत्र में किसी भी के लिए भी हिंसा मानवता की शत्रु है। एक व्यक्ति शक्तिशाली बनकर दूसरों की निरीहता का लाभ उठाए, अपनी शक्ति प्रदर्शन करें और उस पर मिथ्या अहंकार करे, यह विचार और व्यवहार मानव विरुद्ध तथा पूरी मानवता के लिए घातक है। कामायनी जियो और जीने दो, के मानवीय अधिकार की प्रतिपादक है। मनु के द्वारा निरीह पशुओं की बलि पर श्रद्धा उन्हें धिक्कारते हुए उनसे प्रश्न करती है—

“और किसी की फिर बलि होगी,
किसी देव के नाते
कितना घोखा ! उससे तो,
हम अपना ही सुख पाते।
ये जो प्राणी बचे हुए है,
इस अचला जगती के,
उनके कुछ अधिकार नहीं,
क्या वे सब ही हैं फीके।”

श्रद्धा के माध्यम से प्रसाद जी ने कामायनी में बताया है कि मानव के अतिरिक्त प्राणियों को भी इस धरती पर जीने का, स्वच्छंद विचरण करने का उतना ही अधिकार है जितना कि मानवों को। यह पृथ्वी उतनी ही सब की है, जितनी मानव की किंतु अपने मद में चूर मनुष्य अपने स्वार्थ के लिए सब कुछ नष्ट करता जा रहा है। वह भूल चुका है कि समन्वय और संतुलन से ही मानव इस सृष्टि का विकास एवं उस पर अधिकार कर सकता है। इन स्थितियों को प्रसाद जी ने बहुत अच्छी तरह समझा है और समझाया है कामायनी की नायिका श्रद्धा ने बताया है कि मानवतावाद में सबके लिए जगह है –

"अपने में सब कुछ भर,
कैसे व्यक्ति विकास करेगा?
यह एकांत स्वार्थ भीषण है,
सबका नाश करेगा 2

'कामायनी' संघर्ष सर्ग में प्रसाद जी ने बताया है कि मनुष्य की यह सामान्य प्रवृत्ति है कि वह अधिकारों की लड़ाई तो लड़ता है, किन्तु कर्तव्य की चर्चा तक नहीं करना चाहता। कर्तव्य के प्रति उपेक्षा-भाव और अधिकार के प्रति मोह भी मानवता के लिए एक संकट ही है। कृष्ण मुरारी मिश्र लिखते हैं—

"अधिकारों का मोह मानव-जीवन की एक महत्वपूर्ण समस्या है। प्रसाद जी का मत है कि मानव समाज में प्रत्येक अधिकारी के अधिकारों पर नियंत्रण होना चाहिए। निर्बाधित अधिकार किसी को भी नहीं दिए जाने चाहिए क्योंकि ऐसे अधिकारी ही मानवता को विघटित करते हैं।"

स्वप्न सर्ग में मनु इड़ा से प्रणय निवेदन करते हैं। इड़ा के अस्वीकार करने पर मनु आवेश में आकर इड़ा के साथ बलात्कार करना चाहते हैं मनु के इस दुर्व्यवहार को देखकर सारी देव व प्राकृतिक शक्तियाँ क्रुद्ध हो उठती हैं। इड़ा ने मनु को समझाना आरम्भ किया कि यदि नियमों को बनाने वाला ही अपने नियमों का पालन नहीं करेगा तो फिर यह निश्चित जानो कि सब कुछ नष्ट हो जायेगा। वह कहती है।

"मनु सब शासन स्वत्व तुम्हारा सतत निबाहें,
तुष्टि, चेतना का क्षण अपना अन्य न चाहें।

आह प्रजापति यह न हुआ है, कभी न होगा,
निर्बाधित अधिकार आज तक किसने भोगा?

‘कामायनी’ में मनु के माध्यम से प्रसाद ने बताने का प्रयास किया कि नियमों को बनाने वाला ही अपने अधिकारों का गलत उपयोग करेगा तो विनाश निश्चित है। ‘कामायनी’ अधिकार और कर्तव्य के संतुलन की बात करती है। वह समरसता और समन्वय पर बल देती है। यह विचार मानवता का प्रबल पोषक है। समरसता के माध्यम से प्रसाद समानता, सामंजस्य और बंधुत्व का समर्थन करते हैं। श्रद्धा अपने पुत्र को समरसता का उपदेश देती है—

“सबकी समरसता का प्रचार कर,
मेरे सुत सुन माँ की पुकार।”

निष्कर्ष

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि अधिकारों का निर्वाध रूप से प्रयोग करने से मानव का कल्याण नहीं हो सकता है। इसी के कारण विश्व में सर्वत्र संघर्ष, विप्लव, युद्ध आदि दिखाई देते हैं। इसलिए उन्होंने कामायनी में अधिकार और कर्तव्य के मध्य समरसता की भावना को प्रस्तुत किया है जिससे मानव उसे अपनाकर अपना जीवन युगों—युगों तक सुखी बना सकता है।

संदर्भ ग्रंथ—

1. कामायनी – जयशंकर प्रसाद पृष्ठ 67 राजकमल प्रकाशन
2. छायावादी काव्य
में सौन्दर्य चेतना – कृष्ण मुरारी मिश्र पृष्ठ 186 प्रगति प्रकाशन आगरा।
3. कामायनी – जयशंकर प्रसाद संघर्ष सर्ग पृष्ठ 186
4. कामायनी – जयशंकर प्रसाद पृष्ठ 135

सहायक ग्रंथ

1. कामायनी भाष्य – द्वारिका प्रसाद सक्सैना
2. प्रसाद काव्य कोश – सुधाकर पाण्डेय
3. कामायनी सौन्दर्य – डॉ. फतेह सिंह
4. कामायनी में काव्य प्रवृत्ति – कामेश्वर प्रसाद सिंह
5. युग मनु प्रसाद – गिरीश चन्द्र त्रिपाठी

पता:— 5.ब.108 जयनारायण व्यास कॉलोनी, बीकानेर
दूरभाष नं. 9468804427, 9414138444
anilshukla108@gmail.com



HOW LAW PLAY A ROLE OF SAFEGUARD FOR THE HUMAN RIGHTS OF UNDERTRIAL PRISONERS

- Varsha Panwar

Assistant Professor School of Law, Maharaja Ganga Singh University, Bikaner

Abstract :-

In the present time the biggest challenge before any government or judiciary system is to provide proper protection to the human rights of the citizens of that state. Human rights are such rights which are necessary for their overall development because of being born as human.

It is said that where there is a right there is a remedy that is where the rights have been given to any person in the constitution not to be provided in the same law that if these rights are violated in any way by any other person or system. Many remedies will also be provided to the person whose rights have been violated by law.

Every person is considered Equally before the Indian constitution similarly, in the code of criminal procedure there are many types of provision for the protection for every person whether he is a victim or accused.

In this article we would like to see whether the Indian Law has been successful in adopting the proper method for the protection of human rights of undertrial prisoners or not?

Introduction :-

There is a close relationship between human rights and police interrogation. Before knowing their relationship, it would be very important for us to gather some general information about human rights and Police. Human rights are the rights which are necessary for subsistence of any person by virtue of being born as a human being they are provided by the law in the society.

There are few main reasons behind establishing law of which there are two main reasons.

1. To work for the protection of human rights.
2. To provide provisions for maintaining peace and security in society or country.

After making the law the responsibility of discharging lies on the strong shoulders of the judiciary and police.

The judiciary plays an Important role in providing justice to the aggrieved party from the detection of a criminal to providing punishment. But in this whole process one aspect which the judiciary or the police has to take care of them is the human rights of the accused or the criminal or the persons arrested.

India being a signatory to Universal Declaration of human rights, international covenant on economic social and cultural rights and other international instruments is legally as well as morally committed to ensure basic human rights to all its citizens and enacted law accordingly. – Justice Anand

Human Rights :-

Human rights are those rights which belongs to every human being because he is human regardless of nationality or race or religion or gender. Human rights are those rights which are inherent in our nature without whom we cannot live like human. Human rights and fundamental freedoms help us to develop our qualities, knowledge, talent and intuition.

Human rights can also be called fundamental rights because rights are given to us by nature, they cannot be taken away by any government or legislative machinery and it's described in the constitution.

It is also described in the constitution that the legal duty to protect the human rights also includes the duty to respect them. Not only human rights have been given so much importance in the Indian constitution but at the international level also the important role of human rights has been accepted to the overall development of human life.

Police :-

We do not have any literal definition of the term 'police' in Indian law neither in the Criminal procedure code, 1973 nor in Police act, 1881. The police act when all is said and done, just examined the design and association of the police power in a specific state. According to the Black's law word reference, 'Police' signifies an administrative office which is accused of the conservation of public request, public security and control of crimes.

The idea of police as a coordinated body was created in England during the 1800s with the foundation of London first municipal force heavily influenced by Sir Robert Peel.

Provisions for the Protections of human rights in the Indian constitution -

1. Rights to equality comprising article 14 to 18 of which article 14 is the most important.
2. Right to freedoms comprising articles 19 to 22 which guaranteed several freedoms the most important of which is the freedom of speech.
3. Right to constitutional remedies is secured by article 32 to 35. These articles provide the remedies to enforce the fundamental rights and of these the most important is article 32.

Provisions made in the Indian constitution for the protection of human rights of undertrial Prisoners-One of the main reasons behind the inclusion of fundamental rights in the Indian constitution was India had suffered to a great extent the burnt of inequality during the British rule. The framers of the constitution were trying to give a respectable status in the society to all the individuals by providing them with fundamental rights. They made provisions for fundamental rights for all citizens according to article 14 of the constitution all persons are equal before the law, where article 21 provides that the life and personal liberty of every person shall be protected by law.

Article 14 -

• In access to justice – Anita kushwaha v. Pushp Sudan

The Supreme Court determined that access to justice is the component of the rights guaranteed under article 14 and 21 of the constitution. There are main components that constitute the essence of access to justice.

1. An effective adjudication mechanism must be made by state.
2. This provision must be reasonably accessible taking into account the system distance.
3. The process of adjudication must be speedy.

Article 21-Right to life and personal liberty

Article 21 reads as “No person shall be deprived of his life or personal liberty except according to procedure established by law”. This right has been held to be the heart of the constitution, the most organic and progressive provision in our living constitution, the foundation head of our laws.

Article 21 secures two rights –

- A. Right to life; and
- B. Right to personal liberty.

Right to free legal aid -

The court further laid down that right to free legal aid at the cost of the state to an accused, who could not afford legal service for the reasons of poverty, Indigence or incommunicado situation, was part of fair justice and Reasonable procedure implicit in article 21. free legal aid to the indigent has been declared to be “a state’s duty and not government charity.”

Rights to speedy trial :-

In Hussainara khatoon v. Home secretary State of Bihar –it was brought to the notice of the supreme court that an alarming large number of men, women, children including, were kept in prisons for years awaiting trial in courts of law. The court took a serious note of the situation and observed that it was a crying shame on the judicial system which permitted incarceration of men and women for such long periods of time without trials.

In A.R. Antuly v. R.S.Nayak –a constitution bench of five learned judges of the supreme court dealt with the question and laid down certain guidelines for ensuring speedy trial of offences.

Right to fair investigation :-

Stating that a “trial” encompasses investigation, inquiry, trial, appeal and re-trial the entire range of scrutiny includes crime detection and adjudication on the basis of thereof, the Apex court said that, free and fair trial had been said to be the sine qua non of article 21.

The Apex court in Zahira habibullah sheikh vs state of Gujarat, said that right to fair trial be available not only to the accused but also to the, their family members and relatives as also, the society at large. The right has been held to be a part of rule of law, which is an important facet of article 21 and 14. The propositions underpinning the primacy of credibility and confidence in investigation and a need for a complete justice, judged on the touchstone of public interest and rule of law were recounted in K.S. Karuppasamy v. State of T.N.

Right to Bail :-

In Babu Singh v. State of U.P., The appellants, six in numbers, were acquitted by the session judge in a murder case. In appeal by the State, the high court convicted them and sentenced them to life imprisonment. The appellants applied for bail during pendency of their appeal before the Supreme Court. Keeping in view their circumstances, the Supreme Court held the appellants eligible to be enlarged on bail.

Right against custodial violence – Torture

In Sheela Barse v. State of Maharashtra, the Supreme Court condemned violence non women prisoners confined in the police lock up in the city of Bombay.

Under trials not to be kept with convicts :-

In *Sunil Batra v. Delhi Administration*, it was brought to the notice of the Supreme Court that a substantial number of under-trial prisoners, presumably innocent until convicted, were kept in Tihar Jail with convicts. The court condemned this practice as a “custodial perversity” which offended the test of reasonableness in Article 19 and fairness in Article 21. It was held that these under-trial prisoners by contamination were being made criminals.

From the identification of an offender or accused to getting him punished, all the work is done by the Main Criminal Procedure Code. Throughout this process, the job of the judiciary or the police is not only to provide justice to the victim, but also to take care that at any stage of this process the criminal or accused should not violate the human rights of the person arrested. Ho. For this some provisions have been made in the Code of Criminal Procedure.

In *Joginder Singh v/s state of Uttar Pradesh*, the Supreme Court has prescribed the important guiding principle with regard to the arrest of a person in the course of investigation so that the illegal arrest of the person can be reviewed court has also led down that a person cannot be arrested on the mere suspicion of having been involved in an offence.

While arresting a person the police officer is required to satisfy this fact there is reasonable justification for arresting him the court has laid down the following principles in this regard.

1. Arrest person, if he prays, then to any of his friends, relatives or any other persons whom he knows or who may be interested in his welfare, arrested him and the place where he is detained informed as soon as possible.
2. This will be recorded in the police diary. Who was informed in this regard?
3. the police officer brings the arrested person to the police station tell him about his rights

Under-trial and their release- exploring the legal dispensation :

Problem – Indiscriminate arrests :-

Solution- section 41 Of Criminal Procedure code ,1973 – Any police officer may without an order from a magistrate and without a warrant, arrest any person- who commits, in the presence of a police officer, a cognizable offence.

Delay in Investigation – legal provisions also made. To solve out this problem.

According to Section 167 of Criminal Procedure Code – Procedure when investigation cannot be completed in 24 hours : if there are grounds for believing that the accusation or information is well founded ,the officer in charge of the police station or the police officer making the investigation ,if he is not below the rank of sub inspector ,shall forthwith transmit to the nearest Judicial Magistrate a copy of the entries in the diary hereinafter prescribed relating to the case ,and shall at the same time forward the accused to such Magistrate.

Detention in bailable cases owing to poverty :-

According to section 436 of Criminal Procedure Code -In what cases bail to be taken

Section 436A – Maximum period for which an Undertrial prisoners can be detained

CJI Launched software ‘FASTER’ to transmit court orders swiftly–

Chief Justice of India NV Ramana on 31 March launched a ‘Fast and Secured Transmission of Electronic Records’ a digital platform to communicate interim orders, stay orders, bail orders etc of the apex court to the

concerned authorities through a secured electronic communication channel.

FASTER Was launched after the bench headed by CJI Ramana took Suo- Motu cognizance even after granting of bail on grounds such as non -receipt or non-verification of judicial orders.

Suggestion :-

Many types of provisions have been enshrined in the Indian legal system for the protection of human rights. The main requirement is that every citizen of the society should get information about them and the method of using them on need can be used mainly only then. When we have knowledge about it, there is a need at the moment. Every person should be aware of his human rights. There is a need for law and order to take necessary steps for the protection of human rights.

Conclusion :-

In this article, the provisions contained in the legal system for the protection of human rights of undertrial prisoners have been discussed, the humane treatment being done to the prisoners, the speedy steps taken by the law system to remove the torture and the time taken for release. Considered. The Indian legal system has been able to act as a safeguard for the protection of human rights of undertrial prisoners. Very commendable work is being done in the field by the present legal system.

References :

1. Man Mohan Joshi, Legal and Social Essay, Page no 20.
2. Dr. S.K. Kapoor, Human Rights, Page no 3.
3. (A.I.R. 2016S.C. 3506)
4. AIR 1979 SC 1360.
5. AIR 1992 SC 1701.
6. AIR 2006 SC 1367.
7. AIR 1978 SC 527.
8. AIR 1983 SC 378.
9. AIR 1980 SC 1579.



माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत महिला अध्यापिकाओं की समस्याओं का विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. तारा स्वामी

व्याख्याता, राजस्थान महिला शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, बीकानेर।

प्रस्तावना :-

महिलाओं की समस्याओं का अध्ययन :-

महिलाओं की शक्ति के परिपेक्ष्य में इतिहास गवाह है कि कोई भी विकास कार्य उन्हें नकार कर नहीं किया जा सकता, निकट भविष्य में विकास के मार्ग पर चलने वाली कोई राह या विकास सम्बन्धी किसी कार्य के लिए वे लोकप्रिय है। योजनाकार और यहाँ तक कि किसान भी पंचायत राज जैसी संभावना को महिलाओं से ही जोड़कर देखते हैं। जीवन के ही पहलू में, देश को विकास के पथ पर अग्रसित करने में महिलाओं की भूमिका अग्रणी एवं प्रशंसनीय है। भारतीय संविधान में विशेष प्रावधान के बावजूद 50 वर्षों में महिलाओं की स्थिति में इतना सुधार नहीं आया है, जितना आना चाहिये या आना आवश्यक है।

नारी मात्र विलास तुष्टि का साधन नहीं है वह प्रकार जूझती रही हैं और जूझ रही है उसमें भी अपनी नारी सुलभ इया, ममता और सौहार्द्र से देश और समाज को उपकृत किया है, जिससे संस्कृति और मानवता सुरक्षित हुई परिस्थिति ने नारी के अस्तित्व को जो नई अर्थवत्ता दी उससे नारी स्वतंत्र व्यक्तित्व के प्रति सजग हो उठी।

प्राचीन समय में पुरुषों की सभाओं में स्त्रियों का जाना भी अनुचित समझा जाता था, प्रार्थना सभा में जाने वाली बहनों का लोग मजाक उड़ाते थे। स्कूल जाने वाली प्रोढ़ लड़कियों की निन्दा की जाती थी। यही वजह थी कि लड़कियां स्कूल जाने में हिचकिचाती थी। मध्यकाल के ठीक बीच के समय में स्त्रियों की शिक्षा को मुस्लिम समुदाय द्वारा सकारात्मक रूप से स्वीकार नहीं किया गया। यही कारण है कि शिक्षित महिलाओं के अधिकांश उदाहरण शाही परिवारों तथा अन्य लोगों में ही मिलते हैं। आधुनिक युग में भी इनका प्रतिशत समस्त वर्तमान भारत में कम है। एक सर्वेक्षण के अनुसार आँकड़े बताते हैं कि मुस्लिम लड़कियों में उनच शिक्षा सम्पूर्ण भारत की अपेक्षा कम है और व्यावसायिक और तकनीकी शिक्षा की अपेक्षाकृत दयनीय स्थिति है।

उद्देश्य :-

किसी कार्य को सुचारक रूप से करने के लिए आवश्यक है कि उस कार्य के उद्देश्यों का निर्धारण किया जाए ताकि उन्हीं उद्देश्यों की पूर्ति करने का प्रयास किया जाए। ये उद्देश्य कार्य को पूरा करने में मार्ग दर्शन करने का कार्य करते हैं और बताते हैं कि किस स्तर तक किया हुआ कार्य सफल रहा है। इसी दृष्टिकोण को

ध्यान में रचाते हुए निम्नलिखित उद्देश्यों को सम्मिलित किया है :-

1. अध्यापिकाओं की समस्याओं की सूची का निर्माण करना।
2. समस्या सूची की समस्याओं को विभिन्न क्षेत्रों में वर्गीकृत करना।
3. समस्या सूची में से प्रभावी समस्याओं का चयन करना।
4. विवाहित और अविवाहित अध्यापिकाओं की समस्याओं में अंतर देखना।
5. अध्यापिकाओं की सेवा प्रकृति के आधार पर समस्याओं में अंतर देखना।

महिला अध्यापिकाओं की समस्याओं का अध्यापन एवं विश्लेषण :-

हिन्दू नारी का घर और समाज इन्हीं दो से विशेष संपर्क रहता है। परन्तु इन दोनों ही स्थानों में उसकी स्थिति जितनी करुण है इसके विचार मात्र से ही किसी का भी हृदय कॉपे बिना नहीं रहता। स्त्री और पुरुष समाज के दो आधार हैं प्रकृति ने इनको समान रूप से बनाया है दोनों ही एक दूसरे के पूरक हैं पृथ्वी ही नहीं अंतरिक्ष में भी स्त्री ने पुरुषों के साथ उड़ान भर अद्भुत सहयोग का परिचय दिया है पर क्या पुरुष प्रधान समाज स्त्रियों को उनके मौलिक एवं नैसर्गिक अधिकार दे पाया है ? यह एक विचारणीय बिन्दु है।

मुगल कालीन संस्कृत की सबसे अधिक व्यापक व दूषित देन पर्दा प्रथा थी, जो भारतीय नारी की शिक्षा एवं श्रृंगार में सबसे बड़ा व्यवधान सिद्ध हुई। दक्षिण भारत में पर्दा प्रथा का सर्वथा अभाव था क्योंकि यहाँ मुस्लिम संस्कृति का प्रत्यक्ष प्रभाव उतना नहीं पड़ा था। निम्न वर्ग को छोड़कर प्रायः सभी हिन्दू जातियों एवं वर्णों की स्त्रियों में यह प्रथा प्रचलित थी। "नारी सम्बन्धी अनेक कुप्रथाओं को दूर करने के लिए निमित्त कानून बनाये गये किन्तु पर्दा प्रथा निषेध के लिए कानून के किसी भी अधिनियम के पारित होने की संभावना नहीं थी। अंग्रेजी सभ्यता से प्रभावित और अनुकरण की भावना से उद्वेलित कुछ अल्पसंख्यक पारसी तथा ब्रह्मसमाजी महिलायें पर्दा प्रथा त्याग कर बाहर आयी। राष्ट्रव्यापी सुधार की आवश्यकताओं ने भी स्त्रियों को पर्दे से बाहर आने को विवश किया, आर्य महिला समाज तथा भारतीय महिला परिषद् की संस्थापनाओं ने पर्दा प्रथा को चुनौती दी और उसकी भरसक भर्त्सना की।

पुराने जमाने में लड़कियों की शादी उनके बचपन में ही हो जाती थी। अतः स्त्री के रास्ते में यह एक भारी रूकावट थी। वही कारण है कि सन् 1910 तक उनच शिक्षा में जाने वाली लड़कियों की संख्या शून्य के बराबर थी। धीरे-धीरे यह हालत सुधरती गई और 1912 के बाद लड़कियों उनच शिक्षा में जाने लगी, लेकिन लड़कियों की संख्या बहुत कम थी और उनकी कॉलेज की पढ़ाई भी एक दो सालों से ज्यादा नहीं हो पाती थी। सन् 1920 के बाद शीघ्रता से परिस्थितियों में परिवर्तन होने लगा, पिछले 30 सालों में स्त्रियों ने शिक्षा के क्षेत्र में आशातीत सफलता प्राप्त की। अब तो उन्होंने कर्तव्य क्षेत्र के किसी भी अंग को अछुता नहीं छोड़ा, स्त्री शिक्षा का कार्य समाज के सामने है ही।

स्त्री स्वार्थ, त्याग और अहिंसा की मूर्ति होने के कारण उसमें पुरुष से भी सेवा भाव और त्याग की भावना अधिक होती है क्योंकि जब वह किसी भी कार्य को पूर्ण निष्ठा एवं आत्मा विश्वास के साथ करती है जो उसमें पर्वतों को भी हिला देने की शक्ति आ जाती है अतः आज हम देखते हैं कि सरोजनी नायडू और राजकुमार अमृतकौर जैसी वीरांगना राजनीतिक क्षेत्र में आकर बड़े-बड़े नेताओं और जनता का विश्वास एवं सम्मान प्राप्त कर चुकी है। इन्दिरा गांधी जैसी महिला राजनीतिक क्षेत्र में प्रधानमंत्री बनकर भारत की ही नहीं वरन् सारे संसार

की विश्वास पात्र बन गयी है। यह भारत के लिए गौरव की बात है महिला उपलब्धियों को खोज-खोज कर सामने लाने का मेरा उद्देश्य बस इतना भर रहा है कि हम स्त्रियों के भीतर का हीन भाव छुएं हम में नव निर्माण के लिए नया विश्वास जगे और महिला उपलब्धियों पर कुछ निकालने की योजना बनाते समय यह कैसे संभव था कि स्वतंत्रता सेनानियों को भुला दिया जाता।

हमारे देश में बहुत सी स्त्रियां महान् गणितज्ञ एवं उपन्यासकार भी हुई है। उपन्यास के क्षेत्र में भी महिलाओं का अपना विशेष योगदान रहा है और वे प्राचीन काल से ही देश विदेशों से अनेक पुरस्कार प्राप्त कर चुकी है, हिन्दी साहित्य की रचनाओं में भी भारतीय महिलाओं ने काफी पहले से अपना लोहा मनवा लिया है इनमें महादेवी वर्मा, सुभद्रा कुमारी चौहान, आशा रानी वोहरा आदि प्रमुख है। अंग्रेजी साहित्य में विभिन्न सामाजिक समस्याओं एवं देश की उन्नति एवं देश की उन्नति के लिए लिखे जाने वाले उपन्यासों उवं परिवेश की रचनाओं में प्रमुख रूप से अरुंधति राय, संगरिका घोष, दास संध्यारानी, शोभा डे आदि उल्लेखनीय है।

भारत के मध्यवर्ग की आर्थिक स्थिति को संभालने का कार्य जब से जागृत नारी ने प्रारंभ किया तब से ही वह अपनी रूची और योग्यता के अनुसार प्रत्येक क्षेत्र में कार्य करने लगी है। विवाहित महिलाएं भी हाथ बंटाकर अपनी गृहस्थी संभालती है तथा अविवाहित लड़कियां भी आर्थिक मदद करती है। स्टेनाग्राफर टेलीफोन ऑपरेटर, टाईपिस्ट और सेक्रेटरी के रूप में अनेक महिलाएं भी कार्य कर रही है। विभिन्न प्रकार के उद्योग & न्धे भी आधुनिक समय में महिलाओं द्वारा चलाये जा रहे हैं। साहित्य का क्षेत्र भी नारी से अछूता नहीं रहा है। अंग्रेजी में लिखने वाली सरोजनी नायडू को हम नहीं भूल सकते उन्हें भारत की नाइटिंगल की उपाधि मिली है। केवल जमीन पर ही नहीं अंतरिक्ष में भी भारतीयता का परचम लहराने में स्त्रियां पीछे नहीं है।

स्त्री शिक्षा का प्रारंभिक इतिहास विरोध की कड़ी छाया में ही पल्लवित हुआ। सामान्य वर्ग में यह भावना घर कर गयी थी कि कन्या का साक्षर होना उसके दुर्भाग्य का प्रतीक है, साक्षरता वैध्व्य की भवितव्यता का लक्षण है, परन्तु कुछ जागरूक व्यक्ति ऐसे भी थे जिन्हें अपनी छोटी आयु की कन्याओं को स्कूल भेजने में कोई आपत्ति नहीं थी। एक समुदाय ऐसा भी था जो शिक्षा की जरूरत अनुभव करता था परन्तु पाठ्यक्रम और शिक्षा प्रणाली भारतीय समाज और भारतीय नारी के आदर्श सीता और सावित्री के रूप में चाहता था।

महात्मा गांधी ने महिलाओं की शिक्षा के संदर्भ में कहा है कि इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि शिक्षा विहीन मनुष्य जानवर में कोई ज्यादा अन्तर नहीं होता है इसलिए शिक्षा जिस प्रकार पुरुष के लिए अति आवश्यक है ठीक उसी प्रकार स्त्रियों के लिए भी शिक्षा विधि पूर्णतः समरूप होनी चाहिए। स्त्री पुरुष दोनों का दर्जा समान है परन्तु दोनों पूर्णतः समरूप नहीं है वे अतुल्य जोड़ी है इसीलिए एक के बिना दूसरे के अस्तित्व की कल्पना नहीं की जा सकती इसलिए इसका अनुसरण आवश्यक है। इन तथ्यों से अनुमान लगा सकते है कि कुछ भी जो उनकी सामाजिक स्थिति को क्षीण करते है उनमें से कोई उन दिनों के सामाजिक पतन में समान रूप से शामिल होगा महिलाओं की शिक्षा को किसी भी योजना के संदर्भ में यह प्रधान सत्य स्थिर रूप से मस्तिष्क में रखना चाहिए। विवाहित जोड़े में बाहरी क्रिया कलापों में पुरुष मुख्य होता है और उसको अधिक जानकारी होनी चाहिए दूसरे शब्दों में गृहस्थ जीवन का कार्य क्षेत्र महिला का होता है और इसीलिए घरेलू कार्यों में बचों के लालन पालन और शिक्षा में अधिक ज्ञान होना चाहिए।

अनेक वर्ष चार दिवारी में छिपी नारी जब बाहर आई, समाज अनभ्यास के कारण समझौता न कर सका,

तब यहाँ टकराहट की स्थितियाँ उत्पन्न हुईं जिसने अनेक समस्याओं को जन्म दिया। नूतन दृष्टि सम्पन्न नारी अपने अधिकारों के प्रति सचेत हो गयी थी। अतः वह अपनी रुचि और भावना को महत्व देने लगी परिणामस्वरूप पिता, भाई या पति से उसके संघर्ष होने लगे घर से बाहर आने के कारण उसका पर पुरुष से संपर्क आया इससे कभी-कभी प्रेम की समस्या भी उसके जीवन में आने लगी, नैतिक अनैतिक का प्रश्न खड़ा हुआ और नारी के जीवन में अंतर्बाह्य परिवर्तन दिखाई दिया। नारी का बाहर निकलना आवश्यक है उसे प पुरुष की भोग्या बनने में जीवन की सार्थकता मानना है और न गुलामी के विरुद्ध मूक रहना है उसे परंपरागत संस्कारों मान्यताओं के विरुद्ध कटिबद्ध होना है और अपने व्यक्तित्व को प्रस्थापित करना है कि इसके लिए आर्थिक स्वतंत्रता से घर, परिवार और समाज में स्त्री की स्थिति में परिवर्तन आना अवश्यभावी है। इतना ही नहीं आर्थिक स्वतंत्रता से नारी के मन में जमा हीन बोध धीरे-धीरे दूर हो सकेगा और वह सीमाओं से बाहर आ सकेंगी। अपने आपको मनुष्य मानकर जीवन के हर क्षेत्र में पुरुष के कंधे से कंधा मिलाकर चलने का दावा कर सकेंगी।

परिणाम एवं निष्कर्ष :-

कोई भी अनुसंधान कार्य तब तक पूर्ण नहीं माना जाता जब तक उसके द्वारा किन्हीं निश्चित निष्कर्षों पर न पहुंचा जाये। अतः प्रदत्तों को एकत्रित विश्लेषित एवं उनका विवेचन करना ही पर्याप्त नहीं है। अपितु उसके आधार पर निष्कर्ष निकालना भी आवश्यक है। प्रस्तुत लघुशोध कार्य से निम्न परिणाम प्राप्त हुए हैं। 61 प्रतिशत अध्यापिकाएं विद्यालय में अधिकांश अस्थायी नियुक्तियों होने से परेशान रहती हैं। विद्यालय में सेवा सुरक्षित न होने से 49 प्रतिशत अध्यापिकाएं भयभीत रहती हैं। प्रायः विद्यालयों में वेतन समय पर नहीं मिलता है। जिससे कि अध्यापिकाओं को असुविधा होती है। 67 प्रतिशत महिलायें इस समस्या से ग्रस्त हैं। अस्थायी कर्मचारियों को ग्रीष्मवकाश का वेतन नहीं मिलता है जिससे कि अस्थायी कर्मचारियों के साथ-साथ अन्य अध्यापिकाएं इस समस्या से परेशान रहती हैं इस समस्या को समर्थन 56 प्रतिशत महिलाओं ने किया।

57 प्रतिशत अध्यापिकाएं इस समस्या के पक्ष में थी कि विद्यालय में शिक्षकों का सहयोग पूर्ण दृष्टिकोण नहीं होता है। विद्यालय प्रशासन के द्वारा परिश्रमी अध्यापक-अध्यापिकाओं को भी सम्मानित नहीं किया जाता है। अध्ययन से ज्ञात हुआ कि इसके पक्ष में 65 प्रतिशत अध्यापिकाओं के मत थे। 61 प्रतिशत अध्यापिकाओं का यह विचार था कि उनके समक्ष यह समस्या है कि चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी उनकी अपेक्षा विद्यालय के क्लर्कों का कहना अधिक मानते हैं। प्रधानाध्यापिका का अध्यापिकाओं के साथ व्यवहार तानाशाही प पक्षपातपूर्ण होता है इस बात को 46 प्रतिशत अध्यापिकाएं अनुभव करती हैं। विद्यालय में अधिक कार्य करने से पारिवारिक जिम्मेदारी पूर्णरूप से निभाने में 53 प्रतिशत अध्यापिकाएं कठिनाई का अनुभव करती हैं। 49 प्रतिशत महिला अध्यापिकाओं के समक्ष घर व विद्यालय दोनों जिम्मेदारियों को भली प्रकार निभाना एक तनाव पूर्ण स्थिति उत्पन्न करता है। 54 प्रतिशत अध्यापिकाओं के समक्ष यह समस्या है के उन्हें दिवाली अवकाश में भी छात्राओं के अतिरिक्त कालांश पढ़ाने के लिए लेने पड़ते हैं। 47 प्रतिशत अध्यापिकाओं विवाहित और अविवाहित अध्यापिकाओं के माध्यों 76.50 व 77.50 में मापन विचलन (17.56 तथा 16.61) में सार्थकता ज्ञात करने पर होता है कि विवाहित अध्यापिकाओं व अविवाहित अध्यापिकाओं के प्राप्तियों में कोई अंतर नहीं है इस कारण उनकी समस्याएं समान हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अरोड़ा, के. के., मिस भट्टाचार्य एण्ड ब्रदर्स – वुमन एण्ड कैरिसर ग्रुप प्रोजेक्ट रिपोर्ट, 1963
2. अलेकर, ए. एस. – दी पोजीशन ऑफ वूमन इन हिन्दू सिविलाइजेशन, मोती लाला बनारसी दास, तृतीय संस्करण, बनारस, 1962
3. इन्टरनेशनल लेबर ऑफिस, भारतीय शाखा, वर्किंग वुमन इन चेंचिंग इण्डिया, इण्डिया नई दिल्ली, अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन, 1963
4. इन्टरनेशनल लेबर कान्फ्रेंस रिपोर्ट – 6 (1) वुमन वर्कर्स इन ए चेंजिंग वर्ल्ड जनेवा इन्टरनेशनल लेबर ऑफिस, 1963
5. कपूर, प्रमिला – दी स्टडी ऑफ मैरिटल एडजस्टमेन्ट ऑफ एजूकेटेड वर्किंग वुमन इन इण्डिया, डी. लिट. थीसीस, आगरा विश्वविद्यालय, आगरा, 1968



उच्च माध्यमिक स्तर पर संचालित राष्ट्रीय सेवा योजना कार्यक्रम की उपादेयता का विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. शबनम बानो

व्याख्याता, राजस्थान महिला शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, बीकानेर।

प्रस्तावना :-

“सा विद्या या विमुक्तये” – (विष्णु पुराण)

शिक्षा ही वह ज्योति पूंजी है जो मानव मस्तिष्क के अंधकार को दूर करके ज्ञान रूपी प्रकाश को आलोकित करती है। शिक्षा मानव को मुक्ति का मार्ग दिखलाती है। शिक्षा समाज का आधार मानी जाती है। शिक्षा के द्वारा हमारी कीर्ति का प्रकाश चारों ओर फैलता है तथा शिक्षा ही हमारी समस्याओं को सुलझाती है और हमारे जीवन को सुसंस्कृत करती है। कल्प-लता की भांति शिक्षा हमारे लिए क्या-क्या नहीं करती है अर्थात् जिस प्रकार सूर्य का प्रकाश पाकर मिल का फूल खिल उठता है तथा सूर्यास्त होने पर कुम्हला जाता है, ठीक उसी प्रकार शिक्षा के प्रकाश को पाकर प्रत्येक व्यक्ति कमल के फूल की भांति खिल उठता है। शिक्षा जीवन पर्यन्त चलने वाली सत्त प्रक्रिया है जो बालक की समस्त शारीरिक, मानसिक, सामाजिक तथा आध्यात्मिक शक्तियों का विकास कर उसे पूर्णता प्रदान करती है।

शिक्षा एक त्रिमुखी प्रक्रिया है। शिक्षा के कार्य में भाग लेने वाले तीन घटक हैं— शिक्षक, पाठ्यक्रम और शिक्षार्थी। इनमें शिक्षक का स्थान भारतीय समाज में प्राचीनकाल से ही ईश्वर तुल्य माना गया है। समाज में उभरकर स्थिति अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है। शिक्षा की त्रिमुखी प्रक्रिया में पाठ्यक्रम शिक्षक शिक्षार्थी के मध्य योजक कड़ी का कार्य करता है। एवं शिक्षक व शिक्षार्थी की सीमाओं को तय करता है सीमित अर्थ में पाठ्यक्रम समस्त अनुभवों का योग है जिसको बालक विद्यालय प्रांगण में प्राप्त करता है।

प्राचीन धारणा के अनुसार पाठ्यक्रम में केवल उन्हीं विषयों को शामिल किया जाता था जिनके अध्ययन से बालक का मानसिक विकास हो, लेकिन आधुनिक युग में छात्रों के सर्वांगीण विकास के लिए विद्यालयों में पाठ्यक्रम के साथ-साथ पाठ्य सहगामी क्रियाओं तथा कार्यानुभवों को शामिल करके पाठ्यक्रम को लचीला तथा प्रगतिशील बनाने पर बल दिया जाता है, जिससे प्रत्येक बालक अपनी-अपनी रुचियों तथा क्षमताओं के अनुसार विकसित होकर समाज तथा राष्ट्र की यथा संभव सेवा करने में सक्षम हो सके। इस प्रकार वर्तमान में विद्यालयी पाठ्यक्रम के साथ-साथ अनेक पाठ्य सहगामी क्रियाओं का संचालन किया जाता है, जिनमें स्काउटिंग, राष्ट्रीय कैडेट कोर (एन. सी. सी.), राष्ट्रीय सेवा योजना (एन. एस. एस.) जैसी गतिविधियाँ महत्वपूर्ण हैं। राष्ट्रीय सेवा योजना जैसी पाठ्य सहगामी गतिविधियों के संचालन से छात्रों में सृजनात्मक तथा रचनात्मकता का विकास

किया जाता है तथा शारीरिक श्रम के प्रति रूचि जागृत करके इनमें सामाजिकता के गुणों का विकास किया जाता है ताकि समाज की सेवा के लिए सदैव तैयार व सजग रहें।

इस प्रकार देश के विभिन्न विद्यालयों में 10 + 2 स्तर पर संचालित एन.एस. एस. कार्यक्रम की उपादेयता अथवा इसकी सफलता असफलता का अध्ययन तथा मूल्यांकन करना अत्यन्त आवश्यक है। शोधकर्ता ने सीकर जिले में एन. एस. एस. संचालित होने वाले विद्यालयों में इसकी उपादेयता का अध्ययन किया है।

पाठ्य सहगामी क्रियाओं के उद्देश्य :-

एल्सबर्ट टॉमकिन्स ने पाठ्य सहगामी क्रियाओं के उद्देश्यों को निम्न तीन वर्गों में विभाजित किया है—

(क) व्यक्तिगत उद्देश्य :-

1. छात्रों के अवकाश के समय का रचनात्मक सदुपयोग।
2. छात्रों के व्यक्तित्व का विकास करना।
3. व्यक्तिगत उत्तरदायित्व एवं पहल की क्षमता का विकास।
4. आत्म मूल्यांकन के अवसर की उपलब्धि।
5. व्यक्तित्व की समृद्धि।
6. सभा के संचालन एवं उसमें भाग ग्रहण का प्रशिक्षण।

(ख) सामाजिक उद्देश्य :-

1. मानसिक व शारीरिक मनोरंजन।
2. दूसरों के साथ मिलकर कार्य करने का अभ्यास।
3. लोकतांत्रिक उत्तरदायित्व का विकास।
4. सुन्दर मानवीय सम्बन्धों का अभ्यास।
5. सामाजिक सम्पर्क वृद्धि।

(ब) नागरिक एवं नैतिक उद्देश्य :-

छात्रों के मध्य वर्ग, आर्थिक स्थिति, जाति, योग्यता के विभेदीकरण रहित सुन्दर सम्बन्धों की स्थापना करना। राष्ट्रीय आदर्शों के अनुरूप भावात्मक एवं राष्ट्रीय एकता की भावना को दृढ करना। छात्रों के विद्यालय के प्रति रूचि एवं प्रेम विकसित करने में सहायता प्रदान करना। पाठ्यक्रम के विभिन्नीकरण एवं समृद्धि में सहायक होना।

राष्ट्रीय सेवा योजना : एक परिचय :

भारत में महात्मा गांधी के समय से ही छात्रों को राष्ट्रीय सेवा में शामिल करने पर बल दिया गया ताकि वे अपनी शिक्षा के साथ-साथ सामाजिक जिम्मेदारियों को भी समझाके। स्वतंत्रता पश्चात् शिक्षा एवं मानव गुणवत्ता में सुधार हेतु छात्रों के लिए सामाजिक सेवाएं लागू करना आवश्यक समझा गया। यू. जी. सी. के पूर्व अध्यक्ष डॉ. एस. राधाकृष्णन् ने ध्यान दिलाया कि शैक्षणिक संस्थाओं में राष्ट्रीय सेवाओं को स्वैच्छिक आधार पर लागू करें जिससे

एक तरफ छात्रों व अध्यापकों के मध्य सम्बन्धों का विकास हो और दूसरी ओर शिविर और समुदाय के मध्य रचनात्मक सम्बन्ध स्थापित हो।

जनवरी 1950 में केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड की बैठक में विचार-विमर्श के बाद छात्रों के लिए स्वैच्छिक आधार पर शारीरिक श्रम की आवश्यकता पर बल दिया गया। 1952 के ड्राफ्ट में भारत सरकार ने प्रथम बार पांच वर्ष के लिए इस योजना को स्वीकार कर लिया अनेक शिक्षण संस्थाओं में श्रमदान, सामाजिक सेवा शिविर, शिविर कार्य प्रॉजेक्ट, ग्राम बस्ती गोद लेना आदि कार्य चलाये गये। 1958 में तात्कालीन प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने मुख्यमंत्रियों को पत्र में सामाजिक सेवा को स्नातक स्तर पर लागू करने तथा शिक्षा विभाग को अनुकूल योजना तैयार करने के निर्देश दिये।

1956 में शिक्षामंत्रियों के सम्मेलन में राष्ट्रीय सेवा योजना का ड्राफ्ट प्रारूप रखा गया। राष्ट्रीय सेवा की कार्यशील योजना की आवश्यकता पवर आम सहमति हुई और स्कूलों-कॉलेजों में दी जाने वाली शिक्षा में सामाजिक व आर्थिक उत्थान में रुचि जगाने वाले कार्यक्रम जोड़ने पर बल दिया गया।

28 अगस्त 1959 को सी. डी. देशमुख की अध्यक्षता में एक राष्ट्रीय सेवा समिति की नियुक्ति की गई। समिति ने सुझाव दिया जो उनच शिक्षा पूर्ण कर चुके तथा महाविद्यालय और विश्वविद्यालय में नामांकन के इच्छुक हैं उनके लिए वर्ष में 9 माह के लिए राष्ट्रीय सेवा अनिवार्य बनाई जाए। इससे सैन्य प्रशिक्षण, सामाजिक सेवा, शारीरिक श्रम, सामान्य शिक्षा को शामिल करने की योजना थी लेकिन वित्तीय कठिनाइयों के कारण प्रस्ताव अस्वीकार कर दिए गये। 1966 में डॉ. दौलत सिंह कोठारी की अध्यक्षता वाले शिक्षा आयोग ने सुझाव दिया कि छात्रों को सामाजिक सेवा में शिक्षा के हर स्तर पर शामिल होना चाहिए। अगस्त 1967 में शिक्षा मंत्रियों के सम्मेलन में एन. सी. सी. के विकल्प के रूप में राष्ट्रीय सेवा योजना का प्रस्ताव रखा गया। मई 1969 में शिक्षा मंत्रालय और यू. जी. सी. द्वारा विश्वविद्यालयों तथा उनच शिक्षण संस्थाओं के प्रतिनिधि के रूप में छात्रों का सम्मेलन बुलाया जिसमें घोषणा की गई कि राष्ट्रीय सेवा योजना राष्ट्रीय उकता का शक्तिशाली साधन हो सकता है।

योजना आयोग ने एन. एस.एस. के लिए आगामी 5 वर्ष के लिए 5 करोड़ का बजट मंजूर किया तथा एन. एस. एस. को एक पायलट प्रोजेक्ट के रूप में कुछ चुनिंदा संस्थाओं और विश्वविद्यालयों में शुरू किया जाये। 24 सितम्बर 1969 को तात्कालीन केन्द्रीय शिक्षा मंत्री डॉ. वी. के. आर. वी. राव ने सभी को सम्मिलित करते हुए विश्वविद्यालयों में राष्ट्रीय सेवा योजना कार्यक्रम शुरू किया गया और राज्यों के मुख्यमंत्रियों से सहयोग और सहायता का निवेदन किया। आरम्भ में एक एन. एस. एस. स्वयं सेवक पर प्रतिवर्ष 120 रुपये खर्च करने का प्रावधान था जिसमें केन्द्र तथा राज्यों का अनुपात 7 : 5 रखा गया।

1960 में 40 हजार छात्रों के नामांकन संख्या से शुरू होकर 1980 में 4.75 लाख, 1990 में 10.38 लाख, 1997-98 में 13.52 लाख पर पहुंच गई। 9वीं पंचवर्षीय योजना में एन. एस. एस. स्वयं सेवकों की संख्या 20 लाख के लक्ष्य पर पहुंच गई।

+ 2 स्तर पर राष्ट्रीय सेवा योजना :-

1985 में प्रयोगात्मक आधार पर + 2 स्तर एन. एस. एस. कर्नाटक, केरल, तमिलनाडू, गोवा, गुजरात, पश्चिम बंगाल तथा केन्द्रीय प्रदेश दमन व दीव में शुरू की गई। 1992 में इसका गुजरात, केरल, पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, पश्चिम बंगाल, तमिलनाडू गोवा, चण्डीगढ़, पाण्डीचेरी तक विस्तार हो गया। इसमें 1.60 लाख छात्र शामिल हुए। यह संख्या 13 लाख से भी अधिक हो गई। नई शिक्षा नीति 1986 में तय किया गया कि युवाओं को शैक्षणिक संस्थाओं और बाहरी अभिकरणों द्वारा राष्ट्रीय और सामाजिक विकास में स्वयं को शामिल

करने का अवसर प्रदान किया जायेगा। छात्रों के लिए एन. एस. या एन. सी. सी. में भाग लेना आवश्यक किया गया। अध्यापकों और युवाओं की सक्रिय भागीदारी एवं प्रोत्साहन के लिए निम्न बातें एन. एस. एस. में शामिल की गई।

1. एन. एस. एस. में अध्यापकों का योगदान पहचानना।
2. एन. एस. एस. के अन्तर्गत अवशेष योगदान के लिए अध्यापकों को प्रोत्साहन देना।
3. एन. एस. एस. के अन्तर्गत विशेष रिकार्ड वाले छात्रों को विशेष प्रोत्साहन हेतु कॉलेज, विश्वविद्यालय में प्रवेश के समय और पदोन्नति के लिए रियायत देना।

राष्ट्रीय सेवा योजना-लक्ष्य एवं उद्देश्य :-

राष्ट्रीय सेवा योजना का मुख्य लक्ष्य— “समाज सेवा के माध्यम से विद्यार्थियों के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करना।”

राष्ट्रीय सेवा योजना के उद्देश्य निम्नलिखित हैं :-

1. छात्र जिस समाज में काम करते हैं, उसे समझ सकें।
2. अपने आपको सम्बन्धित समाज के संदर्भ में समझने में समर्थ हो सकें।
3. समाज की आवश्यकताओं का उन्हें ज्ञान हो तथा उनकी कठिनाईयों को समझ सकें जिनके समाधान में वे सक्रिय हो सकें।
4. अपने में सामाजिक और नागरिक दायित्व बोध की भावना का विकास कर सकें।
5. अपनी शिक्षा का उपयोग वे व्यक्ति तथा समाज की कठिनाईयों के व्यावहारिक हल ढूँढने में कर सकें।
6. समूह में रहने और दायित्वों में सहभागी बनने के लिए जिस क्षमता की आवश्यकता है, उसका अपने में विकास कर सकें।
7. नेतृत्व गुणों को धारण कर सकें तथा प्रजातांत्रिक अभिवृत्ति वाले बन सकें।
8. आपातकाल और दैवीय आपदाओं का सामना करने की क्षमता का विकास कर सकें।
9. राष्ट्रीय एकता को क्रियात्मकता दे सकें।

निष्कर्ष :-

प्रस्तुत शोधकार्य करने के बाद शोधकर्ता ने इस शोध के अनेक निष्कर्ष निकाले जो निम्नलिखित हैं :-
उनच माध्यमिक स्तर पर संचालित राष्ट्रीय सेवा योजना (एन. एस. एस.) की उपादेयता सार्थक है। छात्रों में समाज सेवा एवं सामाजिक मूल्यों के विकास में एन. एस. एस. की उपादेयता है। छात्रों में नागरिक दायित्व एवं राष्ट्रीय मूल्यों के विकास में एन. एस. एस. की उपादेयता सार्थक है। छात्राओं में छात्रों की तुलना में एन. एस. एस. के प्रति जागरूकता एवं अभिरुचि अधिक पाई जाती है। सरकारी विद्यालयों की तुलना में गैर सरकारी विद्यालयों में छात्र-छात्राओं में एन. एस. एस. के प्रति जागरूकता एवं अभिरुचि अधिक पाई जाती है। सरकारी विद्यालयों की तुलना में गैर सरकारी विद्यालयों के छात्रों में एन. एस. एस. के प्रति जागरूकता एवं अभिरुचि अधिक पाई जाती है। सरकारी विद्यालयों की तुलना में गैर सरकारी विद्यालयों की छात्राओं एन. एस. एस. के प्रति जागरूकता एवं अभिरुचि अधिक पाई जाती है। कार्यक्रम अधिकारियों के अनुसार एन. एस. एस. कार्यक्रम की उपादेयता सार्थक पाई गई।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. डॉ. शर्मा आर ए. : 'शिक्षा अनुसंधान'
आर. लाल बुक डिपो, मेरठ 92-93
2. डॉ. सरीन शशिकला : 'शैक्षिक अनुसंधान की विधियां'
डॉ. सरीन अंजली
विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा
3. महरोत्रा, सुखिया : "शैक्षिक अनुसंधान के मूल तत्व"
4. सिंह राजेन्द्रपाल : विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा
"शिक्षा और अनुसंधान"
5. सिन्हा एच. पी. : द मैककिल एण्ड कम्पनी, नई दिल्ली
"शिक्षा अनुसंधान"
विशाल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।



विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि, व्यक्तित्व व बुद्धि का अध्ययन

डॉ. सन्तोष व्यास

व्याख्याता, राजस्थान महिला शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, बीकानेर।

प्रस्तावना :-

यूनानी दार्शनिकों ने दर्शनशास्त्र में ही ज्ञान की शाखा का विकास किया जिसे हम शक्ति-मनोविज्ञान कहते हैं। शक्ति-मनोविज्ञान के अनुसार मनुष्य का मस्तिष्क अनेक शक्तियों में विभक्त है और ये विभिन्न शक्तियां विभिन्न कोष्ठों में निहित हैं। प्रत्येक मानसिक योग्यता या शक्ति के लिए एक कोष्ठ होता है। बुद्धि के लिए भी एक कोष्ठ निश्चित है। ऐसा कहकर शक्ति-मनोविज्ञान के समर्थकों ने सर्वप्रथम बुद्धि को व्यवस्थित रूप से परिभाषित करने का प्रयास किया।

शिक्षा के ही नहीं, सामाजिक तथा भौतिक विज्ञानों के क्षेत्र में बुद्धि तथा उसकी मापन प्रक्रिया का अत्यधिक महत्व है। किसी कार्य को विधिपूर्वक बिना किसी परेशानी के हल करना बुद्धिमत्ता का प्रतीक समझा जाता है। विश्व के महान साहित्यकार, वैज्ञानिक, मनोवैज्ञानिक तथा महान राजनीतिक बुद्धि के संदर्भ में विशेष योग्यता प्राप्त प्राप्त कर रहे हैं।

विद्वानों ने बुद्धि की परिभाषा अपने-अपने ढंग से की है। उनका मूल विचार भी उसी प्रकार रहा है। टर्मन ने बुद्धि को अमूर्त कार्यों को सम्पन्न करने की योग्यता माना है। वुडरो ने इसे योग्यता ग्रहण करने के रूप में स्वीकार किया है। कुछ मनोवैज्ञानिकों ने इसे सूक्ष्म विश्लेषण, आविष्कार करने की प्रवृत्ति, स्थिरता तथा विशुद्धता के रूप में स्वीकार किया है। अतः बुद्धि, व्यक्ति की वह क्षमता है जिसके द्वारा व्यक्ति अपने वातावरण के प्रति अनुक्रिया करता है। वह वातावरण तथा परिस्थितियों का शिकार नहीं बनता। वह स्वयं को समायोजित करता है या स्वयं वातावरण के अनुकूल बन जाता है। बुद्धिमापन की भी अपनी समस्याएँ हैं। अनेक विद्वानों ने बुद्धिमापन के विषय में अपनी धारणाएँ व्यक्त की हैं। थार्नडाइक ने मापन का महत्व बताते हुए लिखा है— 'प्रत्येक वस्तु संसार में जरा भी सत्ता रखती है, जो किसी भी परिमाण में अस्तित्व बनाये है, मापन के योग्य है।'

मापन शिक्षा में विशिष्ट महत्व रखता है। मापन के द्वारा बालक के व्यवहार, क्षमता तथा योग्यता का सरलता से अध्ययन किया जा सकता है। वांछित परिवर्तनों के लिए मनोविज्ञान की विधियों को विकसित किया जा सकता है। मापन का अधिकाधिक उपयोग प्रचलित होता जा रहा है। 'मापन तथा शिक्षा जुड़वाँ लड़कियों की तरह है जिनके बालों को कर्ई बच्चों की माताओं ने इस प्रकार बांध दिया है कि दोनों साथ-साथ चलती

है।" इस मत के अनुसार मापन के द्वारा बालकों को व्यक्तिगत भेदों के अनुकूल परिवर्तित किया जा सकता है। शिक्षा की अधिकांश समस्याओं का समाधान मापन के द्वारा हल किया जा सकता है। शिक्षा की तीन प्रमुख समस्याएं हैं।

1. शिक्षा का लक्ष्य निर्धारण
2. विश्लेषण
3. प्रणाली

शिक्षा के लक्ष्यों का निर्धारण के अन्तर्गत आता है। विश्लेषण तथा प्रणाली के लिए मापन की आवश्यकता है।

व्यक्तित्व मापन :-

“व्यक्ति सम्पूर्ण मनुष्य है, उसकी स्वाभाविक अभिरुचि तथा क्षमतायें उसके भूतकाल में अर्जित किये गये अधिगमपल, कारकों के संगठन तथा व्यवहार प्रतिमानों, आदर्शों, मूल्यों तथा अपेक्षाओं की विशेषताओं से पूर्ण होता है।”

शिक्षा मनोविज्ञान मानव व्यवहार का अध्ययन करता है। व्यवहार व्यक्ति की अभिव्यक्ति है कोई भी व्यक्ति जैसा भी व्यवहार करेगा वैसा ही उसका व्यक्तित्व प्रकट होगा। प्रत्येक समाज तथा विद्यालय बालकों के व्यक्तित्व के विकास में रुचि लेता है। अतः विद्यालय की शिक्षा का मुख्य उद्देश्य बालकों के व्यक्तित्व का समुचित विकास करना है।

शैक्षणिक उपलब्धि :-

आधुनिक युग में जहां व्यक्ति के दिन प्रतिदिन के जीवन में व्यक्तिक विभिन्नताएं दृष्टिगोचर हो रही हैं वहीं उसने विभिन्न क्षेत्रों में अनेक प्रकार की उपलब्धियाँ प्राप्त की हैं। इन उपलब्धियों के अन्तर्गत उद्योग, व्यवसाय, सेना, शिक्षा, चिकित्सा आदि क्षेत्र आते हैं। शैक्षणिक उपलब्धि के अंतर्गत विद्यार्थी के ज्ञान का अध्ययन किया जाता है कि किसी अमुक विषय में उसने कितना सीखा तथा कौन-कौन सी विशिष्ट योग्यताओं को विकसित किया। शैक्षणिक उपलब्धि का सामान्य अर्थ किसी भी व्यक्ति द्वारा किसी शैक्षणिक स्तर पर किसी शैक्षणिक परीक्षा के कुल प्राप्तांकों के प्रतिशत से लगाया जाता है।

उद्देश्य :-

1. उच्च व निम्न शैक्षिक उपलब्धि प्राप्त छात्रों के बुद्धि व व्यक्तित्व के अंतर का पता लगाना।
2. उच्च व निम्न शैक्षिक उपलब्धि प्राप्त छात्रों के मध्य अंतर ज्ञात करना।
3. छात्र व छात्राओं के बुद्धि व व्यक्तित्व के अंतर के बारे में जानना।
4. छात्र व छात्राओं के शैक्षिक उपलब्धि के अंतर का पता लगाना।
5. ग्रामीण व शहरी छात्रों के बुद्धि व व्यक्तित्व के बारे में जानना।
6. ग्रामीण व शहरी छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि के बारे में पता लगाना।

उच्च शिक्षा में अध्ययनरत विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि, व्यक्तित्व व बुद्धि का अध्ययन प्रस्तावना :-

मापन शिक्षा में विशिष्ट महत्व रखता है। मापन के द्वारा विद्यार्थियों के व्यवहार, क्षमता तथा योग्यता का सरलता से अध्ययन किया जा सकता है। कोई व्यक्ति जैसा व्यवहार करेगा वैसा ही उसका व्यक्तित्व होगा। और उसकी योग्यता व क्षमता से बुद्धि का पता लग जाता है। विद्यार्थी विद्यालय में या विद्यालय के बाहर समाज में जो ज्ञान प्राप्त करता है उसकी मापन के द्वारा उपलब्धि को जाना जाता है कि अमुक विषय में वह कितनी बुद्धि

रखता है तथा उसका व्यक्तित्व व्यवहारिक है या नहीं। प्रत्येक विद्यालय तथा समाज के विद्यार्थियों के व्यक्तित्व व बुद्धि के विकास में रूचि लेता है तथा शैक्षणिक उपलब्धि के आधार पर उनका स्तर जाना जाता है कि विद्यार्थियों का उच्च या निम्न स्तर है। मापन के द्वारा ही विद्यार्थियों के व्यक्तिगत भेदों के अनुकूल परिवर्तित किया जा सकता है। थॉर्नडाइक ने मापन का महत्व बताते हुए लिखा है कि – “प्रत्येक वस्तु जो संसार में जरा भी सत्ता रखती है, किसी भी परिणाम में अस्तित्व बनाये है, मापन के योग्य है।”

शैक्षणिक उपलब्धि :-

आधुनिक युग में जहां व्यक्ति के दिन-प्रतिदिन के जीवन में व्यक्तिगत विभिन्नताएं दृष्टिगोचर हो रही हैं वहीं उसने विभिन्न क्षेत्रों में अनेक प्रकार की उपलब्धियां प्राप्त की हैं। इन उपलब्धियों के अन्तर्गत – उद्योग, व्यवसाय, सेना, शिक्षा, चिकित्सा आदि क्षेत्र आते हैं। शैक्षणिक उपलब्धि के अंतर्गत विद्यार्थी के ज्ञान का अध्ययन किया जाता है कि किसी अमुक विषय में उसने कितना सीखा तथा कौन-कौन सी विशिष्ट योग्यताओं को विकसित किया है।

व्यक्तित्व :-

शिक्षा मनोविज्ञान मानव व्यवहार का अध्ययन करता है। व्यवहार व्यक्ति की अभिव्यक्ति है। कोई भी व्यक्ति जैसा भी व्यवहार करेगा, वैसा ही उसका व्यक्तित्व प्रकट होगा। प्रत्येक समाज तथा विद्यालय बालकों के व्यक्तित्व के विकास में रूचि लेता है। अतः विद्यालय की शिक्षा का मुख्य उद्देश्य बालकों के व्यक्तित्व का समुचित विकास करना है।

“व्यक्तित्व, व्यक्ति में उन मनोदैहिक व्यवस्थाओं का गत्यात्मक संगठन है जो वातावरण के साथ उसका अपूर्व समायोजन निर्धारित करती है।”

बुद्धि :-

बुद्धि एक जटिलघटक है। बुद्धि को परिभाषित करने में कोई भी विद्वान एक मत नहीं है। उनके विचारों के आधार पर साधारण भाषा में बुद्धि के बारे में कहा जा सकता है कि “बुद्धि उपयुक्त संबंधों का जो जीवन के अनुरूप होते हैं और समय तथा व्यक्ति के अलग-अलग होते हैं प्रत्यक्षीकरण है।” बुद्धि को हम ऐसी मानसिक योग्यता मान सकते हैं जो नई परिस्थितियों के साथ समायोजन, सम्बन्ध तथा सह-सम्बन्ध स्थापित करती है। जो उनच विचारों को जन्म देती है, तथा पूर्वानुमानों से ज्ञानार्जन करती है।

अध्ययन के उद्देश्य :-

प्रस्तुत अध्ययन के निम्नलिखित उद्देश्य हैं-

1. उच्च व निम्न शैक्षणिक उपलब्धि प्राप्त छात्रों के बुद्धि व व्यक्तित्व के अंतर का पता लगाना।
2. उच्च व निम्न शैक्षणिक उपलब्धि प्राप्त छात्रों के मध्य अंतर ज्ञात करना।
3. छात्र व छात्राओं में बुद्धि व व्यक्तित्व के अंतर के बारे जानना।
4. छात्र व छात्राओं के शैक्षणिक उपलब्धि के अंतर का पता लगाना।
5. ग्रामीण व शहरी छात्रों के बुद्धि व व्यक्तित्व के बारे में जानना।
6. ग्रामीण व शहरी छात्रों की शैक्षणिक उपलब्धि के बारे में पता लगाना।

व्यक्तित्व परीक्षण :-

व्यक्तित्व के मापन हेतु माड्रसल की व्यक्तित्व प्रश्नावली काम में ली गई है। यह एक प्रमापीकृत उपकरण है। इस परीक्षण का प्रयोग सामान्यतः 14 वर्ष से 18 वर्ष तक के बालक बालिकाओं के व्यक्तित्व मापन हेतु किया जाता है। इस परीक्षण में कुल 48 प्रश्न हैं, प्रश्नों की भाषा हिन्दी और प्रत्येक प्रश्न के सामने (हां), (नहीं) व () विकल्प दिए गए हैं। ये 48 प्रश्न Neuroticism व Extraversim दोनो प्रकार के व्यक्तित्व से संबंधित बराबर-बराबर हैं।

बुद्धि परीक्षण :-

हिन्दी में बना सामूहिक शाब्दिक बुद्धि परीक्षण का निर्माण डॉ. एस. जलोटा द्वारा 1960 में हुआ। 12 से 16 वर्ष की आयु के बालको के लिए निर्मित है। इस परीक्षण में 100 प्रश्न हैं इसको 20 मिनट में पूरा करना पड़ता है। प्रत्येक प्रश्न का एक अंक है। अतः यह गति परीक्षण है।

निष्कर्ष :-

प्रस्तुत शोध अध्ययन के पश्चात् शोधकर्ती जिस निष्कर्ष पर पहुंची, वे इस प्रकार है – उच्च शैक्षणिक उपलब्धि प्राप्त छात्र निम्न शैक्षणिक उपलब्धि की अपेक्षा अधिक बुद्धिमान होते हैं। उच्च शैक्षिक उपलब्धि प्राप्त छात्रों व निम्न शैक्षिक उपलब्धि प्राप्त छात्रों के व्यक्तित्व में सार्थक अंतर नहीं होता है। उच्च व निम्न शैक्षिक उपलब्धि प्राप्त छात्रों में सार्थक अंतर होता है। छात्र व छात्राओं की बुद्धि, व्यक्तित्व व शैक्षिक उपलब्धि में सार्थक अंतर नहीं होता। ग्रामीण व शहरी छात्रों के बुद्धि, व्यक्तित्व व शैक्षिक उपलब्धि में सार्थक अंतर नहीं होता।

संदर्भ - पुस्तकें :-

1. अजवानी, जे. के. – “प्रोबलम-सोल्विंग विहेवियर इन रिलेशन टू पर्सनल्टी इंटेलिजेन्स एण्ड ऐज” (1987)
2. अमेरिकन एजुकेशन रिसर्च – “ए. ई. आर. ए. हैण्ड बुक ऑफ रिसर्च ऑफ टीचिंग”
3. बैस्ट, जे. डब्ल्यू – “रिसर्च इन एजुकेशन” यू. एस. प्रिन्टिस हॉल
4. बैस्ट, जे. डब्ल्यू – “डेमोक्रेसी ऑफ एजुकेशन” (1961)
5. भार्गव महेशचन्द्र – “मनोविज्ञान परीक्षण एवं मापन” हर प्रसाद भार्गव आगरा – 4



भारतीय राजनीतिक सत्ता-तंत्र में महिलाओं के अधिकार

डॉ० बिन्दु भसीन

सह आचार्य, राजकीय डूंगर महाविद्यालय, बीकानेर।

सारांश :-

मानव अधिकारों से अभिप्राय उन अधिकारों और स्वतंत्रता से है जिसके सभी मानव प्राणी हकदार है। मानवाधिकार के इतिहास के बारे में जानना चाहें तो पता लगता है कि अनेक प्राचीन दस्तावेजों और बाद के धार्मिक एवं दार्शनिक पुस्तकों में ऐसी अनेक अवधारणाएँ हैं जिन्हें मानवाधिकार के रूप में चिन्हित किया जा सकता है। उनमें उल्लेखनीय है अशोक के आदेश पत्र और मदीना का संविधान आदि।

वस्तुतः अधिकार व्यक्ति की वे तर्क संगत मांगे हैं जो व्यक्ति अपने समग्र विकास के लिये समाज के समक्ष रखता है। समाज और राज्य द्वारा स्वीकृत इन मांगों को ही 'मानवाधिकार' का नाम दिया गया है। आज के इस चैतन्य युग में मानवता शांति का प्रश्रय चाहती है परिणामस्वरूप महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता एक आवश्यकता बन गई है।

वैदिक युग में महिलाओं को पुरुषों के समान अधिकार मिले लेकिन मध्य युग में महिलाओं की स्थिति अच्छी नहीं थी। ब्रिटिश काल के आरम्भ में आरक्षण के सम्बन्ध में महिलाओं के अधिकार न के बराबर थे। 1937 ई. में कुछ महिलाओं को पति की सम्पत्ति और शिक्षा के आधार पर वोट देने का अधिकार अवश्य मिला। राष्ट्रीय आन्दोलन में भी कुछ भारतीय महिलाओं ने भाग लिया। 19वीं शताब्दी के अंत में महिला संगठनों की स्थापना के प्रयासों में प्रगति हुई। कुछ संवैधानिक प्रयासों ने महिलाओं की स्थिति को मजबूत बनाने में सहायता प्रदान की। महिला सत्ता में सहभागीदारी चाहती है और सत्ता में पुरुष एकाधिकार को समाप्त करने के लिये वे कटिबद्ध हैं। महिलाएँ राजनीतिक आरक्षण की मांग कर रही हैं। जनसंख्या प्रतिशत के आधार पर महिलाओं को 50 प्रतिशत आरक्षण क्यों नहीं दिया जाये, पुरुष 33 प्रतिशत की ही बात क्यों करता है?

संविधान के 81 वें संशोधन बिल को पारित करने की मांग के पीछे यही मंतव्य है कि महिलाओं के प्रभावी स्वर राजनीतिक सत्ता मंच पर उभरें और वे विधायिका की प्रभावी शक्ति बनें ताकि महिलाओं के उत्थान के लिये जितनी भी नीतियाँ हैं उन्हें क्रियान्वित कर नारी का विकास कराया जा सके।

विश्व मानवाधिकार संगठन का नारा है— सबके लिये सारे मानवाधिकार। आवश्यकता ऐसे वातावरण के निर्माण की है जिसमें नारी एक जाति के स्थान पर एक "व्यक्ति" के रूप में पुरुष समाज में अपना विशिष्ट स्थान बनाकर जी सके।

मानव अधिकारों से अभिप्राय उन अधिकारों और स्वतंत्रता से है जिसके सभी मानव प्राणी हकदार हैं। इन अधिकारों और स्वतंत्रताओं में जीवन और आजाद रहने का अधिकार, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, कानून के सामने समानता और आर्थिक, सामाजिक अधिकारों के साथ ही साथ सांस्कृतिक गतिविधियों में भाग लेने का अधिकार और शिक्षा का अधिकार आदि ये सभी सम्मिलित हैं।

इतिहास :-

अनेक प्राचीन दस्तावेजों और बाद के धार्मिक एवं दार्शनिक पुस्तकों में ऐसी अनेक अवधारणाएँ हैं जिन्हें मानवाधिकार के रूप में चिन्हित किया जा सकता है ऐसे प्रलेखों में उल्लेखनीय है – अशोक के आदेश पत्र और मदीना का संविधान आदि आधुनिक मानवाधिकार कानून एवं मानवाधिकार की अधिकांश अपेक्षाकृत व्यवस्थाएँ समसमायिक इतिहास से संबंध है। The Twelve Article of the Black Forest (1525 ई.) को यूरोप में मानवाधिकारों का सर्वप्रथम दस्तावेज माना जाता है। 1776 ई. में संयुक्त राज्य की स्वतंत्रता की घोषणा और 1789 ई. में फ्रांस में नागरिकों के अधिकारों की घोषणा हुई। इन दोनों क्रांतियों ने ही कुछ निश्चित कानूनी अधिकारों की स्थापना की। प्रत्येक देश में 'मानवाधिकार' को लेकर अक्सर विवाद बना रहता है। ये समझ पाना मुश्किल हो जाता है कि क्या वाकई (हकीकत) में मानवाधिकारों की सार्थकता है? यह बहुत दुर्भाग्यपूर्ण है तमाम प्रादेशिक, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सरकारी और गैर सरकारी मानवाधिकार संगठनों के बावजूद मानवाधिकारों का परिदृश्य हर तरह की विसंगतियों से भरा पड़ा है। भारतीय संविधान मानवाधिकारों की रक्षा की गारंटी ही नहीं देता है बल्कि इसे तोड़ने वाले को अदालत सजा भी देती है।

मानव अधिकार किसी भी मानव विशेष के अस्तित्व के लिये अत्यावश्यक है। मनुष्य अपने इन्हीं अधिकारों के लिये उचित या अनुचित रूप से एक-दूसरे से लड़ रहा है। दुर्भाग्यवश सभ्यता के प्रारम्भ से ही विश्व को मानव मात्र के कर्तव्य और अधिकारों की शिक्षा देने वाला वर्तमान समय में दुनिया का सबसे बड़ा धर्मनिरपेक्ष गणतंत्र भारत आज स्वयं मानवाधिकार के हनन के आरोप से कलंकित है। मानवाधिकार की अवधारणा एक सुसभ्य समाज की अवधारणा है जिसमें किसी व्यक्ति या व्यक्ति के समूह को उत्पीड़न और यातनाओं से मुक्त जीवन-यापन का अधिकार प्राप्त है। मानवजाति के लिये मानवाधिकार का व्यापक और असीम महत्व है इसलिये इसे कभी-कभी मूलाधिकार के रूप में निर्दिष्ट किया जाता है।

वस्तुतः अधिकार व्यक्ति की वे तर्क संगत मांगे हैं जो व्यक्ति अपने समग्र विकास के लिये समाज के समक्ष रखता है। समाज और राज्य द्वारा स्वीकृत इन मांगों को ही 'मानवाधिकार' का नाम दिया गया है। भारत में सदियों से महिलाएँ अत्याचार और शोषण की शिकार रहीं हैं। महिलाओं के अधिकारों के संरक्षण एवं उनकी स्थिति में सुधार लाने के लिये कई कानून बनाए गए ताकि वे उन प्रावधानों और उपबंधों के माध्यम से समाज और राष्ट्र की प्रगति में समान रूप से भागीदार बन सकें। आज के इस चैतन्य युग में मानवता शांति का प्रश्रय चाहती है फलस्वरूप महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता एक आवश्यकता बन गई है। यदि पुरुष विश्व मानव समाज शांति और उन्नति के क्रियान्वयन के लिये नारी का सकारात्मक सहयोग चाहता है तो पुरुष समाज को नारी समाज को राजनीतिक सत्तातन्त्र और व्यवस्था में विश्वसनीय प्रभावी भागीदारी देनी ही होगी

जिसके लिये आरक्षण की नीति अपनाये या संरक्षण की² नारी को उसका 'स्व' देना ही होगा और राजनीतिक सत्तातंत्र नारी विरोधी नहीं हो सकता।

ऐसा कोई ईश्वरीय आदेश नहीं जो सारी 'समाज' की आवश्यकताओं, अपेक्षाओं और आकांक्षाओं को जानने समझने और क्रियान्वयन करने की सारी अर्हताएँ³ पुरुष को प्राप्त हो।

वैदिक युग के स्वर्णिम होने का कारण उस काल की विदुषी महिलाएँ थी जिन्होंने शिक्षा, धर्म, राजनीति और संपत्ति के अधिकारों का उपयोग पुरुषों के समान किया।⁴ मध्य युग महिलाओं की स्थिति की दृष्टि से कलंक युग माना जाता है। इस युग में महिला प्रत्येक कदम पर तिरस्कृत, असुरक्षित और उत्पीड़ित थी। यदि पति नैतिक दृष्टि से कमजोर होता था तब भी पत्नी अपने पति को तलाक नहीं दे सकती थी।⁵ ब्रिटिश काल के आरम्भ में आरक्षण के सम्बन्ध में महिलाओं के राजनीतिक अधिकार नगण्य ही थे। 1937 ई. में कुछ महिलाओं को पति की सम्पत्ति और शिक्षा के आधार पर वोट देने का अधिकार अवश्य मिला।⁶ राष्ट्रीय आन्दोलन के दौरान जब—2 पुरुष नेतृत्व ब्रिटिश सरकार द्वारा बंदी बनाया गया तब—तब आंदोलन के दिशा निर्देशन का कार्य महिलाओं ने सम्भाला उनमें से कुछ प्रमुख महिलाओं के नाम आदर और आसानी से लिये जा सकते हैं— अन्तिका बाई गोखले, कामदार, दुर्गाबाई, कृष्णा बाई पंजीकर, शोभाबाई आदि।⁷ आगामी वर्षों में राजकुमारी अमृत कौर, अचाम्मा मथाई और धनवन्ती रमाबाई की भूमिका भी महत्वपूर्ण रही।⁸ महिलाएँ राष्ट्रीय कांग्रेस की सक्रिय सदस्य के रूप में संगठित होती हुई भी दिखाई दी।⁹ राष्ट्रीय आन्दोलन में महिला भागीदारी को तीन प्रमुख स्तरों पर देखा जा सकता है।¹⁰ हलांकि वे सामान्य महिलाएँ जिन्होंने सत्याग्रह में हिस्सा लिया लेकिन वे किसी भी राजनीतिक—समाजिक संगठन में औपचारिक रूप से संबन्धित नहीं थी दूसरा— वे महिलाएँ जो गांधीवादी राजनीति से प्रभावित हो समाज सुधार की दृष्टि से सक्रिय हुई तीसरा—वे कुलीन महिलाएँ जिनके परिवार राष्ट्रीय आंदोलन में प्रतिबद्ध थे फलतः ऐसी महिलाओं का सार्वजनिक राजनीति में प्रवेश और भूमिका सरल और स्वाभाविक माने गए।

19वीं शताब्दी के अंत में महिला संगठनों की स्थापना के प्रयासों में प्रगति हुई। सन् 1917 में मद्रास में राष्ट्रीय स्तर पर "वूमैन्स इण्डियन एसोसिएशन" की स्थापना हुई। इस जनसंगठन ने महिलाओं के पक्ष में अनेक कानूनी सुधारों की मांग और महिला मताधिकार को सरकार के समक्ष रखा।¹¹ 19वीं शताब्दी में किए गए महिला संगठनों के प्रयासों से महिला वर्ग में चेतना जागने लगी इसी समय मैडम कामा, तोरुदत्त और स्वर्णकुमारी देवी ने भी महिलाओं में जागृति लाने का प्रयास किया।¹² इसी दिशा में सरोजनी नायडू के नेतृत्व में ब्रिटिश सरकार से व्यवस्थापिका और प्रशासनिक संस्थाओं में महिला प्रतिनिधित्व की मांग की गई।¹³

कुछ संवैधानिक प्रयासों का यहाँ उल्लेख किया जाना अनिवार्य है जिन्होंने भारतीय संविधान में महिलाओं की स्थिति को मजबूत बनाने में सहायता प्रदान की है—

1. सन् 1917 में भारतीय महिलाओं के एक शिष्ट मण्डल ने भारत सचिव (लॉर्ड मोन्टेग्यू) के समक्ष राजनीतिक अधिकारों की मांग रखी फलस्वरूप महिलाओं को प्रांतीय धारा सभाओं में सीमित मताधिकार प्राप्त हुआ। 1919 के अधिनियम में 3,15,000 महिलाओं को मताधिकार प्राप्त हुआ।¹⁴

2. सन् 1926 के विधान में महिलाओं को धारा-सभा का सदस्य बनने का अधिकार प्राप्त हुआ। इसके अतिरिक्त इसमें महिलाओं के लिये स्थान भी निर्धारित किए गए। धीरे-धीरे 2 जिला बोर्डों और नगरपालिकाओं से महिलाओं का प्रतिनिधित्व बढ़ता गया।

सुचेता कृपलानी ने 'भारत छोड़ो आन्दोलन' में सक्रिय भाग लिया। सन् 1949 में संयुक्त राष्ट्र संघ में भारतीय प्रतिनिधि मण्डल की सदस्य थीं और सन् 1963 से 1967 तक उत्तर प्रदेश की मुख्यमंत्री रहीं।¹⁵ चन्द्रावती को भारत की प्रथम महिला उपराज्यपाल बनने का गौरव प्राप्त हुआ और फरवरी, 1990 से दिसम्बर 1991 तक पांडिचेरी की लैफ्टिनेंट गवर्नर रहीं। इन्होंने सन् 1994 में पैप्सू विधानसभा चुनाव लड़ा और दादरी से विधायक चुनी गईं एवं कर्नल रघुवीर सिंह मुख्यमंत्री काल में उनके मंत्रिमण्डल में संसदीय सचिव रहीं। सन् 1982-85 तक हरियाणा विधानसभा में विपक्ष की नेता के रूप में कार्य किया।

सन् 1967 में हरियाणा विधानसभा के चुनावों में महिला विधायकों की संख्या 5 रही। सन् 1968 के मध्यवर्ती चुनाव में महिला विधायकों की संख्या 7 हो गई। महिला राजनीतिक आरक्षण आवश्यक क्यों है? इसके जवाब में यह कहा जा सकता है कि नारी को समान सम्मान भाव से जीने का जन्मजात प्रकृति प्रदत्त प्रबल अधिकार है नारी प्रबुद्ध भी है और पुरुष से अधिक गुणवान है। इतिहास गवाह है कि बुद्धि बल ने सदैव शरीर बल को अनुशासित और अधिशासित किया है। महिला सत्ता में सहभागीदारी चाहती है और सत्ता में पुरुष एकाधिकार को समाप्त करने के लिये कटिबद्ध है।

राजनीतिक सत्ता संतुलन के लिये नारी सबसे पहले राजनीतिक आरक्षण की मांग कर रही है। नारी शक्ति के केन्द्रीकरण और सबलीकरण के नाम पर लोकसभा और विधानसभा में महिला राजनीतिक आरक्षण की बात कही गई। श्री देवगौड़ा और श्री इन्द्रकुमार गुजराल दोनों के ही प्रधानमंत्री काल में यह बिल प्रस्तुत तो हुआ किन्तु राजनीतिक पुरुष इनछाशक्ति के अभाव में यह बिल पारित नहीं हुआ। 1996 ई. के चुनाव में 39 महिलाएँ लोकसभा सदस्य थीं जिनमें एक ही श्रीमती कांति सिंह महिला मंत्री बनी। 1998 ई. के चुनाव में विभिन्न दलों से महिलाएँ चुनकर आई और साझा सरकार बनी। पुरुष को नारी के साथ ही समाज की कल्पना करनी होगी।

नारी सबलीकरण और सशक्तीकरण से ही राजनीतिक सत्ता स्थायित्व सम्भव है। राजनीतिक सत्ता सहभागी बनाने के लिये नारी को स्वयं सबल होकर अपनी राह बनानी होगी। भारतीय महिला राजनीतिक सत्ता आरक्षण की स्थिति को देखें तो पता चलता है कि संविधान की धारा 15 का विधिक प्रावधान कुछ भी रहा हो, 1951 ई. से प्रारम्भ हुई राजनीतिक सत्ता यात्रा का 1999 तक का काल यह प्रदर्शित करता है कि संसद में महिला सत्ता पदार्पण की संख्या 10 प्रतिशत को कभी पार नहीं कर पाई। भारत की प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी 1968 में 1984 तक के काल तक 2 वर्षों की अवधि छोड़कर रहीं, वे भी महिलाओं की राजनीतिक भागिता और लोकतंत्रीय प्रतिनिधित्व का प्रतिशत बढ़ा नहीं सकी।

1996 में महिला राजनीतिक पर्यवेक्षण नामक संस्था की स्थापना हुई जिसने असत्यता से पर्दा उठाया और 1991 के 9,000 चुनावी प्रत्याशियों का अध्ययन कर यह सत्यता सामने लाई कि सशक्त राजनीतिक दलों की

महिला प्रत्याशी विजयी हुई। 1998 में श्रीमती इलापंत ने उत्तराखण्ड से श्री पं. नारायण दत्त तिवारी को हराया, यह महिला चुनावी विजयश्री का सुखद उदाहरण है। आज प्रसिद्ध कवियत्री प्रभा ठाकुर, श्रीमती सोनिया गांधी, स्वर्गीय सुषमा स्वराज, जयललिता, राबड़ी देवी, मेनका गांधी, वसुन्धरा राजे, उमा भारती, ममता, गिरिजा, शीला दीक्षित आदि अनके महिलाएँ राजनीतिक क्षेत्र में चर्चित हैं।¹⁶ 1996 में श्रीमती फूलन देवी जैसी महिला का जौनपुर सुरक्षित सीट से जीत कर आना भी जनमानस में पीड़ित महिला के प्रति सद्भाव का प्रतीक है। महिला अभिनेत्रियों और धार्मिक धारावहिक की चर्चित तारिकाओं ने भी अपना वर्चस्व राजनीतिक क्षेत्र में स्थापित किया है।

50 प्रतिशत आरक्षण मान्य क्यों नहीं?

यह 50 प्रतिशत का आरक्षण महिलाओं के सन्दर्भ में जनसंख्या प्रतिशत के आधार पर राजनीतिक न्याय के संदर्भ में पुरुष को मान्य क्यों नहीं है? और वह 33 प्रतिशत की ही बात क्यों करता है?

संविधान के 81वें संशोधन बिल को पारित कराने की मांग के पीछे सीधा मंतव्य यही है कि महिलाओं के प्रभावी स्वर राजनीतिक सत्ता मंच पर उभरें और वे विधायिका की प्रभावी शक्ति हो जाएं ताकि नारी कल्याण, उन्नति, विकास, उत्थान और समृद्धि से सम्बद्ध जितनी भी नीतियाँ हैं, उनके लक्ष्य निर्धारित करके उनकी प्राप्ति के निश्चित कार्यक्रम क्रियान्वित कर “नारी सबलीकरण” के नारे को मूर्त रूप दिलाकर सामान्य नारी का विकास विशिष्ट रूप से वरीयता के आधार पर कराया जा सके। संविधान की धारा 15 के अनुसार स्त्री और पुरुष दोनों को ही “जाति” के पिछड़ेपन का बराबर लाभ मिले।

नारी जगत का कहना है कि प्रबुद्ध नारी से पुरुष डरता क्यों है? पाश्चात्य शैली से संवरी और प्रबुद्धता से भरी नारी को राजनीतिक क्षेत्र में जब पुरुष को वह चुनौती देती दिखती है तो वह “परम्परा”, “अनैतिकता”, “आदर्शहीनता” और “निर्लज्जता” की बात करने लगता है। नारी को मुक्ति अधिकार का हवाला देकर पुरुष 33 प्रतिशत राजनीतिक आरक्षण देना चाहता है ताकि 67 प्रतिशत पर तो वह अपना वर्चस्व बनाए रखे और इनमें से भी वह नारी को सामान्य/दलित/अनुसूचित/अल्पसंख्यक समुदाय में बांटकर नारी शक्ति को धर्म, जाति, सम्प्रदाय के नाम पर उनकी संयुक्त शक्ति को तोड़ना चाहता है। एक ओर तो पुरुष नारी को सकल जनसंख्या का आधा भाग मानता है किन्तु जब राजनीतिक सत्ता समीकरण आरक्षण की बात आती है तो केवल मात्र 33 प्रतिशत का प्रस्ताव देता है।

जब मताधिकार समान है तो नारियों को 50 प्रतिशत तक संसद में उपस्थित रहने का अधिकार क्यों नहीं है? प्रश्न है— सत्यनिष्ठता का, मंतव्य और उद्देश्य की पवित्रता का, अंतकरण की शुद्धता का। आवश्यकता है शुद्ध सात्विक मंतव्य की।

विश्व मानवाधिकार संगठन का नारा है— सबके लिये सारे मानवाधिकार। यह लक्ष्य भी है, उद्देश्य भी है और दर्शन भी, जिसको क्रियान्वित करने की आवश्यकता है। मात्र योजनाएँ, कार्यक्रम बनाने और अधिकार दिवस मनाने से मूल उद्देश्य की पूर्ति सम्भव नहीं है। आवश्यकता ऐसे वातावरण के निर्माण की है जिसमें नारी एक जाति के स्थान पर एक “व्यक्ति” के रूप में पुरुष समाज में अपना विशिष्ट स्थान बनाकर जी सके।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. डॉ० व्यास, श्याम प्रसाद— युग युगीन भारतीय नारी, पृ. 63 ।
2. अंसारी, एम.ए. — महिला और मानवाधिकार, पृ. 328 ।
3. वही, पृ. 331 ।
4. कांत, अंजनी, — वूमैन एण्ड लॉ, पृ. 36 ।
5. त्रिपाठी, शंभुरत्न — भारतीय संस्कृति और समाज, पृ. 332 ।
6. पन्निकर, के.एम.— हिन्दू सोसाइटी एट कॉस रोड्स, एरिया, पृ. 36 ।
7. जोशी, वी.सी—राममोहन एण्ड द प्रोसेज ऑफ मॉडर्नाईजेशन इन इण्डिया, पृ. 20 ।
8. थामस, वी—इण्डियन वूमैन थ्रू द एजेज एशिया, पृ. 332 ।
9. चटर्जी, रामानंद— मार्टन रिन्डू, राम मोहन राय द्विशत जन्म वार्षिक समारोह समिति पुस्तिका, पृ. 8 ।
10. वही, पृ. 15 ।
11. इवेरिट, जे.एम. — वूमैन एण्ड सोशल चेन्ज इन इण्डिया, पृ. 70—72 ।
12. नेहरू, श्यामाकुमारी—अवर कॉज, पृ. 366—67 ।
13. गुप्ता, एम.एल एवं शर्मा, डी.डी. — भारतीय समाज एवं सांस्कृतिक संस्थाएँ 1995, पृ. 263 ।
14. जोशी, ओमप्रकाश एण्ड जैन, शशी.के — भारतीय सामाजिक व्यवस्था, पृ. 33 ।
15. मौर्य, शैलेन्द्र—महिला मानवाधिकार—ज्वलन्त मुद्दे एवं प्रमुख व्यवस्थाएं पृ. 131 ।
16. अंसारी, एम.ए.—महिला और मानवाधिकार, पृ. 341 ।

dr.bindubhasin.bikaner@gmail.com



राजस्थानी के आधुनिक प्रबंधकाव्यों का कथ्य विश्लेषण— एक अध्ययन

डॉ. मनोज कुमार

सहायक आचार्य, महाराजा गंगासिंह विश्वविद्यालय, बीकानेर।

कथानक प्रबंधकाव्य का मेरुदण्ड हैं कथानक के आधार पर प्रबंधकाव्य का ढांचा खड़ा होता है। कथात्मक आधार पर ही उनच भूमियों का स्पर्श करता है। इतिवृत्ति चरित्रों के विकास एवं पाठकीय जिज्ञासा—जागृति का कारक बनता है। प्राचीन लक्षणकार तो कथा को प्रबंधकाव्य संरचना का अनिवार्य अंग स्वीकारते हैं। कथा की महता का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि महाकाव्य को कथाकाव्य की संज्ञा देते हैं। इस संबंध में दण्डी, रूद्रट, विश्वनाथ प्रभूति काव्याचार्यों के तथा पाश्चात्यों में आई.टी.मायर्स, सी. एम. बावरा, डिकसन आदि ने विस्तृत विवेचना की है।

प्रबंधकाव्य का संबंध जिन घटनाओं और व्यापारों से होता है वे सब कथानक के अन्तर्गत समाविष्ट होते हैं। कथानक के लिए कथावस्तु, विषयवस्तु, इतिवृत्त, कथा कथ्य आदि शब्द प्रचलित हैं। कथानक के विकास, गुणों, प्रकारादि के संबंध में साहित्य शास्त्री मतैक्य नहीं है। मौलिकता रचना कौशल, सत्यता और रोचकता श्रेष्ठ कथानक गुण माने गये हैं। कथानक का चयन इतिहास, पुराण, समसामयिक घटनाचक्र एवं कल्पना प्रस्तुत होता है। कथानक की सफलता रचनाकार की मौलिक प्रसंगोदभावनापूर्ण चयन—कला पर निर्भर करती है। कथानक के संगठन और विन्यास में कार्यकारण संबंध मनोवैज्ञानिक क्षण, उत्कण्ठा, चरमोत्कर्ष आदि गुणों का समावेश होना चाहिए।

आधुनिक प्रबंधकाव्यों का कथ्य परिवेश :-

आधुनिक समीक्षक एवं प्रबंधकार दोनों ही प्रबंधकाल संरचना में कथानक की महता को स्वीकार करते हैं किन्तु प्रतिमानों में अंतर है। समकालीन प्रबंध संरचना के कथ्य वृत्त की परिधि में चिरन्तन प्रभावकारी घटना या क्षणिक महत्व की श्वसनीयता सवेदना व्यक्ति की मानसिकता उब से भरी स्थितियां आपातकाल की प्रतिक्रिया या जर्जरित परम्पराओं की विसंगतियों से लेकर युगीन आस्थाओं से जन्मे नव्य भाव बोध तक कोई भी संदर्भ प्रबंधकविता का कथ्य संदर्भ बन सकता है। वस्तुतः प्रयोगवादी कविता एवं नयी कविता की कथ्य भंगिमाओं का रूपांतरण ही नयी कविता के प्रबंधकाव्यों में हुआ है। यहां साठोतरी कविता के संबंध में कहा गया कथन उल्लेखनीय है—

‘साठोतरी कविता का कथ्य आत्म संकेतन अथवा सैक्स न होकर आत्म विस्फोट है जो कि उपेक्षा, दमन और नगण्य कहने से जन्मा है।’ समीक्ष्य प्रबंधकाव्यों में कथ्य की व्यापकता और कहीं-कहीं अति व्याप्ति के अनेक कारण हैं। समकालीन प्रबंधकाव्यकार और पौराणिक प्रख्यात वृत्तों के सूत्र संकेत लेकर व्यापक भावबोध को अभिव्यक्ति प्रदान करने का प्रयास करते हैं। इन्हीं सार्थकताओं के अनुरूप कथ्य की पहचान एवं पकड़ भी समीक्ष्य प्रबंधों में हुई है। समीक्ष्य रचनाओं का कथ्य पर मुख्यतः प्रबंधकाव्यकारों की मानसिकता से बुना गया है। ये कथ्य संदर्भ निश्चय ही वर्तमान के यथार्थ से साक्षात्कार कराते हैं।

यद्यपि समीक्ष्य प्रबंधकाव्यों में कथ्य-चयन पौराणिक एवं स्रोतों से हुआ है, तथापि उसमें मौलिकता का समावेश हुआ है। समीक्ष्य प्रबंधकाव्यों में कथ्य की समीक्षा के निम्नांकित आयाम निर्धारित दिये गये हैं।

- (1) कथा चयन के स्रोत।
- (2) कथा विधान का वैशिष्ट्य।
- (3) कथा संयोजन में कल्पना एवं मौलिकता के प्रतिमान जानकी।

काव्य रूप की दृष्टि से श्रीमंतकुमार व्यास रचित जानकी एक प्रबंधकाव्य है। सीता के चारित्रिक उत्थान को युगीन संदर्भों में सम्पृक्त कर प्रस्तुत करने में ही प्रबंधकार का वैशिष्ट्य है यह कथा मानवीय संवेदनाओं एवं अर्न्तद्वन्द्वों की उदात्त समीक्षा है। मर्यादा पुरुषोत्तम राम एवं राजरानी सीता के जीवनादर्शों को आदि कवि वाल्मीकि से लेकर इक्कसवीं सदी के गोमुख पर बैठा कोई अनाम कवि भी शब्द सृष्टि का विषय बनाने के लिए विवश है। इस काव्य का सम्पूर्ण कलेवर नव्य चेतना एवं आधुनिक बोध को आत्मसात किये है। सम्पूर्ण कथा इक्कीस खण्डों में विभक्त है।

मीरा :-

मीरा महाकाव्य राजस्थानी भाषा और साहित्य के यशस्वी रचनाकार श्रीयुत श्रीमंत कुमार व्यास की दूसरी सुललित प्रबंधकाव्य कृति है। इस महाकाव्य में कवि की भावयित्री प्रतिभा ने आद्यान्त माधुर्य-मंदाकिनी प्रवाहित की है। मीरा बाई का व्यक्तित्व और कृतित्व वीरप्रसू मरुधरा में माधुर्य की पयस्विनी बनकर शताब्दियों से जनमानस को आप्यायित करता रहा है। मीरा की पदावली का सम्मोहन राजस्थान और गुजरात प्रांत में नहीं अपितु सम्पूर्ण भारत में समान रूप से संतों, भक्तों, कवियों और लोक गायकों की प्रेरणा का अजस्र स्रोत रहा है। हिन्दी में सर्वप्रथम राजस्थान के सुधि कृतिकार श्री परमेश्वर द्विरेपा ने मीरा महाकाव्य का प्रणयन किया। ‘मीरा’ के मर्मस्पर्शी चरित्र पर राजस्थानी भाषा में श्रीमंत कुमार व्यास प्रणीत ‘मीरा महाकाव्य’ सर्वप्रथम मौलिक प्रयास है। व्यास प्रणीत मीरा महाकाव्य का सृजनात्मक वैशिष्ट्य यह है कि इस कृति की जहां मीरा की पदमाधुरी का लालित्य अभिव्यंजित हुआ है, वही राजस्थानी भाषा की रचना सामर्थ्य भी उजागर हुई है। प्रकान्तर से मीरा महाकाव्य मायड़ भाषा की गौरव- गरिमा का ज्वलंत प्रमाण है।

कथा क्रम की दृष्टि से मीरा महाकाव्य चिन्ह सर्गों में वर्गीकृत है रचनाकार ने इस

प्रबंधकाव्य के कथ्यपट का ताना-बाना ऐतिहासिक तथ्यों से बुना है। मीरा से संबंधित कथाओं, किवदतियों एवं जनश्रुतियों को व्यासजी ने समग्रतः ग्रहण किया है। अनेक स्थलों पर कथ्य समायोजन में नवीन उद्भावनाएं करके कवि ने अपनी रचना प्रतिभा का प्रभूत परिचय दिया है। कवि द्वारा मीरा के पावन चरित्र का नानाविध महत्वाकन किया गया है। जो एक आस्तिक, भक्त हृदय कवि की ओर से अपनी रचना की आराध्या- नायिका मीरा को भावभीनी बहुमुखी श्रद्धांजलि है। स्वयं कवि के शब्दों में श्रीकृष्ण के रूपरंग में रची-बसी मीरा की अंतर्व्यथा को उसके घुंघरूओ ने मुखरित किया तथा दरद दीवाणी ने ज्ञानसागर का मंथन कर प्रेमसुधा रस पान किया। कवि की दृष्टि में मेड़तणी अमृत निर्झर थी। यथा :

सबदा री सिणगारी मीरां भावां मायं उडारी मीरा।
 दया मया री बिरखा करती, ओड़ी इमरत झारी मीरां॥
 मीरा नहीं मानवीं कोई, खुद राधा बण आई मीरां।
 हरे कृष्ण की टेर लगाती, गीत गीत में छाई मीरां॥

कवि ने इसी सर्ग में मीरा को श्भव री आसाइ गीत री परिभाषा मरुधर संस्कृति री प्रतीक और मायड री ममता कह कर महिमा मंडित किया है।

इकतारे रे सुर री सुरसत भक्ति री सूरत है मीरां।
 मीरा है भौ भौ री आसा, परिभाषा गीतां री मीरां॥
 मीरा है संस्कृति मरुधर री मायड री ममता है मीरा।
 सत्य शांति री स्रष्टा चेष्टा सरगम की समता है मीरां॥

चोपदी श्रीमंत कुमार व्यास की तीसरी महत्वपूर्ण कृति है। युगीन समस्याओं और परिवेश सम्पृक्ति की चेष्टि से इसका महत्व 'जानकी' के समान है। वैसे तो महाभारतीय कथा का प्रत्येक पात्र महत्वपूर्ण है और अधिकांश का चरित्र चित्रण उत्कृष्ट हुआ है किन्तु उत्पत्ति से लेकर महाप्रयाण तक द्रोपदी का चरित्र अंकन अति रोचक, रोमाचक, करुणात्मक लोमहर्षक एवं उत्साहवर्द्धक जैसे नाना रूपों में हुआ है जो अद्भुत एवं विचित्र है।

द्रोपदी राजस्थानी कृष्ण कथा काव्य के दायरे में निर्मित एक ऐसी राजस्थानी रचना है जिसमें छोटे-छोटे कुल सत्रह सर्ग हैं। प्रारम्भ में मंगलाचरण के तीन सोरटे हैं। जिसमें गणपति, सरस्वती एवं श्रीकृष्ण की वंदना है। कवि ने द्रोपदी को यज्ञवेदी से अवतरित बताते हुए उसकी दिव्यलीलाओं का संकेत दिया है। यथा

यग्य ज्वाल सू उपजो अद्भुत सुंदर कन्या कृष्णा।
 रूप देख भरता नी नैणा जागी दूणी तृष्णा॥
 योनी में सू जनमी कोनी द्वापर री आ नारी।
 ऐडी रचना रचिक आया बंधिया कृष्ण मुरारी॥

अर्जुन द्रोपदी से शादी करके अपनी माता के पास आता है तथा अपनी मां को कहता कि देखो मैं कैसी वस्तु लाया हूँ तब मां अंदर से ही कह देती है। कि पांचो भाई आपस

में बांट लो। इस तरह इस सर्ग में कवि ने बताया कि द्रोपदी को पूर्वजन्म में भगवान शंकर से वरदान मिला था कि अगले जन्म में तुम्हारे पांच पति होंगे। तब द्रोपदी को भी अपने पूर्वजन्म की बात याद हो आती है तथा वह भी इसे भगवान शंकर का वरदान मान कर स्वीकार कर लेती है। यथा

पूरब जनम री बात याद जद कृष्णा नै ई आई।
पांचू ही पति बणै ला पांडव पांचू भाई ॥
संकर रो वरदान भला ओ कूड़ो किकर जासी।
वर पांनया नै मान द्रोपदी इण सू ई सुख पासी॥

समीक्ष्य प्रबंधकाव्यों के कथास्रोत -

जानकी प्रबंधकाव्य का वस्तुविन्यास सुप्रसिद्ध रामकथा के आधार पर हुआ है। कृष्ण के भाति राम भी भारतीय जनजीवन के आराध्य और उपास्यदेव रहे हैं। राम का चरित्र साहित्यकारों की सृजन-प्रेरणा के लिए अजस्र स्रोत रहा है।

सीता-चरित्र को रामाख्यान से अलग नहीं किया जा सकता। ब्रह्म और माया की तरह एक दूसरे के पूरक राम एवं सीता को श्रीव्यास जी ने युगीन संदर्भ देकर कथ्य और तथ्य के नये आयाम दिये हैं। केवल सीता को ही कोने में रखकर कई खण्ड काव्य एवं महाकाव्य विभिन्न भारतीय भाषाओं में लिखे गये हैं। वाल्मीकि की शाश्वत नारीत्व और ऊर्जास्वत मातृत्व के दो छोरों को मिलाने में निमग्न धरती बेटी की सीता। कालिदास की महिमा मंडित राजमहिषी और गरिमामय चरित्रावली वैदेही, भवभूति की करुणा विगलित और पीड़ा की पराकाष्ठा जनक नन्दिनी जानकी कितने चित्र हैं, कितने चरित्र हैं। इसके अतिरिक्त भी नेपाली सीतायन और उड़िया का वैदेहीश विजयश आदि प्रबंधकाव्य सीता को केन्द्र में रखकर लिखे गए ग्रंथ रत्न हैं।

राजस्थानी भाषा में रामचरितमानस का अनुवाद पिछले ही दिनों अम्बू शर्मा ने किया है। इस तरह संस्कृत से चलकर जो कथाधारा अवधि को परिप्लावित करती रही है, वह राजस्थानी मरुधरा को भी अपनी नहरों से पानी पिला रही है, श्रीमंत कुमार व्यास लिखित जानकी प्रबंधकाव्य उसी श्रृंखला की एक सजल-सरल भावधारा है। इससे राजस्थानी रामकथा काव्य की परम्परा निश्चय ही वृद्धिगत हुई है।

मीरां - समीक्ष्य प्रबंधकाव्यों के कथा स्रोत प्रबंधकाव्य का कथानक के कथ्यपट का ताना-बाना ऐतिहासिक तथ्यों से बुना है। मीरो से संबंधित कथाओं किवदंतियों एवं जनश्रुतियों को व्यास जी ने समग्रतः ग्रहण किया है।

स्वयं कवि के शब्दों में 'मीरा महाकाव्य' सिरजण री प्रेरणा म्हेने पेली श्री भूपति राम जी साकरिया म्हारी नैनी पोथी श्मीरा रा प्रभु गिरधर नागर री भूमिका में दी अर पछे बीकानेर में एक समारोह में डा. देवीप्रसाद गुप्त ने दी।

मीरा रो घरम करम संप्रदाय सैग गोविन्द रो गुण गाणो हो।
लखावै है के राधा खुद ई मीरा रो अवतार लियो।

मीरा आखा जगत ने आपरा प्रेम अर विरह रा गीता सू रस में भिजो दीनी।
मीरा जेड़ी भगत धरती माथे लाधणी दोरी है इण माथे जितरो लिखियो जावे उतरो ही थोड़ो है।

स्पष्ट है कवि ने अपने काव्य का आधार ऐतिहासिक तथ्यों को बनाया है और काव्यात्मक रूप प्रदान किया है।

समीक्ष्य प्रबंधकाव्यों के कथास्रोत -

द्रोपदी काव्य के कथानक का मूल आधार महाभारत है और कवि ने इसी को आधार बनाते हुए प्रस्तुत काव्य का सृजन किया है जैसे तो महाभारतीय कथा का प्रत्येक पात्र महत्वपूर्ण है मगर उत्पत्ति से लेकर महाप्रयाण तक द्रोपदी का चरित्र काव्यकार को विशेष प्रभावित करता है अतः उसी विशेषता और नारी समाज के प्रति अपनी श्रद्धा प्रकट करते हुए कवि ने इस काव्य की रचना की है।

कवि के शब्दों में 'निःसंदेह महाभारत की यह नायिका ऐसी हीरमणी है जिसकी ज्योति युग-युग से आज तक दीप्तिमान हो रही है। सनचाई तो यह है कि रंभा सा रतिमान, गायत्री सी गुणगान और दुर्गा सी शक्तिमान द्रोपदी के अस्तित्व के बिना महाभारत की रचना ही नहीं हो पाती। यदि हो भी जाती तो इतनी सटीक और प्रभविष्णु नहीं हो पाती। द्रोपदी का पावन आख्यान असंख्य नर-नारियों का पथ प्रदर्शक ही नहीं अपितु मंगलदायक और पापविनाशक भी है। भगवान श्रीकृष्ण में जिसे प्रत्यक्ष रूप से पग-पग पर सम्भाला और संबल बनकर हमारी संस्कृति में आलोकित किया। ऐसी सती द्रोपदी के लिए काव्य सृजन करना परमानन्द की प्राप्ति करना और सांसारिक भवबाधाओं से मुक्ति पाना है।

कथानक में मौलिक प्रसंगों की उद्भावना कथात्मक संगठना एवं घटना संयोजन की दृष्टि से श्रीमंत कुमार व्यास वाल्मीकि रामायण एवं तुलसी कृत रामचरितमानस के ऋणी है। इसे यदि यो कहा जाए कि कवि रावण वध तक तुलसी की अंगुली पकड़कर चलता है और सीता त्याग से अंत तक की कथा में वाल्मीकि का सहारा लेता है तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। मंगलाचारण में श्रीव्यास ने जगदम्बा जानकी की आदिशक्ति एवं लक्ष्मी स्वरूप का स्मरण किया है और अंतिम सर्ग में राम-सीता के अविनिच्छन्न अद्वैत रूप की अवतारणा। इन दोनों में श्नादी और भरत वाक्य की परम्परा का निर्वाह है। इस दृष्टि से जानकी के कथ्य चयन नितान्त मौलिक प्रयास है। परिचित प्रसंग के संयोजन में कवि ने आधुनिक चेतना का समाहार किया है, जो कथ्य-चयन-विषयक मौलिकता का परिचायक है।

कथानक में मौलिक प्रसंगों की उद्भावना वस्तु विधान में मीरामहाकाव्य इतिवृत्तात्मक आधार होते हुए उसके रचयिता ने वस्तुविधान में मौलिकता का परिचय दिया है। मीरा के संबंध में आवश्यक जानकारी एक औसत वैष्णव को सहज ही हो जाती है परन्तु कवि की विशेषता स्थूल, शुष्क व तथ्यात्मक रेखाचित्रों में अपनी संवेदनशील तूलिका से यथोचित रसप्लावित रंग भर कर सम्पूर्ण परिश्य को मनमोहक, चित्ताकर्षक, चिरस्मणीय व सर्वयुगीन स्वरूप प्रदान करने में है और यह काम कवि ने सफलतापूर्वक सम्पन्न किया है। मीरा महाकाव्य के प्रारम्भ में ही

कवि ने मीरा का प्रशस्ति वाचन किया है जो एक आस्तिक भक्तहृदय कवि की ओर से अपनी रचना की आराध्या-नायिका मीरा को भाव-भीनी बहुमुखी-श्रद्धांजलि है। इस प्रकार प्रारम्भिक मीरां स्तवन से ही कवि के काव्य-कौशल का पूर्वाभास हो जाता है।

इसी तरह किसी भी काव्य कृति में, जहां नायक के सम्पूर्ण चरित्र का चित्रण होता है, उसके बाल चरित चित्रण में भी कवि का कौशल काम करता है। तुलसी ने राम के बाल रूप का वर्णन चार चौपाइयों में करके कथा प्रवाह को चाहे आगे गढ दिया हो परन्तु श्री व्यास जी ने मीरां के बचपन की आयोजित रासलीला का वर्णन बड़े ही सहज मौलिक ढंग से किया है।

कथानक में मौलिक प्रसंगों की उद्भावना द्रोपदी काव्य की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि पौराणिक आख्यान को नये अंदाज से प्रस्तुत करना। काव्यकार का कर्तव्य इतिहास पुराण की जीर्णकाय कथानकों को युग जीवन के अनुरूप आकार प्रदान करना होता है। द्रोपदी के रचनाकार ने आद्यांत कल्पनाशक्ति के सशक्त प्रयोग द्वारा कथा चयन में मौलिकता का प्रदर्शन किया है। साथ ही रचनाकार का वैशिष्ट्य काव्य सृजन से ज्यादा भक्ति भावना रही है। स्वयं कवि के शब्दों में—

भारतीय बाङमय में द्रोपदी ऐसी प्रस्तुति है जिसमें सतीत्व की शक्ति पातिवृत्य की अनुरक्ति, श्रीकृष्ण की भक्ति और विदेह की विरक्ति सी उद्वेलित संस्तुति स्पष्ट झलकती है। द्रोपदी आर्य संस्कृति का ऐसा मिला-जुला स्वरूप है जिसने वैदिक साहित्य को केवल नैतिकता और अमरता प्रदान की है अपितु कोटि-कोटि भारतीयों के लिए धर्मभिति का बौद्धिक आधार भी दिया है। लेकिन साथ ही हमें यह भी ध्यान रखना होगा कि द्रोपदी काव्य प्राचीन महाभारतीय ग्रंथ को आधार बनाकर लिखा गया है। अतः कथा में कही भी हेर-फेर तो हो नहीं सकता। हां इतना जरूर है कि राजस्थानी भाषा में इसका सरल और स्वाभाविक सरस शैली में प्रस्तुतिकरण अपने आप में मौलिकता से कम नहीं है और यही इस काव्य की सबसे बड़ी विशेषता है।



A Study Related to Human Rights and Indian Constitution with Special Emphasis about the Role of United Nations

-Minakashi Kumawat

ASSISTANT PROFESSOR, GOVERNMENT LAW (P.G.) COLLEGE, BIKANER (RAJASTHAN)

ABSTRACT :-

It should always be remembered about this is a essential fact that Human Rights are not a gift given by a political sovereign but it is such a right that human has received from his or her birth that is which is always associated with the existence of human. Thus human rights are a part of human nature. Human rights are the rights which we must get as a human being and in the absence of them we cannot develop our personality fully. Human rights are the rights given by nature and these rights guarantee freedom to the individual as well as freedom against exploitation and atrocities and finally such an environment developed in the society in which the proper opportunities for personality development and dignity full life are available to all.

This article clarifies the meaning of Human Rights along with the difference between human rights and fundamental rights also. The article also focuses on the provisions relating to human rights and their inclusion in the Indian Constitution. Apart from this, it takes a look at the efforts made by the United Nations to achieve these rights at the global level.

Keywords : Human Rights, Freedom, Dignity full life, United Nations.

INTRODUCTION :-

Human rights are basically the rights that every person gets by reason of being a human being. Being Human every person is entitled to these rights regardless of gender, caste, creed, religion, culture, social and economic status, place etc. Human rights are universal and protected by law. In this way human rights are equally enjoyed by all. It is the principles which establish certain standards related to human behavior. These rights can never be abolished because they are received by human from birth.

Human rights are these rights which are very essential for the physical, mental and spiritual development of human beings. Universal Declaration of Human rights was adopted globally in 1948. According to this declaration every person in the society shall inculcate respect for these rights and shall endeavor to ensure the universal and effective recognition of these rights and their observance. If we talk about the origin and recognition of these rights, then these rights have been achieved by human after a long struggle.

If we talk about the ancient Indian legal system then it also did not have the concept of Human Rights. Only

duties were talked about. The jurists here believe that if all the people perform their duties, then the rights of all will be automatically protected. No one definite and accepted definition of the word 'Human Rights' can be given but the concept of Human Rights is very old. The new concept of Human Rights originated from the international charter and covenants implemented after the second world war.

HUMAN RIGHTS AT INTERNATIONAL LEVEL :

Human rights are basically based on the principle of natural rights. Natural rights are the belief that human rights are acquired by human beings. Therefore, human rights are inherent in the nature of human. It is not provided by any state, law or Institution. At the time of America's declaration of independence in 1776, this fact was clearly affirmed that 'All persons are equal by birth and God has given them the right to life, liberty and happiness.' A few years later in the year 1789, the declaration of Human and Civil Rights was made, in which human rights were described as natural and inevitable. It was clearly told that human rights are a gift of nature and no one can violate them. It cannot be transferred to any other person.

Former American President Roosevelt used the term 'Human Rights' in his famous message addressed to Congress on January 16, 1941 in which he declared a world based on four fundamental freedoms. Those four fundamental freedoms are-

1. Freedom of speech, 2. Freedom of religion, 3. Freedom from poverty and, 4. Freedom from fear.

After this human rights and fundamental freedoms were used in the Atlantic charter (1941) and afterwards the written exercise of human rights was done in the charter of the United Nations.

When the concept of welfare state emerged all over the world, there was a constant demand for human rights. But after the second world war human rights got a new identity. In the 20th century it was also agreed at the international level that human rights and freedoms are matter of concern for all and efforts should be made at the global level for their development and conservation. United Nations Organisation was constituted in 1945 . An important step was taken by the United Nations on 10 December, 1948 with the aim of protecting, conserving and respecting the human rights of all the people of the world. 10th December, 1948 is considered a golden day for the protection of human rights because on this day the United Nations General Assembly issued The Universal Declaration of Human Rights. Article 68 of the Constitution of the United Nations Organisation established Human Rights Council. The Universal Declaration of Human Rights was prepared under the chairmanship of Eleanor Roosevelt the first chairperson of this Council.

This declaration was adopted and declared by the General Assembly of the UNO on 10th December 1948 since then International Human Rights Day has been made every year on 10th December. In this declaration not only the rights of mankind were given place but also equal rights were given to men and women. All the Nations got inspiration and guidance from this declaration and along with it they proceeded to recognise and implement these human rights. The main objective of this manifesto is that every person should know these rights through teaching and education and the sense of respect for them should be awakened in everyone. Along with this, the purpose of this declaration is also that these human rights should get universal acceptance and they should be implemented at the national and international level.

STATUS OF HUMAN RIGHTS IN INDIA :

The Human Rights Act came into enforce in India from 28th September 1993. After this the National Human Rights Commission was also constituted by the government on 12th October 1993. Along with this, if we talk about the Constitution of India, giving adequate recognition to human rights in the Indian Constitution, the International Declaration of human rights was guaranteed. Under the Directive Principles of State Policy in the Indian Constitution, the objective of building a public welfare state has been incorporated and guaranteed to provide the right to life in a dignified environment as a fundamental right. Along with this it is also worth mentioning that not only human rights have been guaranteed in the Indian Constitution but in case of violation of these the High Courts and the Supreme Court have also been given wide powers. As we all know that there is a close relationship between human rights and fundamental rights . Therefore, this thing has been kept in mind in the Indian Constitution as well. Thee main objective of Indian constitution is the best human interest under which all the countrymen can get equal opportunities without any discrimination the right to live a dignified life in an environment of peace and security.

The Indian courts has also accepted the point of actively protecting human rights. The Supreme Court has declared Human Rights as inherent rights. That is, these are rights that we get from birth. Along with this, they have also been considered as irrevocable and non-transferable rights by the Supreme Court .

Human rights have been defined in section 2(d) of the Protection of Human Rights Act, 1993. This section defines Human Rights in three ways. Firstly, according to this section human rights are those rights which are fundamental rights and also which are guaranteed in the part 3rd of Indian Constitution. So, we can say that fundamental rights are also human rights. Secondly, human rights are rights that are enshrined in international covenants. Here, International covenants means that when a country declares right and other countries express their consent to it. It becomes the part of the international Covenant and it is documented. Lastly, those rights considered as human rights which are enforceable as human rights by the courts of India.

Human rights have been very essential not only in today's time but also throughout the history of human civilization. If there is no human rights then our life will be very terrible and pathetic. Their importance cannot be denied. For example if we see in today's time it is seen in many Dictatorial run countries that just for expressing one's views or even making a small mistake harsh punishment like death penalty is given because neither the people there have human Rights nor any kind of law. In such countries the prisoners are treated worse than the animals.

INCLUSION OF HUMAN RIGHTS IN THE INDIAN CONSTITUTION :

- Article 1 of UDHR, 1948 provides that all human beings are born free and equal in dignity and rights and article 7 says all are equal before the law and are entitled without any discrimination to equal protection of the law. All are entitled to equal protection against any discrimination in violence of this declaration and against any incitement to such discrimination. Now if we read these two articles carefully, we will find that article 1 talks about equality before law and article 7 talks about equal protection of laws. Both these provisions are mentioned in article 14 of the Indian Constitution.

- Article 2 of UDHR, 1948 provides that everyone is entitle to all the rights and freedoms set forth in this Declaration, without distinction of any kind, such as race, colour, sex, language, religion, political or other opinion,

national or social origin, property, birth or other status. This provision has been given place in articles 15, 16 and 17 of the Indian Constitution.

- Article 3 of UDHR, 1948 provides everyone has the right to life, liberty and security of person. This provision included in article 21 of the Indian Constitution and protects the right to life and personal liberty.

- Article 4 of UDHR, 1948 says no one shall be held in slavery or servitude slavery and slave trade shall be prohibited in all their forms. Similar as article 23 of the Indian Constitution prohibits human trafficking, begar and other similar forms of forced labour so as to protect lakhs of under privileged and disadvantaged people of the country. This right is available to both citizens and non citizens of India.

- Article 5 of UDHR, 1948 provides that no one shall be subjected to torture or to cruel in human or degrading treatment or punishment that means no one will be treated cruelly whether it is a man, a woman, a child and elderly person or a person who is imprisoned. Similar provision has been made in articles 20 and 21 of the Indian Constitution. Where article 20 provides protection in respect of conviction for offences, article 21 states that no person shall be deprived of history her right to life and personal liberty except according to procedure established by law. Even the right to life of persons convicted under article 21 has been protected.

- Article 6 of UDHR, 1948 says that everyone has the right to recognition everywhere as a person or human before the law. Same purpose of this provision follows in the Indian Constitution under article 21. Article 21 guarantees the right of every person to lead a life of dignity. Earlier when the slave system was in practice the slaves were not considered human they were considered property. Even women were considered property. The object of article 21 of the Indian Constitution is that every person whether man or woman or third gender is all human and everyone should be considered as a human and be treated with the dignity.

- Article 8 of UDHR, 1948 provides about everyone has the right to an effective remedy by the competent national tribunals for acts violating the fundamental rights granted him by the constitution or by law. So we can say that article 8 provides regarding right to constitutional remedy and same object was followed by the Article 32 and article 226 of the Indian Constitution and make sure about the fulfillment of right to Constitutional Remedies.

Article 9 of UDHR, 1948 provides that no one shall be subjected to arbitrary arrest, detention or exile. That is no one will be arrested arbitrarily nor will be deported. Same provisions followed under article 22 of the Indian constitution which prohibits arbitrary arresting.

- Article 10 of UDHR, 1948 provides that everyone is entitled in full equality to a fair and public hearing by an independent and impartial tribunal, in the determination of his rights and obligations of any criminal charge against him. Basically it focuses on two elements- first, it is impartial hearing and second, is public hearing. The provision of Independence Judiciary settled as an example of basic structure, Equal justice and free Legal Aid under article 39a, Separation of Judiciary from Executive under article 50 are some of the provisions of Indian Constitution which fulfills the object of this article 10 of UDHR.

- Article 11(1) of UDHR says everyone charged with a panel offence has the right to be presumed innocent until proved guilty according to law in public trial at which he has all the guarantees necessary for his defence. Therefore this presumption of Innocence is also a human right.

Article 11(2) provides that no one shall be held guilty of any penal offence on account of any act for

omission which did not constitute a penal offence, under national or international law, at the time when it was committed. Nor shall a heavier penalty be imposed than the one that was applicable at the time the penal offence was committed. Same provisions are followed under article 20(1) of the Indian Constitution which propounded Doctrine of Ex Post Facto Law.

- Article 12 of UDHR, 1948 provides that no one shall be subjected to arbitrary interference with his privacy family home or correspondence nor to attacks upon his owner and reputation. Everyone has the right to the protection of the law against such interference or attacks. As a right to privacy is a human right so it is a part of article 21 of Indian Constitution.

- Article 13(1) of UDHR, 1948 provides that everyone has the right to freedom of movement and residence within the borders of each state. And article 13(2) provides that everyone has the right to leave any country, including his own, and to return to his country. These provisions are confirmed by the article 19

(1) (d) and 19 (1) (e) of the Indian Constitution.

- Article 18 of UDHR, 1948 provides that everyone has the right to freedom of thought, conscience and religion. Same provisions like this article provides a fundamental right to freedom of religion under article 25 (1) of the Indian Constitution.

- Article 19 of UDHR, 1948 provides that everyone has right to freedom of opinion and expression. This right includes freedom to hold opinions without interference and to seek, receive and impart information and ideas through any media and regardless of frontiers. Like this article 19(1) (a) of the Indian Constitution says that all citizens shall have the right to freedom of speech and expression.

- Article 20 of UDHR, 1948 provides that everyone has the right to freedom of peaceful assembly and association and no one may be compelled to belong to an association. Similarly article 19(1) (b) of the Indian Constitution provides that all citizens shall have the right to assemble peacefully and without arms.

- Article 21(1) of UDHR, 1948 provides that everyone has a right to take part in the Government of his country directly or through freely chosen representatives. This object is fulfilled under Article 326 of the Indian Constitution by given Right to Vote as a legal right.

Article 23(1) and (2) of UDHR, 1948 provides that everyone has the right to work, to free choice of employment, to just and favourable conditions of work and also to protection against unemployment. Everyone without any discrimination has the right to equal pay for equal work. Under the Directive Principles of State Policy in the Indian Constitution article 39 fulfills this object. Article 23(3) of UDHR, 1948 is concerned about right to just and favourable remuneration and also the human dignity which also ensures under the Directive principles of a state policy and article 21 of the Indian Constitution. Article 23(4) of UDHR, 1948 is about the right to form and two joint trade unions for the protection of workers. This human right ensures under article 43 (a) in the Indian Constitution and provides participation of workers in the management of industries.

- Article 25 of UDHR, 1948 provides that everyone has the right to a standard of living adequate for the health and well being of himself and of his family including food clothing etc. necessary social services and the right to security in the event of unemployment, sickness, disability, old age and other lack of livelihood in circumstances beyond his control. Along with this article provides about Motherhood and childhood are entitle to special care and

assistance. The purpose of the above article is fulfilled by article 42, 45 and 47 of the Indian Constitution.

- Article 26 of UDHR, 1948 provides about the right to education. As a fundamental right, the right to education under article 21a is inserted by 86th Constitutional Amendment Act, 2002 in the Indian Constitution. Thus, it is clear from the above description that the Human Rights provided at the international level have been ensured by the various provisions of the Indian Constitution.

As a conclusion we can say that the concept of Human Rights can be fulfilled only by solving the problems present in human society. Although making laws and enforcing them is the best way to protect human society from injustice and violence, but actual implementation of Human Rights declarations is very important so that the Universal Declaration of Human Rights can be realized. In the present context human rights and their protection is the duty of every citizen. Only through mutual brotherhood and cordiality we can protect and implement all human rights.

References :

1. Constitution of India.
2. Univesal Declaration of Human Rights; 1948
3. International Conenant of Civil and Political Rights; 1966
4. First Optional Protocal of ICCPR
5. Second Optinal Protocal of ICCPR
6. Indian Penal Code 1860
7. Criminal Pricedure Code, 1908
8. Indian Evidence Act, 1872
9. Civil Procedure Code, 1908
10. Protection of Civil Rights Act, 1993
11. Protection of Civil Rights Act, 1955
12. Juvenile Justice (Care and Protection of Children) Act, 2000 (56 of 2000)
13. Juvenile Justice (Care and Protection of Children) A mentment Act, 2006 (33 of 2006)
14. AIR
15. SCC
16. ILR
17. ISCLR
18. Persons with Disabilites (Equal Opporfunities, Protection of Rights and Full Participation) Act, 1995



A Study on Human Right between China and India

-Mrs. Radhika Sharma

Assistant Professor, Shri Jain P.G. College, Bikaner.

ABSTRACT :-

Human Rights is a dynamic concept that is the core of international law and international relations. Human rights represent basic values common to all cultures. These basic rights of humans are required to be promoted and protected in every civilized society. There are some basic rights like the right to life; property and security are the rights that every individual possesses by the virtue of birth.

Therefore, these rights must be promoted and protected worldwide and the realization of human rights must be the goal of every state. There are some international conventions and treaties that promote and protect human rights worldwide.

In this article, we will focus on the condition of human rights in the world's two largest emerging economies China and India. The international community commits towards the protection of human rights through different treaties and conventions. All nations of the international community are obliged to protect human rights and to obey the international laws on human rights.

INTRODUCTION TO HUMAN RIGHT :-

Human rights are rights inherent to all human beings, regardless of gender, nationality, place of residency, sex, ethnicity, religion, color or and other categorization. Thus, human rights are non-discriminatory, meaning that all human beings are entitled to them and cannot be excluded from them. Of course, while all human beings are entitled to human rights, not all human beings experience them equally throughout the world. Many governments and individuals ignore human rights and grossly exploit other human beings.

There are a variety of human rights, including :

- Civil rights (such as the rights to life, liberty and security),
- Political rights (like rights to the protection of the law and equality before the law),
- Economic rights (including rights to work, to own property and to receive equal pay),
- Social rights (like rights to education and consenting marriages),
- Cultural rights (including the right to freely participate in their cultural community), and
- Collective rights (like the right to self-determination).

However, despite the municipal and international laws that protect human rights, human rights are abused worldwide. The condition of human rights in many developing countries is worse. Basic rights of individuals like the right to life, right to education and freedom of speech and expression are being violated on a large scale.



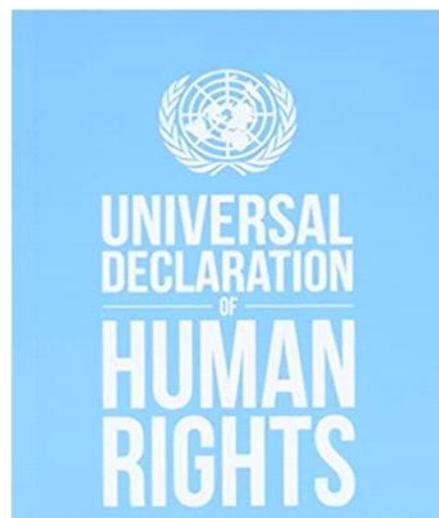
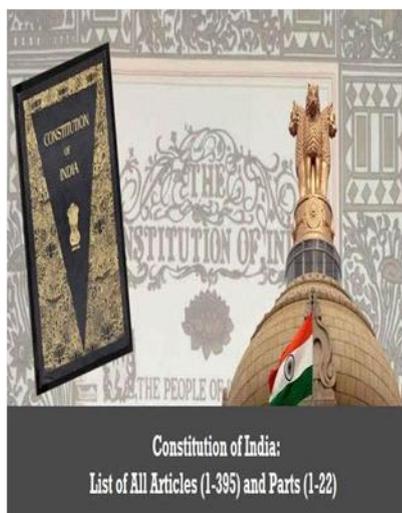
DEFINATION OF HUMAN RIGHT

- Section 2(d) of the Protection of Human Rights Act, 1993 - 'Human Right' means the right relating to life, liberty, equality and dignity of the individual guaranteed by the constitution or embodied in the International Covenants and enforceable by courts in India.
- Universal Declaration of Human Rights, 1948 (UDHR) declares - 'All human beings are born free and equal in right and dignity.'

HUMAN RIGHTS AND CONSTITUTION OF INDIA :

Human rights are the basic rights available to any human being by virtue of his birth in human race. It is inherent in all human beings irrespective of their nationality, religion, language, sex, colour or any other consideration. The Protection of Human Rights Act, 1993 defines Human Rights as: "human rights" means the rights relating to life, liberty, equality and dignity of the individual guaranteed by the Constitution or embodied in the International Covenants and enforceable by courts in India".

Protection of human rights is essential for the development of the people of the country, which ultimately leads to development of the nation as a whole. The Constitution of India guarantees basic human rights to each and every citizen of the country. The framers of the Constitution have put their best efforts in putting down the necessary provisions. However, with continuous developments taking place, the horizon of human rights has also expanded. The parliamentarians are now playing a great role in recognizing the rights of people and passing statutes, amending provisions etc. as and when required.



INTERNATIONAL HUMAN RIGHTS AND FUNDAMENTAL RIGHTS (PART- III OF COI)

India had signed the Universal Declaration on Human Rights January 01, 1942. Part III of the Constitution India 'also referred as magna carta' contains the Fundamental rights. These are the rights which are directly enforceable against the state in case of any violation. Article 13(2) prohibits state from making any law in violation of the Fundamental Rights. It always provides that if a part of law made is against the Fundamental Rights, that part would be declared as void. If the void part cannot be separated from the main act, the whole act may be declared as void. In the case of Chairman, Railway Board & Ors. v. Chandrima Das & Ors., it was observed that UDHR has been recognized as Model code of conduct adopted by United Nations General Assembly. The principles may have to be read if needed in domestic jurisprudence.

Provisions of Universal Declaration of Human Rights along with corresponding provisions in Constitution of India are as follows :

S.No.	Brief Description of Provision	UDHR	COI
1.	Equality and equal protection before law	Article 7	Article 14
2	Remedies for violation of Fundamental Rights	Article 8	Article 32
3	Right to Life and personal liberty	Article 9	Article 21
4	Protection in respect for conviction of offences	Article 11(2)	Article 20(1)
5	Right to property	Article 17	Earlier a Fundamental Right under Article 31
6	Right to freedom of conscience and to practice, profess and propagate any religion	Article 18	Article 25(1)
7	Freedom of speech	Article 19	Article 19(1)(a)
8	Equality in opportunity of public service	Article 21(2)	Article 16(1)
9	Protection of minorities	Article 22	Article 29(1)
10	Right to education	Article 26(1)	Article 21A

UNIVERSAL DECLARATION OF HUMAN RIGHTS, 1948 :

This declaration was signed on December 10, 1948, among 48 countries. There was the list of basic Human Rights that the International Community agreed on as the legacy that every human is entitled to with his birth. The universal declaration of human rights (UDHR) is a commitment of the member countries towards promoting

and protecting human rights.

The document of the Universal Declaration of Human Rights contains 30 Articles that define human rights. This declaration aims to make life better by protecting human rights and the laws protecting human rights must be protected and respected universally to establish peace and tranquility around the world.

OBJECTIVES OF STUDY :-

- To understanding the concept of Human right.
- To analyze the Human Rights and fundamental freedoms in different country.
- To develop attitudes and behaviors that will lead to respect for the rights of others.
- To promote respect, understanding and appreciation of diversity.
- To empower people towards more active citizenship.
- To promote democracy, development, Social Justice, Communal harmony, Solidarity and Friendship among people and nations.
- To further the activities of international understanding, tolerance and non-Violence.

RESEARCH METHODOLOGY :-

The research paper is an attempt of descriptive research, based on the secondary data which is collected from different sources like articles published in newspapers, journals, internet sources and research paper published in online journals etc.

Tools and technique : Charts and Tables Are Used.

COMPARATIVE STUDY ON HUMAN RIGHTS BETWEEN INDIA AND CHINA :

China is the largest populated country in the world while India is the second-largest populated country. More than 36% of the world's population resides in these two countries. Therefore, it is necessary to protect human rights in these countries to achieve the goal of international laws of human rights. China is a communist country where a single-party system is followed.

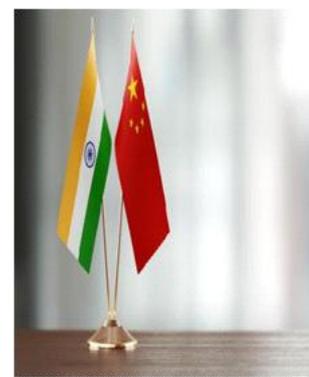
However, India is one of the largest democracies in the world where a multi-party system is followed that is opposite to China. The condition of human rights in both countries is not good.

In most of the developing countries, people are deprived of necessities like health, food and shelter which results in the death of many people. There are certain parameters based on which the condition of human rights is measured.

These parameters include the condition of health, freedom of speech and expression, rights of Minorities, security against crimes and the quality of education.

Main points we will be discussed :-

- Right to Health
- Freedom of Speech and Expression
- Right of Minorities
- Human Trafficking



RIGHT TO HEALTH :-

For the last two years, COVID-19 has been a dangerous problem for the entire world. This virus has killed millions of people around the world. India is one of the countries that is badly affected by this disease. During the second COVID-19 wave millions of people died because of lack of proper treatment and lack of oxygen.

Though India consists of 1.40 billion people and it is not easy for any developing country to provide better health facilities to all its population.

The government was completely failed to protect its citizens from this pandemic and to ensure proper health facilities. During the second wave, the inadequacy of beds in the hospital had been a big problem. Many people were found to die outside the hospitals while waiting for the bed.

It is evidentiary that not only India is hit by this pandemic there are many developing and the developed countries around the world are hit badly by this pandemic.

China that is considered the originator of COVID-19 by the international community was also hit by this virus. The outbreak was first reported by the local government on 27 Dec 2019 and was published on 31 December. The local government of Wuhan and Hubei were widely criticized for the delayed response to viruses and their censorship information during the initial outbreak.

China is the first country that suffered from this pandemic however There is not complete data regarding the devastating impact of COVID- 19 in china because the communist party of china strictly regulate media and prevents information to be circulated outside the country.

Many of the political dissenters have reportedly been confined in specific forensic hospitals known as Ankang, operated by the Ministry of Public Security. International man rights groups and Falun Gong organizations abroad believe that hundreds of members of the group have been wrongfully detained in these “hospitals” and claim that some of them have died as a result of their treatment.

FREEDOM OF SPEECH AND EXPRESSION :-

Freedom of speech and expression is provided under the Indian Constitution. However, this freedom is not absolute. It is subject to reasonable restrictions. Free expression of views and exchange of opinions is the basis of democracy.

According to the world press freedom Index 2021, India has been placed on 142 positions among 180 countries while China has secured 177 ranks in this Index. This report is based on the freedom of public media, pluralism, media environment and self-censorship and transparency in the news.

Media is considered the fourth pillar of democracy. The work of the media in a democracy is to broadcast news impartially. India is a democratic country and the freedom of the press is implicitly recognized by the Indian constitution. However, sometimes the freedom of speech and expression is curtailed by the state.

China is the third last country in this index with the worst freedom of speech and expression. However, the Chinese constitution recognizes freedom of speech and expression. But under the regime of the communist party of china freedom of speech and expression is badly suppressed.

The international community has been criticizing China for years. Censorship and restrictions of freedom of speech and expression by China compel media houses not to leak information outside the country due to which all the information regarding the violation of human rights are missed.

The Communist party of China controls all the media houses and publications in China. The Chinese government has created self- censorship and self-regulation which results in the government not giving much information to its citizens. Chinese citizens are self- censored to express their views freely because of the arbitrary governance of the CPC.

Recently, Jack Ma, founder of e-commerce giant Alibaba expressed his views against arbitrary governance of CPC and raised his concern on the freedom of speech and expression. After that, he is still missing. If the Chinese government does not allow expressing freely to a Billionaire then the question of freedom of expression for a common individual does not arise.

RIGHT OF MINORITIES :-

India declared itself a democratic republic on 26 Jan 1950. In 1950 the majority of Hindus in India were around 90% and the other 10% were Muslims, Sikhs, Christian and others.

In the last 71 years, India has been mostly ruled by the centrist party Indian National Congress (INC) and in the last 7 years, the rightist Party Bharatiya Janata Party (BJP) is in power. In the last 71 years, all the important offices of India like President, Prime Minister, Vice President and Chief Justice of India have been served by the Minority citizens.

This is the beauty of democracy that India has. If India is compared in this respect from its neighbour country Pakistan where no minority has served any important office after the independence even minorities are being beaten and killed in the name of religion.

However, In India when disturbance escalates minorities are persecuted. According to the Amnesty International report, the Indian ruling government has banned the internet in Jammu & Kashmir that prevents citizens from expressing their opinions freely. Historically J&K has been the place of terrorism where thousands of Army men and citizens have been killed by suicide bombers in the name of Jihad.

Terrorism is not only a problem for India But it is the worldwide problem. Therefore, the Indian Government argued that the internet ban was for the countering of terrorism.

In China, Beijing invaded Tibetan territory in 1950 and claimed its sovereignty over it. Before the Beijing invasion, Tibet was an autonomous country; it had its own culture, religion and its system of government. However, China claimed that Tibet has always been a part of Chinese ruling and it liberated them from the feudal-serfdom and pro-imperialist that went against the desire of Tibetan people.

According to Tibetans, China interferes in the religious matters of Tibetans. Before 1976 religious activities were completely banned for Tibetans. But after 1976 they were allowed to worship under the surveillance of Chinese authority. China claims that it has established educational institutions for the development of Tibetans.

Uyghur is Turkic Muslims who are the residents of Xinjiang province. The persecution of Uyghur Muslims is the result of the Chinese “Sinicization policy” is a policy under which non-Chinese societies and cultures are brought under the influence of Chinese culture.

According to Buzz feed, more than 250 detention centres have been identified in china that is used to confine Uyghur Muslims. They are tortured under these detention centres and laboured in the factories under the “Poverty Alleviation” Policy.

HUMAN TRAFFICKING :-

The United Nations defines human trafficking as the recruitment, transportation, transfer, harboring, or receipt of persons by improper means (such as force, abduction, fraud, or coercion) for an improper purpose including forced labor or sexual exploitation. Human trafficking is a worldwide concern.

In India, Sec 372 and 373 of the Indian Criminal Code also specifically criminalize child trafficking for sexual exploitation. Boys and young women are the main victims of human trafficking in India. Women trafficking leads them toward sexual exploitation. According to the National Crime Records Bureau, Ministry of Home Affairs of India, 96% of victims that were rescued from trafficking were identified as Indian nationals.

In China, migrant workers are the major victim of human trafficking. According to the United Nations, the Inter-Agency Project of human Trafficking in china was reported on a large scale and the study found a correlation between the factors like age and gender with different types of human trafficking. For example, young boys are trafficked for adoption, women are trafficked for sexual exploitation and the men are trafficked for forced labour. Refugees are the main victims of trafficking in china. Most of them are recruited in forced labour and become victims of sexual exploitation.

CONCLUSION AND SUGGESTION :-

India and China are developing economies in the world. The condition of Human Rights is below average in both countries. China is a communist country but factually the Communist Party of China has established its dictatorship over china. There is no opposition in China, anyone who opposes the government policies faces the consequences. The single-party system is the main reason behind the establishment of the supremacy of the communist party of china. It is the beauty of a multiparty system where everyone has the equal right to express himself freely.

Therefore, there must be a strong opposition in China that can criticize the arbitrary action of the ruling government. India is a democratic country and the Freedom of Speech and Expression is expressly provided by the constitution of India. A strong opposition is considered as the base of Democracy. Undoubtedly, the quality of freedom and speech of expression in India is better than in China.

In India, all the important offices of India like President, Prime Minister, Vice President and Chief Justice of India have been served by the Minority citizens. Whereas In China Uyghur Muslims laboured in the factories under the “Poverty Alleviation” Policy.

In India judiciary is an Independent constitutional organ whose work is to keep eye on the arbitrary actions of the government. Independence of the judiciary is necessary to protect human rights from the arbitrary acts of the government.

References :-

1. Dr. Anant Kalse (2016), A brief lecture on “Human Rights in the Constitution of India”, available at: <http://mls.org.in/books/H-2537%20Human%20Rights%20in.pdf>.
2. Amartish Kaur (2017), “Protection of Human Rights in India –A Review”, Jamia Law Journal, Vol.2.
3. <https://www.amnesty.org/en/documents/pol10/3202/2021/en/>.
4. <https://indianexpress.com/article/india/covid-deaths-due-to-oxygen-shortage-no-less-than-genocide-allahabad-high-court-7302269/>
5. <https://science.thewire.in/health/china-had-first-coronavirus-case-in-november-2019-itself/>
6. <https://indiankanoon.org/doc/1142233/>
7. <https://rsf.org/en/ranking/2021>



मानवाधिकार आयोग और महिला सुरक्षा

डॉ. सरलकान्ता व्यास

व्याख्याता, राजस्थान महिला शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, बीकानेर, राजस्थान।

मानवाधिकार

मानवाधिकार (Human Rights) वे नैतिक सिद्धान्त हैं जो मानव व्यवहार से सम्बन्धित कुछ निश्चित मानक स्थापित करता है। ये मानवाधिकार स्थानीय तथा अन्तरराष्ट्रीय कानूनों द्वारा नियमित रूप से रक्षित होते हैं। ये अधिकार प्रायः ऐसे 'आधारभूत अधिकार' हैं जिन्हें प्रायः 'न छीने जाने योग्य' माना जाता है और यह भी माना जाता है कि ये अधिकार किसी व्यक्ति के जन्मजात अधिकार हैं। व्यक्ति के आयु, प्रजातीय मूल, निवास-स्थान, भाषा, धर्म, आदि का इन अधिकारों पर कोई प्रभाव नहीं होता। ये अधिकार सदा और सर्वत्र देय हैं तथा सबके लिए समान हैं।

इतिहास

अनेक प्राचीन दस्तावेजों एवं बाद के धार्मिक और दार्शनिक पुस्तकों में ऐसी अनेक अवधारणाएं हैं जिन्हें मानवाधिकार के रूप में चिन्हित किया जा सकता है। ऐसे प्रलेखों में उल्लेखनीय हैं अशोक के आदेश पत्र, श्री राम द्वारा निर्मित अयोध्या का संविधान (राम राज्य) आदि।

आधुनिक मानवाधिकार कानून तथा मानवाधिकार की अधिकांश अपेक्षाकृत व्यवस्थाएं समसामयिक इतिहास से संबंध हैं। द ट्वेल्फ आर्टिकल्स ऑफ द ब्लैक फॉरेस्ट (1525) को यूरोप में मानवाधिकारों का सर्वप्रथम दस्तावेज माना जाता है। यह जर्मनी के किसान - विद्रोह (Peasants' War) स्वाबियन संघ के समक्ष उठाई गई किसानों की मांग का ही एक हिस्सा है। ब्रिटिश बिल ऑफ राइट्स ने युनाइटेड किंगडम में सिलसिलेवार तरीके से सरकारी दमनकारी कार्रवाइयों को अवैध करार दिया। 1776 में संयुक्त राज्य में और 1789 में फ्रांस में 18 वीं शताब्दी के दौरान दो प्रमुख क्रांतियां घटीं। जिसके फलस्वरूप क्रमशः संयुक्त राज्य की स्वतंत्रता की घोषणा एवं फ्रांसीसी मनुष्य की मानव तथा नागरिकों के अधिकारों की घोषणा का अभिग्रहण हुआ। इन दोनों क्रांतियों ने ही कुछ निश्चित कानूनी अधिकार की स्थापना की।

"मानवाधिकारों" को लेकर अक्सर विवाद बना रहता है। ये समझ पाना मुश्किल हो जाता है कि क्या वाकई में मानवाधिकारों की सार्थकता है। यह कितना दुर्भाग्यपूर्ण है कि तमाम प्रादेशिक, राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सरकारी और गैर सरकारी मानवाधिकार संगठनों के बावजूद मानवाधिकारों का परिदृश्य तमाम तरह की विसंगतियों और विद्रूपताओं से भरा पड़ा है। किसी भी इंसान की जिंदगी, आजादी, बराबरी

और सम्मान का अधिकार है मानवाधिकार है। भारतीय संविधान इस अधिकार की न सिर्फ गारंटी देता है, बल्कि इसे तोड़ने वाले को अदालत सजा देती है।

राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग

भारत का राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग एक स्वायत्त विधिक संस्था है। इसकी स्थापना 12 अक्टूबर 1993 को हुई थी। इसकी स्थापना मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम, 1993 के अन्तर्गत की गयी। यह आयोग देश में मानवाधिकारों का प्रहरी है। यह संविधान द्वारा अभिनिश्चित तथा अन्तरराष्ट्रीय सन्धियों में निर्मित व्यक्तिगत अधिकारों का संरक्षक है।

मानव अधिकार आयोग के वर्तमान अध्यक्ष अरुण कुमार मिश्रा हैं।

राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग की संरचना

- NHRC एक बहु-सदस्यीय संस्था है। इसके अध्यक्ष और सदस्यों की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा प्रधानमंत्री की अध्यक्षता वाली उच्चस्तरीय समिति, जिसमें प्रधानमंत्री सहित लोकसभा अध्यक्ष, राज्यसभा का उप-सभापति, संसद के दोनों सदनों के मुख्य विपक्षी नेता तथा केंद्रीय गृहमंत्री शामिल होते हैं, की सिफारिशों के आधार पर की जाती है।

(मानव अधिकार आयोग के वर्तमान अध्यक्ष अरुण कुमार मिश्रा हैं)

- राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग के अध्यक्ष और सदस्यों का कार्यकाल 3 वर्ष या 70 वर्ष की आयु (जो भी पहले हो) तक निर्धारित है। इसके अतिरिक्त ये पुनर्नियुक्ति के भी पात्र होंगे।
- राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग के अध्यक्ष पद पर उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश के साथ-साथ उच्चतम न्यायालय के अन्य न्यायाधीश भी नियुक्त किये जा सकते हैं।
- एक सदस्य उच्चतम न्यायालय में कार्यरत अथवा सेवानिवृत्त न्यायाधीश, एक सदस्य उच्च न्यायालय का कार्यरत या सेवानिवृत्त मुख्य न्यायाधीश होना चाहिये।

लोकतंत्र का चौथा स्तंभ

- भारतीय लोकतंत्र तीन स्तंभों के मध्य शक्ति के पृथक्करण सिद्धांत पर आधारित है।
- ये तीन स्तंभ विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका हैं। इनमें प्रत्येक स्तंभ एक-दूसरे के साथ 'चेक एंड बैलेंस' के सिद्धांत के रूप में कार्य करते हैं।
- हालाँकि, वर्तमान में शासन और प्रशासन की जटिलताओं के कारण स्वतंत्र निकायों की आवश्यकता है, जो निरीक्षण जैसे महत्वपूर्ण कार्यों के लिये विशेषज्ञता प्राप्त हैं।
- इन स्वतंत्र निकायों को लोकतंत्र का चौथा स्तंभ कहा जाता है।
- प्रायः मीडिया को लोकतंत्र का चौथा स्तंभ माना जाता है, परंतु राष्ट्र-राज्य की आधुनिक अवधारणा में संवैधानिक और वैधानिक (निर्वाचन आयोग, नियंत्रक एवं महालेखापरीक्षक, केंद्रीय व राज्य सूचना

आयोग, केंद्रीय व राज्य मानव अधिकार आयोग) निकायों को भी लोकतंत्र का चौथा स्तंभ माना जाने लगा है।

- तीन अन्य व्यक्तियों को मानवाधिकारों से संबंधित जानकारी अथवा कार्यानुभव होना चाहिये। इसमें कम-से-कम एक महिला सदस्य का होना आवश्यक है।
- इन पूर्णकालिक सदस्यों के अतिरिक्त आयोग में राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग (NCSC), राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति आयोग (NCST), राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग, राष्ट्रीय महिला आयोग (NCW), राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग आयोग (NCBC), राष्ट्रीय बाल अधिकार संरक्षण आयोग के अध्यक्ष तथा दिव्यांग व्यक्तियों के कार्यालय के मुख्य आयुक्त को भी NHRC का सदस्य नियुक्त किया गया है।

राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के कार्य और शक्तियां

- मानवाधिकारों के उल्लंघन से संबंधित कोई मामला यदि NHRC के संज्ञान में आता है या शिकायत के माध्यम से लाया जाता है तो NHRC को उसकी जाँच करने का अधिकार है।
- इसके पास मानवाधिकारों के उल्लंघन से संबंधित सभी न्यायिक मामलों में हस्तक्षेप करने का अधिकार है।
- आयोग किसी भी जेल का दौरा कर सकता है और जेल के बंदियों की स्थिति का निरीक्षण एवं उसमें सुधार के लिये सुझाव दे सकता है।
- NHRC संविधान या किसी अन्य कानून द्वारा मानवाधिकारों के संरक्षण हेतु प्रदान किये गए रक्षोपायों की समीक्षा कर सकता है और उनमें बदलावों की सिफारिश भी कर सकता है।
- NHRC मानव अधिकार के क्षेत्र में अनुसंधान का कार्य भी करता है।
- आयोग प्रकाशनों, मीडिया, सेमिनारों और अन्य माध्यमों से समाज के विभिन्न वर्गों के बीच मानवाधिकारों से जुड़ी जानकारी का प्रचार करता है और लोगों को इन अधिकारों की सुरक्षा के लिये प्राप्त उपायों के प्रति भी जागरूक करता है।
- आयोग के पास दीवानी अदालत की शक्तियाँ हैं और यह अंतरिम राहत भी प्रदान कर सकता है।
- इसके पास मुआवजे या हर्जाने के भुगतान की सिफारिश करने का भी अधिकार है।
- NHRC की विश्वसनीयता का अंदाज़ा इसी बात से लगाया जा सकता है कि इसके पास हर साल बहुत बड़ी संख्या में शिकायतें दर्ज होती हैं।
- यह राज्य तथा केंद्र सरकारों को मानवाधिकारों के उल्लंघन को रोकने के लिये महत्वपूर्ण कदम उठाने की सिफारिश भी कर सकता है।
- आयोग अपनी रिपोर्ट भारत के राष्ट्रपति के समक्ष प्रस्तुत करता है जिसे संसद के दोनों सदनों में रखा जाता है।

राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग की सीमाएं

- NHRC के पास जाँच करने के लिये कोई भी विशेष तंत्र नहीं है। अधिकतर मामलों में यह संबंधित सरकार को मामले की जाँच करने का आदेश देता है।
- NHRC के पास किसी भी मामले के संबंध में मात्र सिफारिश करने का ही अधिकार है, वह किसी को निर्णय लागू करने के लिये बाध्य नहीं कर सकता।
- NHRC उन शिकायतों की जाँच नहीं कर सकता जो घटना होने के एक साल बाद दर्ज कराई जाती हैं और इसलिये कई शिकायतें बिना जाँच के ही रह जाती हैं।
- अक्सर सरकार या तो NHRC की सिफारिशों को पूरी तरह से खारिज कर देती है या उन्हें आंशिक रूप से ही लागू किया जाता है।
- राज्य मानव अधिकार आयोग केंद्र सरकार से किसी भी प्रकार की सूचना नहीं मांग सकते, जिसका सीधा सा अर्थ यह है कि उन्हें केंद्र के तहत आने वाले सशस्त्र बलों की जाँच करने से रोका जाता है।
- आयोग के अध्यक्ष व सदस्यों की नियुक्ति वाली चयन समिति में राजनीतिक पृष्ठभूमि के लोगों का प्रतिनिधित्व होता है, जिससे हितों का टकराव होने की आशंका होती है। इसके अतिरिक्त नियुक्ति के मापदंडों का स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता है।

मानवाधिकारों का उल्लंघन

यद्यपि मानव अधिकार विभिन्न कानूनों द्वारा संरक्षित हैं पर अभी भी लोगों, समूहों और कभी-कभी सरकार द्वारा इसका उल्लंघन किया जाता है। उदाहरण के लिए पूछताछ के दौरान पुलिस द्वारा यातना की आज़ादी का अक्सर उल्लंघन किया जाता है। इसी प्रकार गुलामी से स्वतंत्रता को मूल मानव अधिकार कहा जाता है लेकिन गुलामी और गुलाम प्रथा अभी भी अवैध रूप से चल रही है। मानव अधिकारों के दुरुपयोग की निगरानी के लिए कई संस्थान बनाए गए हैं। सरकारें और कुछ गैर-सरकारी संगठन भी इनकी जांच करते हैं।

प्रमुख सुझाव

- NHRC को सही मायनों में मानवाधिकारों के उल्लंघन का एक कुशल प्रहरी बनाने के लिये उसमें कई सुधार किये जाने की आवश्यकता है। सरकार द्वारा आयोग के निर्णयों को पूरी तरह से लागू करके उसकी प्रभावशीलता में वृद्धि की जा सकती है।
- NHRC की संरचना में भी परिवर्तन करने की आवश्यकता है तथा इसमें आम नागरिकों और सामाजिक संगठनों के प्रतिनिधियों को भी शामिल किया जाना चाहिये।
- आयोग के अध्यक्ष व सदस्यों की नियुक्ति वाली चयन समिति में राजनीतिक पृष्ठभूमि के लोगों के अतिरिक्त सिविल सोसायटी के सदस्य भी शामिल किये जाने चाहिये, ताकि आयोग पर किसी भी प्रकार का राजनीतिक दबाव न डाला जा सके।

- NHRC को जाँच के लिये उचित अनुभव वाले कर्मचारियों का एक नया काडर तैयार कर प्रदान किया जाना चाहिये ताकि सभी मामलों की स्वतंत्र जाँच की जा सके।
- मानव अधिकार आयोग किसी भी मानवाधिकारों के उल्लंघन की जांच नहीं कर सकता है, अगर शिकायत घटना के एक वर्ष बाद की गई हो। इस तरह का प्रावधानों को निरसित कर देना चाहिये।
- सरकार द्वारा मानव अधिकार आयोग को सशस्त्र बलों के खिलाफ मानव अधिकार के उल्लंघन की स्थिति में जाँच करने की शक्ति प्रदान करनी चाहिये।
- सरकार द्वारा आयोग के निर्णयों को पूरी तरह से लागू करके उसकी प्रभावकारिता में वृद्धि की जा सकती है।
- भारत में मानव अधिकार की स्थिति को सुधारने और मज़बूत करने के लिये राज्य अभिकर्ताओं और गैर-राज्य अभिकर्ताओं (State & Non-state Actors) को एक साथ मिलकर काम करना होगा।

राजस्थान राज्य मानवाधिकार आयोग

राजस्थान राज्य मानव अधिकार आयोग देश के अग्रणी राज्य आयोगों में से एक है। इस आयोग ने अल्पावधि में ही मानव अधिकारों के संरक्षण एवं उन्नयन को बढ़ावा देने के लिये अपने उद्देश्य में कई मील के पत्थर हासिल किये हैं।

राजस्थान की राज्य सरकार ने दिनांक 18 जनवरी 1999 को एक अधिसूचना राजस्थान राज्य मानव अधिकार आयोग के गठन के संबंध में जारी की, जिसमें मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम 1993 के प्रावधानुसार एक पूर्णकालिक अध्यक्ष एवं चार सदस्य रखे गये। अध्यक्ष एवं चार सदस्यों की नियुक्ति कर आयोग का गठन किया गया और मार्च, 2000 से यह आयोग क्रियाशील हो गया था। **मानव अधिकार संरक्षण (संशोधित) अधिनियम, 2006** के अनुसार राज्य मानव अधिकार आयोग में एक अध्यक्ष और दो सदस्य का प्रावधान किया गया है।

वर्तमान में आयोग के माननीय अध्यक्ष और माननीय सदस्यों का विवरण इस प्रकार है :-

1. श्री गोपाल कृष्ण व्यास, माननीय अध्यक्ष
2. श्री महेश गोयल, माननीय सदस्य

राजस्थान राज्य मानव अधिकार आयोग का मुख्य उद्देश्य राज्य में मानव अधिकारों की रक्षा हेतु एक निगरानी संस्था के रूप में कार्य करना है। 1993 के अधिनियम के अन्तर्गत धारा 2(घ) में मानव अधिकारों को परिभाषित किया गया है और इन न्यायोचित अधिकारों को भारतीय कानून के तहत अदालती आदेश द्वारा लागू कराया जा सकता है। संयुक्त राष्ट्र के चार्टर 10 दिसम्बर 1948 में मानव अधिकारों को परिभाषित कर सम्मिलित किया गया है और जिन्हे सख्ती से लागू किया जाना है।

राज्य मानव अधिकार आयोग, मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम 1993 के अन्तर्गत एक स्वशासी उच्चाधिकार प्राप्त मानव अधिकारों की निगरानी संस्था है। इसके स्वायत्तता हेतु आयोग के अध्यक्ष एवं

नियुक्ति की प्रक्रिया इस प्रकार रखी गई है, जिससे उनके कार्य करने की स्वतंत्रता सुरक्षित रहे, साथ ही उनका कार्यकाल पूर्व में ही निश्चित कर दिया गया है और अधिनियम की धारा 23 के अन्तर्गत वैधानिक गारन्टी प्रदान की गई है और अधिनियम की धारा 33 के अन्तर्गत वित्तीय स्वायत्तता भी प्रदान की गई है। आयोग का उच्च स्तर आयोग के अध्यक्ष, सदस्य एवं अधिकारीगण के स्तर से परिलक्षित होता है। अन्य आयोगों से भिन्न, आयोग के अध्यक्ष पद पर उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश को ही नियुक्त किया जा सकता है और इसी प्रकार, आयोग सचिव राज्य सरकार के सचिव स्तर के अधिकारी से कम स्तर का अधिकारी नहीं हो सकता। आयोग की अपनी एक अन्वेषण एजेन्सी है, जिसका नेतृत्व ऐसे पुलिस अधिकारी जो महानिरीक्षक पुलिस के पद से कम स्तर का नहीं हो, द्वारा किया जाता है।

मानवाधिकार आयोग के अंतर्गत महिला सुरक्षा

महिलाओं के अधिकार, वह अधिकार है जो प्रत्येक महिला या बालिका का विश्वव्यापी समाजों में पहचाना हुआ जन्मसिद्ध अधिकार या हक है। 19 वीं सदी में महिला हक संग्राम और 20 वीं सदी में फेमिनिस्ट आंदोलन का यह आधार रहा है। कई देशों में यह हक कानूनी तौर पर, अंदरूनी समाज द्वारा या लोगों के व्यवहार में लागू होता है तो कई देशों में यह प्रचलित नहीं है। कई देशों में व्यापक तौर पर मानवाधिकार का दावा निहित इतिहासिक और परम्परागत झुकाव के नाम पर महिलाओं और बालिकाओं का हक पुरुषों और बालकों के पक्ष में दे दिया जाता है। महिलाओं के अधिकार के विषय में कुछ हक अखंडता और स्वायत्तता शारीरिक करने की आजादी, यौन हिंसा से मुक्ति; मत देने की आजादी; सार्वजनिक पद धारण करने की आजादी; कानूनी कारोबार में प्रवेश करने की आजादी; पारिवारिक कानून में बराबर हक; काम करने की आजादी और समान वेतन की प्राप्ति; प्रजनन अधिकारों की स्वतंत्रता; शिक्षा प्राप्ति का अधिकार।

इतिहास

प्राचीन काल में महिलाओं की स्थिति व्यवहारिक जीवन में पुरुषों की तुलना में श्रृंष्ट रही ही हैं शास्त्रों में उनका दर्जा भी उच्च रहा। सन् 700 के बाद भारत में महिलाओं की स्थिति मुस्लिम आततायियों के कारण दिन प्रतिदिन दयनीय होती गई। नाइजेरिया अका संस्कृति में महिला अपने बल पर शिकार करती थी। ईजिप्त में क्लियोपेटरा जैसी प्रसिद्ध महिला शासक एक और उदाहरण के रूप में प्रस्तुत की जाती हैं।

शाही चीन में, "तीन ओबिदियेन्शेस्" के अनुसार बेटियों को अपने बाप-दादा की आज्ञा की पालना, पत्नियों को अपने पति और विधवाओं को अपने बेटों की आज्ञा का पालन करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता था। फूट बाईदिंग रिवाज के कारण चीन में महिलाओं की स्थिति दयनीय रही। 1912 में चीनी सरकार ने इस रिवाज की समाप्ति की। 1950 में नई विवाह के कानून की मदद से विवाह की कानूनी उम्र पुरुषों के लिए 20 और महिलाओं के लिए 18 घोषित की गई।

राजनीतिक और समान अधिकार में कमी होने के बावजूद यूनानी महिलाओं को काफी आजादी प्राप्त थी। आरकाइक एज के पश्चात महिलाओं की स्थिति बद से बदतर होती चली गई। लिंग अलगवाव जैसे कानून

को उत्पन्न किया गया। अरिस्तोतल जैसे दार्शनिक ने दास के साथ महिलाओं की तुलना की निंदा की परंतु वह पत्नियों को बाजार से खरीदकर लाने की वस्तु समझता था। यौन समतावाद को मजबूत दार्शनिक आधार पर प्राचीन ग्रीस में जगह दी गई थी।

महिलाओं के प्रति हम सबकी सोच और नजरिये में पिछले कुछ दशकों में गजब का सकारात्मक बदलाव आया है। पर इन बदलावों का मूलतब यह नहीं है कि पुरुष और महिलाएं बराबरी पर पहुंच गए हैं। समानता की यह लड़ाई अभी काफी लंबी चलनी है। दुनिया के कई देशों में आज भी महिलाएं अपने हक और अधिकार की लड़ाई लड़ रही हैं। इनमें अपना देश भारत भी शामिल है। इससे बड़ा दुख तो यह है कि आज भी अधिकांश महिलाएं अपने अधिकारों और हक के बारे में सही तरीके से जानती तक नहीं हैं, जबकि होना तो यह चाहिए कि महिलाओं को अपने अधिकारों के बारे में पूरी जानकारी रहनी चाहिए। गणतंत्र दिवस के मौके पर आइए जानें कि भारतीय संविधान भारत की महिलाओं को क्या-क्या अधिकार देता है:

- **गोपनीयता का अधिकार**

आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 164 के तहत बलात्कार की शिकार महिला जिला मजिस्ट्रेट के सामने अपना बयान दर्ज करवा सकती है और जब मामले की सुनवाई चल रही हो तो वहां किसी और व्यक्ति को उपस्थित होने की आवश्यकता नहीं है। वैकल्पिक रूप से वह एक ऐसे सुविधाजनक स्थान पर केवल एक पुलिस अधिकारी और महिला कांस्टेबल के साथ बयान रिकॉर्ड कर सकती है, जो भीड़ भरा नहीं हो और जहां किसी चौथे व्यक्ति के बयान को सुनने की आशंका न हो। पुलिस अधिकारियों के लिए एक महिला की निजता को बनाए रखना जरूरी है। यह भी जरूरी है कि बलात्कार पीड़िता का नाम और पहचान सार्वजनिक ना होने पाए।

- **निःशुल्क कानूनी सहायता का अधिकार**

अमूमन भारत में जब भी महिला अकेले पुलिस स्टेशन में अपना बयान दर्ज कराने जाती है तो उसके बयान को तोड़-मरोड़ कर लिखे जाने का खतरा रहता है। कई ऐसे मामले भी देखने को मिले हैं, जिनमें उसे अपमान झेलना पड़ा और शिकायत को दर्ज करने से मना कर दिया गया। एक महिला होने के नाते आपको यह पता होना चाहिए कि आपको भी कानूनी मदद लेने का अधिकार है और आप इसकी मांग कर सकती हैं। यह राज्य सरकार की जिम्मेदारी है कि वह आपको मुफ्त में कानूनी सहायता मुहैया करवाए।

बलात्कार या छेड़छाड़ की घटना के काफी समय बीत जाने के बावजूद पुलिस एफआईआर दर्ज करने से इंकार नहीं कर सकती है। बलात्कार किसी भी महिला के लिए एक भयावह घटना है, इसलिए उसका सदमे में जाना और तुरंत इसकी रिपोर्ट ना लिखवाना एक स्वाभाविक प्रतिक्रिया है। वह अपनी सुरक्षा और प्रतिष्ठा के लिए डर सकती है। इन बातों को ध्यान में रखते हुए सर्वोच्च न्यायालय ने फैसला दिया है कि बलात्कार या छेड़छाड़ की घटना होने और शिकायत दर्ज करने के बीच काफी वक्त बीत जाने के बाद भी एक महिला अपने खिलाफ यौन अपराध का मामला दर्ज करा सकती है।

- **सुरक्षित कार्यस्थल का अधिकार**

अधिक से अधिक महिलाओं के सार्वजनिक क्षेत्र में सक्रिय रूप से भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करने हेतु यह सबसे अधिक प्रासंगिक कानूनों में से एक है। प्रत्येक ऑफिस में एक यौन उत्पीड़न शिकायत समिति बनाना नियोकता का कर्तव्य है। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा जारी एक दिशा-निर्देश के अनुसार यह भी जरूरी है कि समिति का नेतृत्व एक महिला करे और सदस्यों के तौर पर उसमें पचास फीसदी महिलाएं ही शामिल हों। साथ ही, समिति के सदस्यों में से एक महिला कल्याण समूह से भी हो। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि आप एक स्थायी कर्मचारी हैं या नहीं।

यहां तक कि एक इंटरन, पार्ट-टाइम कर्मचारी, ऑफिस में आने वाली कोई महिला या ऑफिस में साक्षात्कार के लिए गई महिला का भी उत्पीड़न किया गया है तो वह भी इस समिति के समक्ष शिकायत दर्ज करवा सकती है। ऑफिस में उत्पीड़न की शिकार महिला घटना के तीन महीने के भीतर इस समिति को लिखित शिकायत दे सकती है। यदि आपकी कंपनी में दस या अधिक कर्मचारी हैं और उनमें से केवल एक महिला है तो भी आपकी कंपनी के लिए इस समिति का गठन करना आवश्यक है। हालांकि, ऐसी किसी दुर्भाग्यपूर्ण परिस्थिति में, जहां यह समिति मौजूद नहीं है या आपको लगता है कि समिति आपका बचाव नहीं करेगी तो आप सीधे जिला स्तर पर मौजूद स्थानीय शिकायत समिति से संपर्क कर सकती हैं। जरूरी नहीं कि यह शिकायत आप ही करें। आपकी ओर से कोई दूसरा व्यक्ति भी यह शिकायत कर सकता है।

- **इंटरनेट पर सुरक्षा का अधिकार**

आपकी सहमति के बिना आपकी तस्वीर या वीडियो, इंटरनेट पर अपलोड करना अपराध है। किसी भी माध्यम से इंटरनेट या व्हाट्सएप पर साझा की गई आपत्तिजनक या खराब तस्वीरें या वीडियो किसी भी महिला के लिए बुरे सपने से कम नहीं हैं। आपको उस वेबसाइट से सीधे संपर्क करने की आवश्यकता है, जिसने आपकी तस्वीर या वीडियो को प्रकाशित किया है। ये वेबसाइट कानून के अधीन हैं और इनका अनुपालन करने के लिए बाध्य भी। आप न्यायालय से एक इंजेक्शन आदेश प्राप्त करने का विकल्प भी चुन सकती हैं, ताकि आगे आपकी तस्वीरों और वीडियो को प्रकाशित न किया जाए। सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम (आईटी एक्ट) की धारा 67 और 66-ई बिना किसी भी व्यक्ति की अनुमति के उसके निजी क्षणों की तस्वीर को खींचने, प्रकाशित या प्रसारित करने को निषेध करती है। **आपराधिक कानून (संशोधन) अधिनियम 2013** की धारा 354-सी के तहत किसी महिला की निजी तस्वीर को बिना अनुमति के खींचना या साझा करना अपराध माना जाता है।

- **समान वेतन का अधिकार**

समान पारिश्रमिक अधिनियम, 1976 समान कार्य के लिए पुरुष और महिला को समान भुगतान का प्रावधान करता है। यह भर्ती वसेवा शर्तों में महिलाओं के खिलाफ लिंग के आधार पर भेदभाव को रोकता है।

- **कन्या भ्रूण हत्या के खिलाफ अधिकार**

मेडिकल टर्मिनेशन ऑफ प्रेग्नेंसी एक्ट, 1971 मानवीयता और चिकित्सा के आधार पर पंजीकृत चिकित्सकों को गर्भपात का अधिकार प्रदान करता है। लिंग चयन प्रतिबंध अधिनियम, 1994 गर्भधारण से पहले या उसके बाद लिंग चयन पर प्रतिबंध लगाता है। यही कानून कन्या भ्रूण हत्या को रोकने के लिए प्रसव से पहले लिंग निर्धारण से जुड़े टेस्ट पर भी प्रतिबंध लगाता है। भ्रूण हत्या को रोकने में यह कानून उपयोगी है।

हर व्यक्ति को मूल मानवाधिकारों का आनंद लेने का हक है। कभी-कभी इन अधिकारों में से कुछ का सरकार द्वारा दुरुपयोग किया जाता है। सरकार कुछ गैर-सरकारी संगठनों की सहायता से मानवाधिकारों के दुरुपयोगों पर नजर रखने के लिए उपाय कर रही है। संविधान ने स्त्री और पुरुष को समान अधिकार देने के लिए अनेक कानून बनाए हैं, जिससे महिलाओं को भी समाज में पुरुषों समान स्थान एवं समान अधिकार प्राप्त हुए हैं। फिर भी आज भारत में मानव अधिकार की स्थिति को सुधारने और मजबूत करने के लिये और संविधान को मूलभूत रूप से लागू रखने के लिए राज्य अभिकर्ताओं और गैर-राज्य अभिकर्ताओं (State & Non-state Actors) को एक साथ मिलकर काम करना होगा और मानवाधिकार के नियमों और कानून में समयानुसार परिवर्तन करना आवश्यक है।

संदर्भ सूची

मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम 1993 (Book) Page No. 16-21

राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग वार्षिक रिपोर्ट

www.rshrc.rajasthan.gov.in (Rajasthan State Human Right Commission-official website) -
About Section

www.hindikiduniya.com सार्वभौमिक मानवाधिकार और इनके नियम :- 17 अप्रैल 2017

www.livehindustan.com महिला सुरक्षा : जानिए अपना अधिकार, मांगिए अपना हक :- 27 जनवरी 2019

www.drishtias.com राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग: भूमिका व प्रभावकारिता :- 21 march 2020



किशोरावस्था में एकल एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों की समस्या एवं प्रभावों का अध्ययन

सीमा बिस्सा

शोधार्थी (समाजशास्त्र), टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर।

प्रस्तावना :-

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह समाज में रहकर अपने कर्तव्यों का पालन करता है। समाज के बाहर उसका सम्पूर्ण विकास नहीं हो पाता है। बाल्यवास्था में उसे किसी प्रकार का कोई ज्ञान नहीं होता है, परन्तु वह जैसे-जैसे बड़ा होता है तथा परिवार के सम्पर्क में आता है तो उस पर शिक्षा का प्रभाव पड़ता है जिससे उसमें सामाजिक भावना आ जाती है और वह अपने कर्तव्यों व अधिकारों के प्रति जागरूक हो जाता है। जिस प्रकार कोरे कागज पर कुछ भी लिखा जा सकता है उसी प्रकार बालक भी कोरा कागज होता है और उसकी प्रथम शिक्षिका माता होती है, जो उसे प्रेमपूर्वक शिक्षा देती है इसके अलावा परिवार के अन्य सदस्यों दादा-दादी, चाचा-चाची, भाई, बहिनों से भी हर समय कुछ न कुछ सीखता रहता है। परिवार से ही वह नैतिकता व आदर्श सीखता है। परिवार ही वह प्रथम विद्यालय है जहां बालक में अच्छे बुरे की समझ विकसित होती है अर्थात् परिवार के अभाव में बालकों की परवरिश असम्भव है।

शोध का उद्देश्य :-

प्रस्तुत शोध प्रमुख उद्देश्य एकल व संयुक्त परिवार के किशोरावस्था के बालकों के विद्या अध्ययन काल में पड़ने वाले प्रभावों समस्याओं का अध्ययन कर उपयुक्त सुझाव देना है।

परिवार का अर्थ एवं प्रकार :-

परिवार ऐसे व्यक्तियों का समूह है जो विवाह, रक्त अथवा गोद लेने के सम्बन्धों द्वारा संगठित हैं जो एक सामान्य संस्कृति को बनाते हैं और उनकी रक्षा करते हुए स्नेह की भावना रखते हैं। वंशानुक्रम तथा वातावरण के अलावा एक महत्वपूर्ण घटक और भी हैं जो बालक की शिक्षा को अत्यधिक प्रभावित करता है। परिवार अंग्रेजी के शब्द Family का हिन्दी रूपान्तरण है यह शब्द से familie से बना है जिसका उद्गम लैटिन शब्द familia से हुआ है। साधारण अर्थ में विवाहित जोड़े को परिवार की संज्ञा दी जाती है, किन्तु समाज शास्त्रीय दृष्टि से यह परिवार शब्द का सही अर्थ नहीं है बल्कि परिवार में पति-पत्नी एवं बच्चे होते हैं। परिवार ऐसे व्यक्तियों का समूह कहा जा सकता है जो विवाह रक्त और गोद लेने के सम्बन्धों द्वारा संगठित हैं। एक छोटी सी गृहस्थी का निर्माण करते हैं और पति-पत्नी, माता-पिता, भाई-बहिन, के सामाजिक कार्यों के रूप में एक दूसरे पर प्रभाव डालते हैं तथा समान संस्कृति को बनाते हैं, और उनकी रक्षा करते हैं।

भारत में परिवार के प्रकार :

1. **संयुक्त परिवार :-** जब दो या दो से अधिक पीढ़ियों के सदस्य साथ-साथ एक ही घर में निवास करते हैं। आवास, सम्पत्ति, पीढ़ी या सम्बन्धों से सम्बद्ध होते हैं तो वे समाज शास्त्रीय दृष्टिकोण से संयुक्त परिवार कहलाते हैं। संयुक्त परिवार के सदस्य परस्पर अधिकारों व दायित्वों का निभाते हैं। माता-पिता उनके विवाहित बच्चों पुत्र पौत्रियां, चाचा-चाची और दादा-दादी सभी से मिलकर बनता है वहीं संयुक्त परिवार कहलाता है। घर का सबसे बड़ा व्यक्ति परिवार का मुखिया होता है, वह परिवार के सभी सदस्यों की देखभाल करता है एवं उनकी जरूरतों का ख्याल रखता है। परिवार के सभी सदस्यों के लिए भोजन वस्त्र आवास की व्यवस्था करता है। परिवार के सदस्यों की शिक्षा दीक्षा तथा विवाह आदि करना उसकी जिम्मेदारी होती है। वह सबको समान समझता है परिवार के सदस्य भी मुखिया का सम्मान करते हैं व उसकी आज्ञा का पालन करते हैं। संयुक्त परिवार में व्यापार अथवा नौकरी से प्राप्त आय सम्पूर्ण परिवार की आय मानी जाती है।

2. **एकाकी परिवार :-** एकाकी परिवार की संख्या वर्तमान समय में निरन्तर बढ़ती जा रही है जिसमें पति-पत्नी और इनकी अविवाहित संताने होती है। इस परिवार में केवल दम्पति भी हो सकते हैं। यह परिवार का सबसे छोटा रूप है एकल परिवार सामान्यतः सुखी परिवार होता है, परिवार में माता-पिता अपना समस्त ध्यान बच्चों पर केन्द्रित कर उन्हें सब सुविधाओं को आसानी से प्रदान कर सकते हैं। एकल परिवार में सामान्यतः कम आय होते हुए भी आर्थिक परेशानियों का सामना नहीं करना पड़ता है परिवार कम आय में भी अपनी हर जरूरत को पूर्ण करने में सक्षम होते हैं। परिवार में सभी खुश व प्रसन्न चित्त रहते हैं एकल परिवार में बच्चों में आत्मनिर्भरता एवं निर्णय लेने की क्षमता का विकास होता है लेकिन एकल परिवार के बच्चों प्रायः अकेले रहते हैं, यम माता-पिता के अलावा अन्य पारिवारिक सम्बन्धों की महत्ता को नहीं जान पाते एवं दादा-दादी के स्नेह से भी वंचित रहते हैं धीरे-धीरे उनमें परिवार के सदस्यों के प्रति लगाव कम होता जाता है। माता-पिता दोनों कामकाजी होने पर बच्चों पर समुचित ध्यान नहीं दे पाते हैं। जिसके कारण बच्चों में एकाकीपन की भावना आ जाती है।

किशोरावस्था :-

किशोरावस्था का अंग्रेजी समानान्तर शब्द। *dolescence* लैटिन भाषा के *Adelescere* शब्द से बना है जिसका अर्थ है प्रजनन क्षमता का विकसित होना और परिपक्वता की ओर बढ़ना, इस अवस्था को Teenage और Beautyage व जीवन का सबसे कठिन काल कहा जाता है। किशोरावस्था से तात्पर्य बालक की 12 वर्ष से 18 वर्ष की आयु अवस्था से है। यह अवस्था बाल्यकाल व प्रौढ़ावस्था का संधिकाल होती है इस अवस्था में बालक के साथ उसके परिवार व समाज में समायोजन, उत्तर दायित्व की भावना अनेक प्रकार की समस्याएं उत्पन्न होती हैं और समायोजन व उचित निर्देशन नहीं मिलने पर उसमें तनाव, कुंठा आदि समस्याओं से घिरा रहता है और अपने आपको वातावरण के साथ समायोजित नहीं कर पाता है। यही वह समय है जब किशोर को उचित निर्देश दिया जाए ताकि वह अपने दायित्वों को पूरा करें तथा समाज में समायोजित हो सके। इस समय उसे अपने भविष्य को लेकर चिन्ता रहती है, वह आशा व निराशा के बीच रहता है और उसमें अनेक संवेग उत्पन्न होते हैं जैसे तनाव, कुण्ठा, आदि। अतः इस समय किशोरों के परिवार का यह कर्तव्य बन जाता है कि वे उनकी मनःस्थिति को समझे एवं उसको सकारात्मक दिशा प्रदान करें।

विकास की अवस्थाओं में किशोरावस्था सर्वाधिक महत्वपूर्ण है, यह जीवन का बसन्त काल है। यह वह काल है जिसकी यादें जीवन की सर्वश्रेष्ठ यादें होती हैं, किशोर स्वतन्त्रता की मांग करता है वह अभिभावकों के प्रति असंतोष और विद्रोह से भरा होता है, किशोरावस्था ही बनने और बिगड़ने का केन्द्र बिन्दु है।

किशोरावस्था में सामाजिक परिवर्तन :-

किशोरावस्था में अन्तर्गत बालक की सामाजिक चेतना जाग्रत हो जाती है वह अपने व्यवहार को समाज की प्रवृत्ति के अनुसार मोड़ना चाहता है कभी-कभी वह समाज के वास्तविक रूख को जानने व समझने में असमर्थ रहता है जिसके परिणाम स्वरूप उसके हृदय में संघर्ष होने लगता है। वह देखता है कि प्रौढ़ स्वयं उस भाग का अनुसरण नहीं कर रहे हैं जिस पर चलने के लिए वे उसे कह रहे हैं, इसका परिणाम यह होता है कि वह अपने कर्तव्य पथ से विचलित हो जाता है। इस सम्बन्ध में फ्लेमिंग का मत है कि "सभ्य समाज के किशोर दूसरे सामाजिक दल के सदस्यों की निंदा स्तुति के करने से सर्वथा बचे रहते हैं। नव युवकों द्वारा न तो सब सद परामर्श माने जाते हैं और ना ही सब निर्देशों का पालन ही किया जाता है।" किशोर बालक परिवार में मित्र जैसा व्यवहार पाने को उत्सुक रहता है। वह वात्सल्य प्राप्त करना चाहता है यदि दुर्भाग्यवश किन्हीं परिवार में उसे शान्ति, प्रेम और सहानुभूति प्राप्त नहीं होती तो उसके भावी जीवन में जाने अनजाने इन्हें प्राप्त करने की उत्सुकता दिखाई देती है, इससे व्यक्ति विशेष के जीवन में समायोजन आ जाता है।

किशोरावस्था की प्रमुख समस्याएं :-

1. किशोरावस्था में सामाजिक चेतना, तेजी से विकसित होती है वह दूसरों द्वारा प्रशंसा पाना चाहता है।
2. वह भविष्य के प्रति संवेदनशील होता है उसके बारे में सोचता है।
3. उसमें अपने व्यवसाय के लिए भी चिन्ता हो जाती है।
4. वह समाज सेवा करना पसन्द करता है समाज के लिए अपने आराम का त्याग करता है।
5. उसमें नेतृत्व की भावना का विकास होता है।
6. उसमें अपने परिवार व समाज में समायोजन की चिन्ता रहती है।

निष्कर्ष :-

मनुष्य अपने जीवन के व्यक्तिगत तथा सामाजिक दोनों ही पक्षों में अधिकतम विकास लाने तथा अपने पर्यावरण से सम्यक् सामंजस्य स्थापित करने के प्रति आदिकाल से ही अत्यन्त संवेदनशील एवं सचेष्ट रहा है। वस्तुतः मानव प्रजाति की विलक्षणता इस बात से अधिक जाहिर होती है कि वह अपने तथा अपने वातावरण को भी समझने व उसके साथ समायोजन स्थापित कर सके इसमें सर्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिका समाज निभाता है, समाज परिवारों से मिलकर बनता है तथा सम्पूर्ण क्षेत्र में अपने कर्तव्यों विचारों व अधिकारों को बनाये रखता है परन्तु वर्तमान समय में शिक्षा व औद्योगिकीकरण, व्यावसायिकरण के कारण व आधुनिकता के कारण परिवार टुटते नजर आते हैं। व्यक्ति संयुक्त परिवार के बजाय एकल परिवार में रहना पसन्द कर रहा है। जिसके कारण वह रीति-रिवाजों परम्पराओं की अवहेलना कर रहा है। इन सबका सर्वाधिक प्रभाव परिवार में किशोर पर दिखाई देता है। परिवार के इन स्वरूपों के कारण युवाओं को समायोजन करने में कठिनाई आती है व एकल परिवार में बड़े बुजुर्गों से सहयोग न प्राप्त करने के कारण व माता-पिता की अपने व्यवसाय में व्यस्तता के कारण युवा व किशोर अपना समायोजन नहीं कर पाते हैं। इसी प्रकार आज के तनाव के माहौल में युवाओं को अनेक व्याधियों का

समना करना पड़ता है। उनका सही ढंग से हल करने की आवश्यकता है, अगर युवाओं के सामने आ रही परेशानियों का हल नहीं निकाला जाता है तो वह नैराश्य कुण्ठा जैसी व्याधियों से परेशान हो जाता है। अभिभावकों को किशोर को उचित परामर्श देने व निर्देशन देने का कार्य करना चाहिए ताकि वह अपना सम्पूर्ण विकास कर सके, तथा अपने आपको नये वातावरण समाज व हर परिस्थितियों में समायोजित कर सके और उनमें किसी प्रकार के मानसिक विकार ना आयें। सामाजिक स्तर पर युवाओं को सही मार्गदर्शन मिले जिससे वह अपने सुखद भविष्य की ओर प्रेरित हो सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. यादव, जी. एल. : एरिया ऑफ टीचर एजुकेशन, (1981), राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
2. सिंह, आर.पी. एवं अन्य : नवीन व्यावहारिक मनोविज्ञान, (2005), विज्ञान पुस्तक मंदिर, आगरा।
3. उपाध्याय, विनोद, भार्गव, सुनिता, त्यागी, एम.पी. : अधिगम के मनोसामाजिक आधार एवं शिक्षण, (2001), विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
4. बघेला, हेतसिंह, : शिक्षा मनोविज्ञान, (2004), राजस्थान प्रकाशन, जयपुर।



डॉ. सीमा जैन शिक्षण योग्यता समाजशास्त्र विषय में स्नातकोत्तर होकर 'अविवाहित कामकाजी महिलाओं के समक्ष व्यवसायिक चुनौतियां' विषय पर शोध कार्य कर पीएच.डी. की डिग्री हासिल की। 15-20 राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय सेमिनारों में शोध पत्रों का प्रस्तुतीकरण किया। 10-12 राष्ट्रीय एवम अंतरराष्ट्रीय जर्नल में शोध पत्रों का प्रकाशन हो चुका। मानवाधिकारों के संरक्षण विषय पर राष्ट्रीय सेमिनार की निर्देशक रही। तथा 8-9 में सेमिनारों में अध्यक्षता करते हुए तकनीकी सत्रों का संचालन किया। पिछले 15 वर्षों से शिक्षण कार्य में संलग्न है। 6 शोधार्थी महत्वपूर्ण विषयों पर पीएच.डी. डिग्री हेतु निर्देशन में संलग्न है। अन्य कई विश्वविद्यालयों में शोध कार्य में बाहरी परीक्षक के तौर पर निरंतर सेवाओं में संलग्न है। सामाजिक सरोकारों के तहत विद्यार्थी जीवन से ही सक्रिय भागीदारी निभाते हुए अब मानवाधिकारों के संरक्षण और महिला अधिकारों के संरक्षण हेतु अखिल भारतीय जनवादी महिला समिति (Aidwa) राजस्थान राज्य महासचिव के पद पर अपनी सक्रिय भूमिका निभा रही है।



डॉ. कप्तान चन्द सह-आचार्य (विधि) विधि के क्षेत्र में 2003 से जुड़े हुए हैं। एल.एल.बी. एल.एल.एम. (तीन ब्रांच में) की साथ ही पी.जी.डिप्लोमा इन लेबर लॉ, पी.जी.डिप्लोमा इन फॉरेंसिक साइंस व पी.जी.डिप्लोमा इन साइबर लॉ में किया, यूजीसी नेट की योग्यता भी हासिल की और 'सीमित दायित्व साझेदारी एक वैश्विक रूख (एक विश्लेषणात्मक एवं तुलनात्मक अध्ययन)' विषय से शोध कार्य पूरा कर डॉक्टरेट की उपाधि धारण की।

विधि विषय संबंधी एक पुस्तक प्रकाशित हो चुकी है।

19 वर्षों से विभिन्न क्षेत्रों में जरूरतमंद लोगों को विधिक सहायता सलाहकार के रूप में उपलब्ध कराने के साथ 12 वर्षों से विभिन्न विधि महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों में अध्यापन कार्य एवं प्रशासनिक कार्य अनुभव होने के साथ 7 वर्षों से विधि विषय में शोध कार्य करने व अपने पर्यवेक्षण में शोध कराने का अनुभव है। अपने पर्यवेक्षण में 4 शोधार्थियों को डॉक्टरेट उपाधि दिला चुके। 6 शोधार्थी पर्यवेक्षण में शोधकार्य कर रहे हैं।

विभिन्न पत्रिकाओं में 8 शोध पत्र प्रकाशित हो चुके हैं।

विभिन्न विषयों पर सेमिनार के आयोजन किये जिसमें से एक में आयोजन सचिव के रूप में, एक में संयोजक के रूप में व एक में तकनीकी सहायक के रूप में सेवाएं दी व एक सेमिनार में चेयरपर्सन के रूप में स्थान ग्रहण किया।

विधि स्नातकोत्तर में 24 विद्यार्थियों को शोध कार्य करा चुके।

एक पुस्तक प्रकाशित हो चुकी है।

35 सेमिनार एवं कार्य शालाओं में भाग लिया, जिसमें 28 में पत्र वाचन किया है।

विभिन्न विश्वविद्यालयों एवं इंस्टीट्यूट में बाह्य परीक्षक के रूप में कार्य कर रहे हैं।



डॉ. अशोक कुमार व्यास वर्तमान में सहायक प्राध्यापक, (आर्थिक एवं वित्तीय प्रबन्ध) वाणिज्य विभाग, बिनानी कन्या महाविद्यालय, बीकानेर (राजस्थान) में कार्यरत है। अध्ययन-अध्यापन के क्षेत्र में 14 वर्षों से निरन्तर कार्य कर रहे हैं, साथ ही ज्योतिष एवं दर्शनशास्त्र में विशेष रुचि रखकर समाज कल्याण के लिए प्रयत्नशील है। 20 से अधिक शोध पत्र विभिन्न राष्ट्रीय एवं अन्तरराष्ट्रीय पत्रिकाओं में प्रकाशित, आर्थिक चिंतन एवं ज्योतिष पर भी अनेकों आलेख समाचार पत्रों में प्रकाशित है।

प्रकाशित पुस्तक : व्यावसायिक सांख्यिकी, ग्रामीण विकास में गैर सरकारी संगठन।

शीघ्र प्रकाशित पुस्तकें : "ग्रामीण विकास में महिलाओं का योगदान", "कृषि सांख्यिकी," "व्यावसायिक अर्थशास्त्र," "अष्टादश पुराण में ज्योतिष," "श्री कृष्ण का अर्थशास्त्र"। कई राष्ट्रीय एवं अन्तरराष्ट्रीय रांगोष्ठियों में शोध पत्र वाचन का श्रेय प्राप्त है।

Mob. 8000217607

Email Id : manasastro@gmail.com

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक गुगनराम सोसायटी रजि. के लिए डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट ने मनभावन प्रिन्टर्स, भिवानी से छपवाकर गीना प्रकाशन, 202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड भिवानी-127021 (हरि.) से वितरित की।

ISSN 2395:7115

